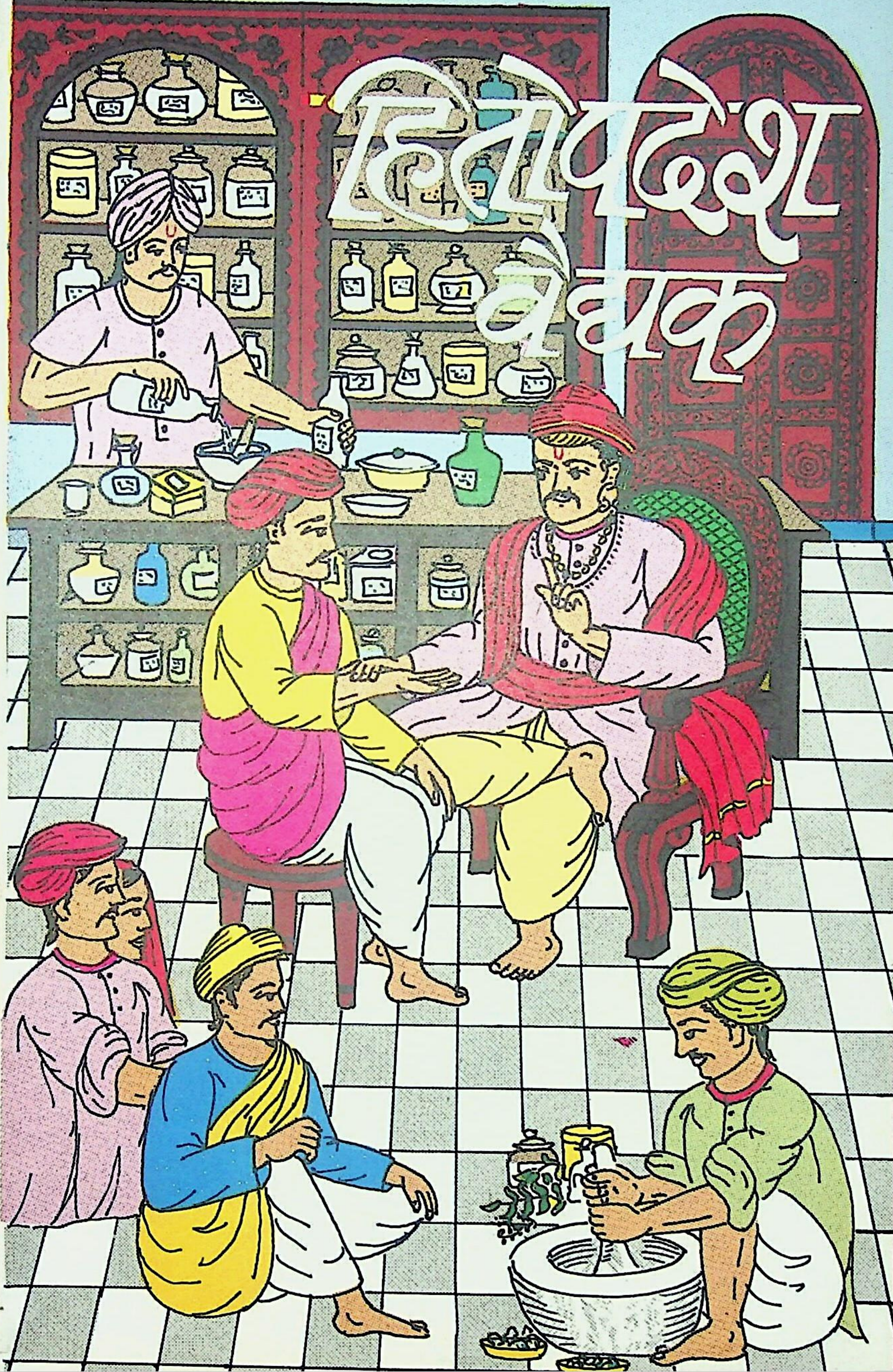

हितोपदेश
वैद्यक

परमजैनाचार्य श्रीकण्ठसूरि

विरचित

हितोपदेश वैद्यक

मुरादाबाद निवासि भिषग्वर

हरिशंकरात्मज शंकरलाल कृत

हिन्दी टीका सहित

पुणे : दीपमालिका सं. २०५४

दि. ३०/१०/१९९७

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन,

बम्बई -४

संस्करण : दिसंबर २०१८, संवत् २०७५

मूल्य : १८० रुपये मात्र ।

Printed by Shri Sanjay Bajaj for M / s Khemraj Shrikrishnadass proprietors Shri Venkateshwar press Mumbai 400 004. at their Shri Venkateshwar press, 66, Hadapsar Industrial Estate, Pune-411013.

भूमिका ।

श्लोक ।

रागादिरोगान्सततानुषक्तानशेषकायप्रसृतानशेषान् ।
औत्सुक्यमोहारतिदाञ्जघान योऽपूर्ववैद्याय नमोस्तु तस्मै १॥

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इनका मुख्यमूल शरीरकी आरोग्यताहै और रोग उसको नष्ट तथा जीवनको क्षय करनेवालेहैं । अतएव इस आरोग्यतारूपी रत्नको प्राप्त करनेके लिये और इन भीषण रोगरूपी संकटोंसे वचनेके लिये चिकित्साशास्त्रका आश्रय ग्रहण करना सर्वथा उचित है किन्तु बहुत कालसे हमारे इस आर्य्यदेशमें विदेशीय चिकित्सा प्रणालीके प्रविष्ट होजानेसे और आयुर्वेदीय चिकित्साशास्त्रकी आलोचनाके अभावसे हमारा आयुर्वेद शास्त्र प्राय: लुप्तसा होगयाहै । इसीकारण आजकल इस देशमें आर्य्यचिकित्साप्रणालीकी अपेक्षा यूरोपीय चिकित्साप्रणाली अधिक आदरके योग्य समझीजातीहै। अनेक मनुष्योंको ऐसा विश्वासहै कि, इस हमारी देशीय चिकित्सासे विदेशीय (यूरोपीय) चिकित्सा विशेष फल देनेवालीहै । वास्तवमें आयुर्वेदीय चिकित्साकी जितनी इस समय दुर्दशा हुईहै उससे विशेष फललाभ होनेकी कदापि सम्भावना नहीं होसक्ती । समयकी विचित्रगति है कभी वह दिन था कि, हमारे पूर्वपुरुषगण इस आयुर्वेदके प्रभावसे अतीव दीर्घायु और स्वस्थताको प्राप्त होकर महान् दु:साध्य कार्योंको सिद्ध करतेथे और अब एक यह दिन है कि, हम उनके वंशोद्भव होनेपर भी आयुर्वेदकी आलोचनाके अभावसे एवं विरुद्ध चिकित्साके प्रभावसे बल और उत्साहसे हीन होकर थोडे ही समयमें अनेक प्रकारकी घोर व्याधियोंसे ग्रसित होकर कालके गालमें पतित होतेहैं, इससे और क्या अधिक दु:खका स्थल होगा । यद्यपि विदेशीय चिकित्साके द्वारा हमारा समय समय पर कुछ उपकार सिद्ध होताहै किन्तु ऐसे उपकारकी भी हमें कुछ आवश्यता नहीं है कारण यह है कि, विदेशीय चिकित्सा विदेशीय मनुष्योंकी प्रकृतिके अनुसार ठीकठीक लाभ पहुँचा सक्ती है परन्तु देशीय मनुष्योंको कदापि इससे यथार्थ लाभ नहीं पहुँच सक्ता । क्योंकि उनका देश

हिमप्रधान और उनकी प्रकृति प्रायः तमोगुणविशिष्ट है, हमारा देश ग्रीष्मप्रधान और हमारी प्रकृति प्रायः सत्त्वगुणविशिष्ट है अतएव विदेशीय औषधि हमें कदापि लाभ नहीं पहुंचा सक्ती ।

महात्मा प्राचीन मुनियोंने भारतवासियोंकी प्रकृतिके अनुसार ही आयुर्वेदकी रचना की है । इसकारण हम लोगोंको विदेशीय चिकित्सा सर्वथा त्यागने योग्य है एवं देशीय चिकित्सा सदैव ग्रहण करने योग्यहै । यद्यपि कुछ कालसे फिर आयुर्वेदकी कहीं कहीं चर्चा होने लगीहै किन्तु जितना आयुर्वेदका प्रचार होना चाहिये उसका अभी शतांशभी नहीं हुआहै । देखो ! पश्चिमी (यूरोपीय) चिकित्सा विदेशीय चिकित्सा होनेपर भी भारतमें जिसप्रकार उन्नतिको प्राप्त होरहीहै उसीप्रकार आर्य्यचिकित्सा स्वदेशीय चिकित्सा कहलानेपर भी कितनी अवनतिको प्राप्त होरहीहै । आजकल हिन्दुस्तानके प्रत्येक प्रान्तमें पश्चिमी चिकित्साके अनेक बृहद्विद्यालय, शिक्षालय और औषधालय खुलेहुए हैं और दिनपर दिन खुलतेजातेहैं किन्तु आयुर्वेदीय शिक्षाकी सायद भारतवर्षमें छोटी छोटी दो तीन पाठशालाओंके अतिरिक्त एक भी बडी शिक्षाशाला नहीं दीखती । विदेशीय औषधि भारतके प्रत्येक खण्डमें सुगमतासे प्राप्त होजातीहै किन्तु आयुर्वेदीय औषधि बडे यत्न करनेपर भी तथा बहुतसी खोज करनेपर भी ठीकठीक नहीं मिलती । इससे अधिक आयुर्वेदकी और क्या दुर्दशा होगी? इस दुर्दशाका कारण केवल अविद्या अथवा संस्कृतकी अनभिज्ञता है क्योंकि प्रायः आयुर्वेदीय ग्रंथ समस्त संस्कृतमें हैं । यद्यपि भारतके कुछ भाग्योदय होनेसे आजकल चरक, सुश्रुत, वाग्भट्ट, भावप्रकाश, माधवनिदान, शार्ङ्गधर, निघण्टु प्रभृति अनेक प्राचीन आयुर्वेदीय ग्रंथ संस्कृत टीका और भाषाटीका समेत छपेहैं और छपतेजातेहैं किन्तु अभीतक ऐसा कोई ग्रंथ भी कहीं नहीं छपा कि, जिसमें आजकलके मनुष्योंके बल और प्रकृतिके अनुसार परीक्षित प्रयोग लिखे होंय, ऐसा विचार कर हमने वैद्यकुलधन्वन्तरि भिषक्श्रेष्ठ जैनयति **श्रीकंठसूरि**कृत **हितोपदेश** नामक इस वैधक ग्रंथका **भाषानुवाद** कियाहै । इस ग्रंथमें उन्होंने प्रायः सभी प्रयोग स्वयं परीक्षा करके सन्निवेशित किये हैं ।

इस ग्रंथके दश समुद्देशहैं उनमें ज्वरादि रोगोंके संक्षिप्त लक्षण और विस्तार पूर्वक चिकित्सा लिखीहै। इसका क्रम प्राचीन पद्धतिके अनुसार अर्थात् ज्वर, अतीसार, ग्रहणी, अर्श चिकित्सादि, इसप्रकार नहीं है किन्तु इस ग्रंथकारने अपने ग्रंथका क्रम भिन्न रक्खाहै। इसमें प्राचीन आयुर्वेदीय ग्रंथोंमें लिखेहुए कितनेक रोग नहीं लिखेहैं और आयुर्वेदीय ग्रंथोंके अतिरिक्त अन्यान्य कितनेक आधुनिक रोगोंकी रामबाण औषधि लिखीहैं। इसके सिवाय इसमें एक और भी विशेषता यह है कि प्रत्येक रोगकी चिकित्सा अत्यन्त सुगमरीतिसे लिखी है, प्रायः, इसमें वही औषधि लिखीहैं जो सब मनुष्योंको सर्वकालमें सर्वत्र प्राप्त होजायं इसमें कहीं कहीं 'दुल्ररी' इत्यादि अप्रसिद्ध औषधि लिखीहैं सो यतिप्रणीत ग्रंथके होनेसे हमने उसको वैसा ही छोडदियाहै और कहींकहीं किसीकिसी शब्दका यथा प्राप्त अर्थ लिख भी दियाहै। इसकारण इसमें पांच सात औषधियोंके नाम और कहींकहीं श्लोकके पाठमें भी संदेह है सो पाठक महाशय क्षमा करेंगे।

जैनयतियोंके ग्रंथोंकी आलोचनासे और जैन-इतिहाससमुच्चयसे प्रतीत होताहै कि, श्रीकंठसूरिविक्रमकी सोलहवीं शताब्दीमें मौजूद थे।

यह दक्षिण देशमें उत्पन्न हुए और सिद्धपुर तथा धुलेगांवमें विशेष करके रहतेथे। इन्होंने योगरत्नावली, भिषग्भूषण, योगप्रदीप आदि और भी कित्तनेक आयुर्वेदीय ग्रंथ लिखेहैं। इनमें योगरत्नावलीके कुछ कुछ श्लोक मिलतेहैं और शेष ग्रंथोंका कुछ पता नहीं चलता।

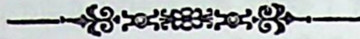
इस ग्रंथके अनुवाद करनेमें अल्पज्ञतासे अथवा प्रमादके वश जो अशुद्धि रहगई हों उनको पाठक महाशय सुधारलेवें और मेरे अपराधको क्षमा करें।

भवदीय-अनुगृहीत

वैशाख शुक्ल ८
संवत् १९६० } **वैद्य-शंकरलाल हरिशंकर**
आयुर्वेदोद्धारक-कार्य्यालय
मुरादाबाद.

॥ श्रीः ॥

अथ हितोपदेशवैद्यककी विषयानुक्रमणिका।



विषय.	पृष्ठ.

इति पञ्चमसमुद्देश।

उदररोगाधिकार।

इति षष्ठसमुद्देश।

कुरण्डार्शोतिसाररोगाधिकार।

इति सप्तमसमुद्देश।

इति विषयानुक्रमणिका समाप्त.

श्रीपरमजैनाचार्य्यश्रीश्रीकण्ठसूरिविरचितो-

हितोपदेशः ।

भाषाटीकासहितः ।



मंगलाचरण ।

सकलसुरनरेन्द्रश्रेणिसंसेव्यमाना-
त्समजनि किल यस्माद्विश्वलोकव्यवस्था ॥
हिमवत इव रम्या स्वर्गसिन्धुर्युगादौ
स जयतु जगदार्य्यो नाभिसूनुर्जिनेशः ॥ १ ॥

अर्थ-जिसप्रकार हिमवान् पर्वतमेंसे रमणीय स्वर्गगंगा निकली है उसी प्रकार सम्पूर्ण देवताओंके इन्द्र और चक्रवर्तियोंके समूहसे सेवित जिनेन्द्र भगवानूसे युगकी आदिमें इस विश्वकी व्यवस्था उत्पन्न हुईहै ऐसे नाभि राजाके पुत्र जगत्पूज्य श्रीऋषभदेव जयको प्राप्त हों ॥ १ ॥

ग्रन्थकारोक्त-मंगलाचरण.

नत्वा मुनीनामृषभं दयालुं
तीर्थंकरं श्रीऋषभं गुणाढ्यम् ॥
हिताय रुग्भिः परिपीडितानां
हितोपदेशं कथयामि कञ्चित् ॥ १ ॥

अर्थ-ऋषियोंमें श्रेष्ठ और दयालु तथा गुणोंकरके सम्पन्न ऐसे आदितीर्थंकर श्रीऋषभ देवको प्रणाम करके रोगोंसे व्याप्त लोकोंके हितके लिये यह कुछेक हितोपदेश कहताहूं अर्थात् हितोपदेशनामक ग्रंथ लिखताहूं ॥ १ ॥

अथ नाडीपरीक्षाद्यधिकारः.

नाड्याद्यष्टविधपरीक्षावश्यकता ।

रोगाक्रान्तशरीरस्य स्थानान्यष्टौ निरीक्षयेत् ॥
नाडीं मूत्रं मलं जिह्वां शब्दस्पर्शाक्षिरूपकम् ॥२॥

अर्थ–रोगसे पीडित मनुष्यकी नाडी, मूत्र, मल, जिह्वा, शब्द, स्पर्श, रूप और दृष्टि इन आठ स्थानोंकी परीक्षा करनी चाहिये ॥ २ ॥

अथ नाडीपरीक्षा.

वातपित्तकफं द्वंद्वं रसं रक्तं त्रिदोषजम् ॥
साध्यासाध्यविवेकन्तु पूर्वं नाडी प्रकाशते ॥ ३ ॥

अर्थ–वात, पित्त, कफ, द्वन्द्वजरोग, रस, रक्त और त्रिदोषज रोग और साध्यासाध्यका ज्ञान इन सबको नाडी पहिले ही प्रकाशित करतीहै ॥ ३ ॥

सद्यःस्नातस्य भुक्तस्य तथा स्नेहावगाहिनः ॥
क्षुत्तृषार्त्तस्य सुप्तस्य सम्यङ्नाडी न बुध्यते ॥ ४ ॥

अर्थ–जिसने तत्काल स्नान कियाहो, भोजन किया होय, शरीरमें तैल आदि लगायाहो, क्षुधा और तृषासे व्याकुल और निद्रासे आकुल ऐसे मनुष्योंकी नाडीके द्वारा रोगका ठीक २ ज्ञान नहीं होसक्ता अतएव उपर्युक्त मनुष्योंकी नाड़ी नहीं देखनी चाहिये ॥ ४ ॥

शास्त्रेण संप्रदायेन तथा स्वानुभवेन वै ॥
परीक्षेद्बलवच्चासावभ्यासादेव जायते ॥ ५ ॥

अर्थ–बुद्धिमान् वैद्यको उचित है कि, वह नाडीज्ञानशास्त्र तथा सम्प्रदायके द्वारा एवं निज अनुभवसे भी नाडीकी परीक्षा करे क्योंकि नाडीका ज्ञान शास्त्रादिके अभ्याससे ही ठीक होता है ॥ ५ ॥

नानारूपाश्च ये रोगा नानाभेदाः पृथग्विधाः ॥
प्रकाशयन्ति तान्सर्वान्नामभेदैः पृथक्स्थिताः ॥६॥

अर्थ–अनेक प्रकारके रूप तथा अनेक भेदवाले जो शरीरमें पृथक् २ अनेक रोग हैं उन सबके नाम और भेदोंको भिन्नभिन्न रूपसे नाड़ी बताती है ॥ ६ ॥

हस्तांगुष्ठप्रदेशे तु मणिबन्धस्य चोपरि ॥
अंगुल्याः स्पर्शमात्रेण ज्ञायन्ते च गुणागुणाः ॥७॥

अर्थ–हाथके अंगूठेके नीचे और मणिबन्धके ऊपर अंगुलीके स्पर्श करनेसे ही शरीरके गुण दोष प्रतीत होतेहैं ॥ ७ ॥

यथा करे गले तद्वद्वामहस्ते तथैव च ॥
तद्वद्दोषं विजानीयान्निर्विशंकं विचक्षणः ॥ ८ ॥

अर्थ–जिसप्रकार हाथकी नाड़ीको देखतेहैं उसीप्रकार गलेकी और बांये हाथकी भी नाडी देखकर चतुर वैद्य निःशंकतासे रोगकी परीक्षा करे ॥ ८ ॥

दक्षिणे च तथा वामे पादयोर्गुल्फमूलयोः ॥
अधोगतं तथा रोगं यथानाडि प्रचक्षते ॥ ९ ॥

अर्थ–तथा दहिने और बायें पांवकी गुल्फकी मूलमें नाडीकी परीक्षा करे इसके द्वारा अधोगत रोगोंका अच्छेप्रकारसे ज्ञान होताहै ॥ ९ ॥

दक्षिणे च तथा वामे गरिष्ठा नाडिका तु या ॥
सा नाडी ह्युभयोः कुक्ष्योर्यकृत्प्लीहादिबोधिनी॥१०॥

अर्थ–शरीरके दहिने भागमें और बायें भागमें जो बडी नाडी है वह दोनों कोखोंमें रहनेवाले यकृत् और प्लीहादि रोगोंको प्रकट करतीहै ॥ १० ॥

जिह्वा कंठस्तथा तालुः चक्षुः कर्णस्तथैव च ॥
नासा ललाटककुदी ब्रह्मरंध्रे च ये स्थिताः ॥११॥

अर्थ–तथा जिह्वा, कण्ठ, तालु, नेत्र, कान, नाक, मस्तक, खवे और ब्रह्मरन्ध्र इन स्थानोंमें जो नाडी स्थित हैं वह नाडियें उन उन स्थानोंमें दोषोंको प्रकट करती हैं ॥ ११

समाना भ्रममाणा या नाभ्यन्तर्मण्डलस्थितान् ॥
चक्रवन्नाडिकारोगान्बोधिनी सा प्रकीर्तिता ॥१२॥

अर्थ-जो नाडी नाभिमें स्थित होकर उसके आगे चक्रकी समान भ्रमण करतीहै वह नाडी नाभिमंडलगत रोगोंको प्रकट करतीहै इसकारण उसको बोधिनी नाडी कहतेहैं ॥ १२ ॥

ऊर्ध्वाधः स्फुरणं तस्या नाभेरूर्ध्वमधोगतान् ॥
बोधिनी ह्युदरान्सर्वांस्तथैवार्शोभगन्दरान् ॥ १३॥

अर्थ-यह बोधिनी नाडी ऊपर और नीचे धडकती प्रतीत होतीहै इस कारण ऊपरके तथा नीचेके स्थानमें उत्पन्न हुए रोगोंको तथा सर्वप्रकारके उदर-रोग, अर्श और भगन्दर रोगको प्रकट करतीहै ॥ १३ ॥

नाडीके नाम.

स्नायुर्नाडी निशा हिंस्रा धमनी धारिणी धरा ॥
तन्तुकी जीवितज्ञा च शब्दाः पर्यायवाचकाः ॥१४॥

अर्थ-स्नायु, नाडी, निशा, हिंस्रा, धमनी, धारिणी, धरा, और जीवितज्ञा ये सब नाडी शब्दके ही पर्य्याय वाचक शब्द हैं अर्थात् नाडीके नाम हैं ॥ १४ ॥

नाडियोंके सूक्ष्मछिद्र.

आसां च सूक्ष्मसुषिराणि शतानि सप्त
स्युस्तानि यैरसकृदन्नरसं वहन्ति ॥
आप्याय्यते वपुरिदं हि नृणाममीषा-
मम्भः स्रवद्भिरिव सिन्धुशतैः समुद्रः ॥ १५ ॥

अर्थ-ऊपर कहीहुई नाडियोंमें अन्यान्य बहुतसी छोटी छोटी नाडियें निकलीहैं और उनमें बहुत बारीक सातसौ छिद्र हैं इन छिद्रोंमें होकर वह नाडी निरन्तर अन्नके रसको बहातीहैं जिसप्रकार सैंकडों नदियोंमें होकर जो जल

बहताहै वह समुद्रको पोषण करताहै उसी प्रकार इन नाडियोंमें जो अन्नरस बहताहै वह सम्पूर्ण मनुष्योंके शरीरको पुष्ट करताहै ॥ १५ ॥

चौबीस मुख्यनाडी.

नाभेरधः प्रसृतयो दश यान्त्यधस्ता-
दूर्ध्वं गताः प्रसृतयो दश तद्वदेव ॥
द्वेद्वे शिरे प्रवितते वदने च तिर्यक्
नाड्यश्चतुष्कमथ विंशतिरत्र काये ॥ १६ ॥

अर्थ–दश नाडी तो नाभिके नीचेके बाजूके अवयवमें स्थित हैं और उसीप्रकार दश नाडी नाभिके ऊपरके बाजूमें गईहैं और दोदो नाडी मुखके ऊपरके भागमें इधर उधर स्थित हैं इसप्रकार मनुष्यके शरीरमें चौबीस नाडी हैं॥१६॥

इन चार नाडियोंके कार्य्य.

द्वादशभिर्द्विगुणाभिरमीभिर्व्याप्तमिदं नृशरीरमशेषम् ॥
आभिरमीकफपित्तसमीरास्ते वपुषि प्रसरन्ति शिराभिः

अर्थ–इन चौबीस नाडियोंसे यह मनुष्यका समस्त शरीर व्याप्त है और इन नाडियोंके द्वारा शरीरमें कफ, पित्त, और वायु विचरण करते हैं ॥ १७ ॥

आपादतः प्रभृति गात्रमशेषमेव-
मामस्तकादपि च नाभिभुवस्तु तेन ॥
एतन्मृदंग इव चर्मचयेन सम्यग्
बद्धं नृणामिति शिराशतसप्तकेन ॥ १८ ॥

अर्थ–पांवसे लेकर इस सम्पूर्ण शरीरमें और नाभिसे लेकर मस्तकपर्य्यन्त जिसप्रकार मृदंग चमडेकी डोरीसे वेष्टित होताहै उसीप्रकार इन सातसौ नाडियोंसे यह मनुष्यका शरीर बंधा हुआहै ॥ १८ ॥

नाडी देखनेकी विधि।

धृत्वा वामेन हस्तेन चलधिसयुजः कूर्परं रोगिजंतो-

रन्येनालभ्य वैद्यः कलयति धमनीमंगुलीनां त्रयेण ॥
वामे हस्तेंगनानां यदि च तदपरे हस्तके पूरुषाणां
मूलेंगुष्ठस्य दूतीमिव सुखमसुखं देहगं तद्वदंतीम् ॥१९॥

अर्थ-वैद्य प्रथम रोगीके निकट जाकर स्थिरभावसे अपने बाम हाथसे रोगीकी कौनीको पकडकर धारण करे और दहिने हाथसे अगूंठेकी जडके आगे नाडीके ऊपर तीन अगुंली रक्खे, स्त्रीकी नाडी वाम हाथकी देखे और पुरुषकी नाडी दहिने हाथकी देखे, यह अंगूठेकी जडके अग्रभागमें स्थित नाडी शरीरमें स्थित सुख और दुःखको कहनेवाली दूतीकी समान है ॥ १९ ॥

वातादिक नाडियोंके स्थान.

अंगुष्ठमूले या नाडी स्वस्था चलति सौख्यदा ॥
पित्तला तर्जनीस्थाने मध्यमायां कफस्तथा ॥२०॥
तद्वद्भिषग्वरैर्ज्ञेयोऽनामिकायां प्रभञ्जनः ॥
मूले मध्ये तथा चांते नाडी धत्ते त्रिधा गतिम् २१॥

अर्थ-रोगीके अंगुष्ठकी जडके अग्रभागमें जो नाडी स्वस्थपनसे चलती है उसको सुखदेनेवाली जाननी । और जो वह नाडी तर्जनी अंगुलीके नीचे चलती प्रतीत होय तो उसको पित्तकी नाडी जाननी जो मध्यमा अंगुलीके नीचे चलती प्रतीत होय तो उसको कफकी नाडी जाननी । जो अनामिका अंगुलीके नीचे चलती प्रतीत होय तो उसको वायुकी नाडी जाननी । इस प्रकार नाडी अपनी जडके पहिले बीचमें और अन्तमें उपर्युक्त तीन गतिओंको धारण करती है ॥ २० ॥ २१ ॥

आदौ च वहते पित्तं मध्ये श्लेष्मा तथैव च ॥
अन्ते प्रभञ्जनः प्रोक्तो ज्ञातव्यं च चिकित्सकैः २२॥

अर्थ-ऊपर कहे अनुसार तीन स्थानोंमें अनुक्रमसे पित्त, कफ और वातकी नाडी जाननी इसका कारण यह है कि, नाडीमें प्रथम पित्त वहता है, बीचमें

कफ बहता है और अन्तमें वायु बहता है ऐसा कहा है इसके द्वारा वैद्यको नाडीमें वातादि दोषोंके स्थान जानने चाहिये ॥ २२ ॥

नासिका नाडीपरीक्षा.

इडा वाते च विज्ञेया पिंगला पित्तला तथा ॥
सुषुम्णा श्लेष्मला चैव त्रयं चादौ निरीक्षयेत् ॥२३॥

अर्थ—जिसप्रकार हाथकी नाडीसे वातादि दोषोंके बलाबलका ज्ञान होताहै उसीप्रकार नाकमें बहनेवाली इडा पिंगला और सुषुम्णा नाडीसे ज्ञान होताहै जो नासिकाके वाम छिद्रके द्वारा पवन बहै तो उसको इडा नाडी कहते हैं जो नासिकाके दक्षिण छिद्र द्वारा पवन बहै तो उसको पिंगला नाडी कहते हैं और जो दोनों नासिकाके छिद्रोंके द्वारा पवन बहै तो उसको सुषुम्णा नाडी कहते हैं जो इडा नाडी बहै तो वायुकी प्रबलता जाननी जो पिंगला नाडी बहै तो पित्तकी प्रबलता जाननी और सुषुम्णा नाडी बहती होय तो कफकी अधिकता जाननी । वैद्यको योग्य है कि हाथकी नाडीके देखनेसे पहलेही नासिकाकी नाडीको अवश्य देखे ॥ २३ ॥

नाडीकी गतिका प्रकार.

वाताद्वक्रगतिर्नाडी चपला पित्तवाहिनी ॥
स्थिरा श्लेष्मवती प्रोक्ता सर्वलिंगा च सर्वगा ॥२४॥

अर्थ—वातके प्रकोपसे नाडी वक्र (टेढी) गतिसे चलती है, पित्तकी नाडी अत्यन्त चञ्चल चलती है, कफकी नाडी स्थिरतासे अर्थात् मंदमंद गतिसे चलती है और त्रिदोषके प्रकोपसे तीनों दोषोंके लक्षणोंवाली चलती है अर्थात् कभी टेढी, कभी चपल और कभी मंदगतिसे चलती है ॥ २४ ॥

वातादिक नाडीका काल.

प्रातः श्लेष्मवती नाडी मध्याह्ने चापि पैत्तिकी ॥
सायाह्ने वातिकी ज्ञेया पुनः पित्तं निशार्द्धके ॥२५॥

अर्थ—प्रातःकालमें कफकी नाडी चलती है, मध्याह्नके समय पित्तकी नाडी

चलती है, सन्ध्याके समय वातकी नाडी चलती है, और फिर मध्यरात्रिके समय पित्तकी नाडी वहती है ॥ २५ ॥

एकदोषे समा नाडी द्विदोषे शीघ्रवाहिनी ॥
त्रिदोषे चपला नाडी सामे पित्ते विचिन्तयेत् २६॥

अर्थ-एक दोषके प्रकोपमें नाडी समान गतिसे चलती है, दो दोषोंके प्रकोपमें नाडी शीघ्रतासे चलती है, त्रिदोषके प्रकोपमें नाडी चपल होती है और आम पित्तमें नाडी चपल होती है ॥ २६ ॥

वातादिक भेदोंसे नाडीस्थानोंमें मतान्तर.

मरुत्कोपे च धमनी प्रव्यक्ता तर्जनीतले ॥
पित्तकोपे मध्यमायामनामिक्यां कफे तथा ॥२७॥

अर्थ-कितनेक आचार्य्योंका ऐसा मत है कि, वायुके प्रकोपसे नाडी तर्जनी अंगुलीके नीचे बहती है, पित्तके प्रकोपसे मध्यमा अंगुलीके नीचे बहती है और कफके प्रकोपसे अनामिकाके नीचे बहती है ॥ २७ ॥

तर्जनीमध्यमामध्ये वातपित्ताधिकस्फुटा ॥
अनामिकायां तर्जन्यां व्यक्ता वातकफे भवेत् २८॥
मध्यमानामिकामध्ये स्फुटा पित्तकफाधिके ॥
अंगुलित्रितयस्थापि प्रव्यक्ता सन्निपाततः ॥२९॥

अर्थ-जो तर्जनी तथा मध्यमाके बीचमें नाडी फडकती ज्ञात होय तो वात, पित्त दोनों दोषोंका प्रकोप जानना, जो अनामिका और तर्जनीके बीचमें नाडी फडकती होय तो वात, कफ दोनों दोषोंका प्रकोप जानना, जो मध्यमा और अनामिकाके बीचमें नाडी चलती प्रतीत होय तो पित्त, और कफ दोनों दोषोंका प्रकोप जानना और जो तीनों अंगुलियोंके नीचे समान नाडी धडकती होय तो सन्निपात अर्थात् तीनों दोषोंका प्रकोप जानना ॥ २८ ॥ २९ ॥

नाडीकी गतिका उपमान.

नाडी धत्ते मरुत्कोपाज्जलौकासर्पयोर्गतिम् ॥
कुलिङ्गकाकमण्डूकगतिं पित्तप्रकोपतः ॥ ३० ॥
हंसपारावतगतिं धत्ते श्लेष्मप्रकोपतः ॥
लावतित्तिरवर्त्तिर्यग्गमनं सन्निपाततः ॥ ३१ ॥

अर्थ—वातके प्रकोपसे नाड़ी जोंक तथा सांपकी गतिके समान टेढी और शीघ्र चलतीहै पित्तके प्रकोपसे कुलिंग (चिड़ा) काक और मेंडककी समान उछल २ कर चलती है. कफके प्रकोपसे नाड़ी हंस और कबूतरकी समान मंद-मंद चलतीहै और सन्निपातके प्रकोपसे लवा और तीतरकी समान टेढी चलती है ॥ ३० ॥ ३१ ॥

दो दोषोंके कोपमें नाडीकी गति.

कदाचिन्मंदगमना कदाचिद्वेगवाहिनी ॥
द्विदोषकोपतो ज्ञेया हन्ति च स्थानविच्युता ॥ ३२ ॥

अर्थ—दो दोषोंके प्रकोपसे नाड़ी कभी धीरेधीरे और कभी शीघ्र चलती है और जो नाडी अपने स्थानसे हटकर चलतीहै उसको प्राण घातिनी जाननी ॥ ३२ ॥

वात पित्तकी नाडी.

मुहुः सर्पगतिर्नाडी मुहुर्भेकगतिस्तथा ।
वातपित्तद्वयोर्भूतां भाषन्ते तद्विशारदाः ॥ ३३ ॥

अर्थ—जो नाड़ी क्षणमें सर्पकी समान चले और क्षणमें मेंडककी समान चले उसको शास्त्रज्ञ वैद्य वातपित्तसे उत्पन्न हुई कहते हैं ॥ ३३ ॥

वात कफकी नाडी.

भुजंगादिगतिर्नाडी राजहंसगतिः पुनः ॥
वातश्लेष्मवतीमाहुर्वैद्यशास्त्रविशारदाः ॥ ३४ ॥

अर्थ-जो नाड़ी क्षणमें सर्पकी गतिकी समान चले और क्षणमें हंसकी गतिकी समान चले उसको वैद्यक शास्त्रको जाननेवाले वैद्य वातकफकी नाड़ी कहते हैं ॥ ३४ ॥

पित्तकफकी गति.

या च भेकगतिर्नाडी या च हंसगतिस्तथा ॥
पित्तश्लेष्मवतीमाहुस्तां नाडीं भिषगुत्तमाः॥३५॥

अर्थ-जो नाड़ी क्षणमें मेड़ककी समान कूदकूद कर चलती होय तथा क्षणमें हंसकी समान मंदमंद चलती होय उसको उत्तम वैद्य पित्तकफकी नाड़ी कहते हैं॥ ३५ ॥

सन्निपातकी नाडी.

सर्पादिलावकादीनां हंसादीनां च बिभ्रति ॥
गमनं सन्निपातानां धमनी रोगसूचिका ॥ ३६ ॥

अर्थ-जो नाड़ी क्षणमें सांप आदिकी समान टेढी क्षणमें लवा आदिकी समान कूदकर और क्षणमें हंस आदिकी समान धीरेधीरे चलतीहै उसको सन्निपातकी जाननी ॥ ३६ ॥

समा सूक्ष्मा स्थिरा मन्दा नाडी सहजवातजा ॥
स्थूला च कठिना शीघ्रा स्पन्दते तीव्रमातपे॥३७॥

अर्थ-स्वाभाविक वायुकी नाड़ी समान, सूक्ष्म, स्थिर और मंद बहती है किन्तु जो शरीरमें संताप होय तो स्थूल और कठिन चलती है तथा अत्यन्त वेगसे धडकती है ॥ ३७ ॥

महावेगा यदा नाडी वहते तन्तुसन्निभा ॥
वाताधिक्यं च विज्ञेयमुष्णा पित्तसमीरणम् ॥३८॥

अर्थ-जो नाड़ी अत्यन्त वेगवती होनेपर भी तन्तुकी समान बारीक बहती हो तो उसमें वायुकी अधिकता जाननी किन्तु जो वेगवाली और बारीक होनेपर भी गरम होय उसमें वातपित्तकी अधिकता जाननी ॥ ३८ ॥

वातनाडी प्रगल्भा च वहते कफसंयुता ॥
कफभृत्तेन वातश्च वातश्लेष्मा तदुच्यते ॥ ३९ ॥

अर्थ–जब वायुके लक्षणोंवाली नाडी कफसे युक्त होती है तब भारी बहती है और उस समय कफको धारण करनेवाला वायु नाडीमें बहता है अतः उस रोगीका रोग वातकफका है ऐसा जानना ॥ ३९ ॥

अत्युग्रा वा महावेगा नाडी पित्तसमुद्भवा ॥
पित्तश्लेष्मवतीं विद्याद्यदा सा मृदुचारिणी ॥४०॥

अर्थ–जब नाडी अत्यन्त उग्र और महावेगवती चलती है तब उसको पित्तकी जाननी और यदि वही नाड़ी धीरे धीरे चले तो इसको पित्तकफकी जाननी॥४०॥

क्षणे शीता क्षणे उष्णा क्षणे रिक्ता क्षणे भृता ।
ईदृशी वहते नाडी सन्निपातं विनिर्दिशेत् ॥ ४१ ॥

अर्थ–जो नाड़ी क्षणमें शीतल, और क्षणमें गरम होकर बहे तथा क्षणमें स्थानको छोडकर बहे क्षणमें भरीहुईसी बहै ऐसी नाड़ीको सन्निपातकी नाड़ी जानना ॥ ४१ ॥

वातरक्तकी नाडी।

या च सर्पगतिर्नाडी या च मूषकगामिनी ॥
याति मन्दा च सूक्ष्मा च वातरक्ते विदुर्बुधाः॥४२॥

अर्थ–वातरक्तकी नाड़ी सांपकी समान टेढी, चूहेकी समान चंचल मंद और सूक्ष्म चलती है॥ ४२ ॥

सोष्णातिवेगा गहना स्फुरणे वृश्चिकोपमा ॥
मूत्रकृच्छ्रं प्रमेहं च विस्फोटादीन्व्यनक्त्यसौ॥४३॥

अर्थ–जो नाड़ी अत्यन्त उष्ण, अत्यन्त वेगवती तथा अत्यन्त गहन हो और जिसका स्फुरण (फड़कना) विच्छूकी समान होय ऐसी नाडी मूत्रकृच्छ्र प्रमेह और विस्फोटकादिको दिखानेवाली जाननी ॥ ४३ ॥

कामज्वरे भये शोके ह्युपसर्गेऽप्यजीर्णके ॥
नाडीमूर्च्छांगतिं कुर्याज्ज्ञातव्यं च चिकित्सकैः ॥४४॥

अर्थ—कामज्वर भय शोक भूतादिकोंकी बाधा और अजीर्णमें नाडी मूर्च्छित हो होकर चलतीहै अर्थात् क्षणमें दबसी जाती तथा क्षणमें प्रतीत होनेलगती है ॥ ४४ ॥

मध्ये ज्वरं वहेन्नाडी यदि तप्ता भवेद्ध्रुवम् ॥
तदा तेषां मनुष्याणां रुधिरे प्रेरितोऽनिलः ॥४५॥

अर्थ—यदि रोगीके ज्वरके मध्यमें नाडी उष्ण बहती होय तो उसके रुधिरमें वायु मिश्रित हुआहै ऐसा जानना ॥ ४५ ॥

शरीरं शीतलं यस्य नाडी चोष्णा यदा भवेत् ॥
चिकित्सकेन ज्ञातव्यः शरीरेन्तर्मलज्वरः ॥ ४६ ॥

अर्थ—यदि रोगीका शरीर शीतल होय और उसकी नाड़ी गरम होय तो उस मनुष्यके शरीरमें मलज्वर जानना ॥ ४६ ॥

चपला सरला दीर्घा शीघ्रा पित्तज्वरे वहेत् ॥
स्पन्दते साशीघ्रमाममलाजीर्णे प्रकीर्तिता ॥ ४७ ॥

अर्थ—जो नाडी चंचल, सरल, लम्बी और शीघ्र चलतीहै तो उस नाडीको पित्तज्वरकी जानना किन्तु जो नाडी धडकती २ एक साथ बीचमें रुकरुक कर फिर धड़कनेलगे और फिर अटक जाय तो उस रोगीका मल अपक्व जानना॥४७॥

ज्वरप्रकोपे धमनी सोष्णा वेगवती वहेत् ॥
मन्दवेगाकिञ्चिदुष्णा नाडी जीर्णज्वरे वहेत् ॥४८॥

अर्थ—ज्वररोगीकी नाडी गरम तथा वेगवाली वहती है और जीर्णज्वरवाले रोगीकी नाडीका वेग मंद होताहै और वह कुछेक गरम होती है ॥ ४८ ॥

कामक्रोधाद्वेगवहा क्षीणा चिन्ताभयाप्लुता ॥
मन्दाग्नेः क्षीणधातोश्च नाडी मन्दतरा भवेत् ॥४९॥

अर्थ–काम और क्रोधके वेगवाले मनुष्यकी नाड़ी वेगसे वहतीहै चिन्ता और भयसे आतुर मनुष्यकी नाडी क्षीण होकर मन्दसी हुई चलतीहै तथा जिसकी जठराग्नि मंद होगई हो तथा जिसका धातु क्षीणहोगया हो उसकी नाडी उससे भी अधिक मंद चलती है ॥ ४९ ॥

असृक्पूर्णा भवेत्कोष्णा गुर्वी सामा गरीयसी ॥
लघ्वी वहति दीप्ताग्नेस्तथा वेगवती भवेत् ॥ ५० ॥

अर्थ–रुधिरसे परिपूर्ण शरीरवाले मनुष्यकी नाडी गरम और भारी चलतीहै आमवाले मनुष्यकी नाडी विषेश भारी चलती है दीप्ताग्निवाले मनुष्यकी नाडी हलकी और वेगवाली होती है ॥ ५० ॥

सुखितस्य स्थिरा ज्ञेया तथा बलवती मता ॥
चपला क्षुधितस्य स्यात्तृप्तस्य वहति स्थिरा ॥५१॥

अर्थ–स्वस्थ रोग रहित मनुष्यकी नाडी स्थिर और बलवती होती है क्षुधातुर मनुष्यकी नाडी चंचल होती है और तृप्त मनुष्यकी नाडी स्थिर होतीहै॥५१॥

असाध्य नाडीके लक्षण.

वातं पित्तं कफं चैव यस्यैकत्र समाश्रयेत् ॥
तस्य मृत्युं विजानीयादित्येवं नाडिलक्षणम्॥५२॥

अर्थ–जिस मनुष्यकी नाडी में वात, पित्त और कफके लक्षण एक साथ ज्ञात होयँ उसकी तत्काल मृत्यु जाननी ॥ ५२ ॥

स्कन्धे च स्फुरते नित्यं पुनर्गच्छति चांगुलिम् ।
असाध्या सा विनिर्दिष्टा नाडी दूरेण वर्जयेत् ५३॥

अर्थ–जिस मनुष्यकी नाडी बहुत देरतक नित्य कन्धेके ऊपर फडकती रहैं और फिर एक साथ अंगुलीके ऊपर चलीजाय तो उस नाड़ीको असाध्य जानना ऐसे नाड़ीवाले मनुष्यको असाध्य समझकर दूरसे ही त्याग देवे ॥ ५३ ॥

मुखे नाडी वहेद्यस्य घ्राणे चैव न दृश्यते ॥
तस्य मृत्युं विजानीयात्स गच्छेद्यमसादनम्॥५४॥

अर्थ-जिस मनुष्यकी नाड़ी (श्वास नाडी) मुखमेंसे बहती हो और नाक-मेंसे न बहै तो उसकी मृत्यु जाननी, ऐसा मनुष्य अवश्य यमपुरीमें जावेगा ॥९४॥

क्षीणा खण्डा तथा व्यङ्गा कुटिला क्रूरवेगिनी ॥
विस्पष्टा करपादेषु सा नाडी प्राणघातिनी ॥ ९५ ॥

अर्थ-जो दोनों हाथों और दोनों पांवोंकी नाडी क्षीण, टूटीसी अनियमित, कुटिल और क्रूरवेगसे वहे तो उसको प्राणनाश करनेवाली जाननी ॥ ९५॥

स्थित्वास्थित्वा चलति या सा स्मृता प्राणनाशिनी ॥
अतिक्षीणा च शीता च जीवितं हन्त्यसंशयम् ॥ ९६ ॥

अर्थ-जो नाडी रुकरुक कर चलती होय उसको प्राणनाशक जानना और जो नाड़ी अत्यन्त क्षीण होगई होय और अत्यन्त शीतल होगई हो तो उसको भी प्राणनाशक जानना ॥ ९६ ॥

यदि विस्फुरते नित्यं पुनर्लघुगतांगुलौ ॥
असाध्या सा विनिर्दिष्टा नाडीं धीरो विवर्जयेत् ९७॥

अर्थ-जो नाडी अपने स्थानसे वैद्यकी अंगुलीके नीचे वारंवार फडकती होय और वारंवार धीमी पडजाय तो उस नाडीको असाध्य समझ बुद्धिमान् पुरुष त्यागदेवे ॥ ९७ ॥

या तुच्छका स्थिरात्यन्तं यात्यन्तं मांसवाहिनी ॥
या च सूक्ष्मा च वक्रा च तामसाध्यां विनिर्दिशेत्९८

अर्थ-जो नाडी तुच्छ होय अर्थात् जिसके ऊपर अंगुली रखते ही तत्काल लुप्त होजाय तथा कभी स्थिरगतिसे गमन करे, मंदमंद बहे, तथा कभी मांसमें वहनेलगे कभी सूक्ष्म और कभी वक्रगतिसे वहे ऐसी नाडीको वैद्य असाध्य समझकर त्यागदेवे ॥ ९८ ॥

निष्पन्दान्नाडिकाहीना शाखापल्लवशीतला ॥
त्यजेत्तं रोगिणं वैद्यो यमदण्डाङ्कितात्मकम् ॥ ९९ ॥

अर्थ-जिस रोगीकी नाडीका फडकना बंद होगयाहो हाथ और पांव

और अंगुली शीतल पडगई होयँ उस रोगीको वैद्य यमदंडसे अंकित समझकर छोडदेवे ॥ ५९ ॥

अंगुष्ठमूलतो बाह्ये त्र्यंगुला यदि नाडिका ॥
प्रहरार्धाद्बहिर्मृत्युर्जायते नात्र संशयः ॥ ६० ॥

अर्थ–जो नाडी अंगूठेकी जडके बाहर तीन अंगुल पर्य्यन्त धडके तो वह रोगी आधे प्रहरके पश्चात् अवश्य मरजायगा ॥ ६० ॥

सार्द्धद्व्यंगुलतो बाह्यं यदि तिष्ठति नाडिका ॥
प्रहरैकाद्बहिर्मृत्युर्विजानीयाद्विचक्षणः ॥ ६१ ॥

अर्थ–जो नाडी अंगूठेकी जडसे ढाई अंगुल पर्य्यन्त बहे तो उस रोगीका एकप्रहरमें अवश्य मरण होजायगा ऐसा जानना ॥ ६१ ॥

द्व्यंगुलाद्बाह्यतो नाडी मध्ये रेखावलिर्यदा ॥
सार्द्धप्रहरतो मृत्युरवश्यं जायते नृणाम् ॥ ६२ ॥

अर्थ–जो नाडी अंगूठेकी जडसे दो अंगुल ऊपर होय और उसके बीचमें तन्तुकी समान नाडी धडकती होय तो उस मनुष्यकी डेढ प्रहरमें मृत्यु जानना॥६२॥

मध्ये रेखासमा नाडी यदि तिष्ठति निश्चितम् ॥
तस्यैव मरणं सत्यं प्रहरत्रितयाद्बहिः ॥ ६३ ॥

अर्थ–जो नाडी अंगूठेकी जडके आगे पौने दो अंगुल बीचमें रेखाकी समान फडकती होय तो उसकी तीन प्रहरमें मृत्यु जानना ॥ ६३ ॥

सार्द्धांगुलगता नाडी वक्रतां यदि तिष्ठति ॥
प्रहरैः पञ्चभिस्तस्य मरणं निर्दिशेद्बुधः ॥ ६४ ॥

अर्थ–जो नाडी अंगूठेकी जडके आगे डेढ अंगुल ऊपर वक्र होकर चले उस रोगीकी पांच प्रहरमें मृत्यु जानना ॥ ६४ ॥

सपादांगुलतो नाडी समा तिष्ठति निश्चला ॥
षड्भिश्च प्रहरैर्मृत्युर्ज्ञेयस्तस्य विचक्षणैः ॥ ६५ ॥

अर्थ—अंगूठेकी जडसे सवा अंगुल ऊपर जो नाडी स्थिर होकर चले तो उस रोगीकी छः प्रहरमें मृत्यु जानना ॥ ६५ ॥

अंगुलाभ्यन्तरे नाडी वक्रतां यदि तिष्ठति ॥
मरणं तस्य जानीयात्सप्तभिः प्रहरैर्बुधः ॥ ६६ ॥

अर्थ—अंगूठेकी जडसे एक अंगुल दूर जो नाडी टेढी होकर चले तो बुद्धिमान् वैद्य उस रोगीकी सात प्रहरमें मृत्यु कहे ॥ ६६ ॥

अंगुलाभ्यन्तरे नाडी मंदस्पन्दा समा यदि ॥
अष्टभिः प्रहरैर्मृत्युर्निर्दिष्टो मुनिपुङ्गवैः ॥ ६७ ॥

अर्थ—जो नाडी अंगूठेकी जडसे एक अंगुल प्रमाण दूर हो और समान रीतिसे धीरे २ चले तो उस रोगीकी मृत्यु आठ प्रहरमें जानना ॥ ६७ ॥

अंगुलाभ्यन्तरे नाडी शीतला यदि तिष्ठति ॥
प्रहरैर्नवभिस्तस्य मरणं निश्चितं मतम् ॥ ६८ ॥

अर्थ—जो अंगूठेकी जडसे एक अंगुल प्रमाण नाडी शीतल होकर स्थित होय तो उस रोगीकी नव प्रहरमें मृत्यु जानना ॥ ६८ ॥

पादोनांगुलमध्ये चेन्नाडी तिष्ठति चंचला ॥
प्रहरैर्दशभिः प्रोक्ता मृत्युस्तस्य विचक्षणैः ॥ ६९ ॥

अर्थ—जो अंगूठेकी जडसे पौन अंगुलके वीचमें नाडी चंचलताके साथ बहती होय तो उस मनुष्यकी दश प्रहरमें मृत्यु कहना ॥ ६९ ॥

पादोनांगुलमध्ये चेन्नाडी चोष्णा च जायते ॥
प्रहरै रुद्रसंख्यैश्च मृत्युस्तस्य विनिर्दिशेत् ॥ ७० ॥

अर्थ—जो अंगूठेकी जडसे पौन अंगुल आगे उष्णतासे नाडी चलती होय तो उस मनुष्यकी ग्यारह प्रहरमें मृत्यु जानना ॥ ७० ॥

पादोनांगुलमध्ये चेन्नाडी शीतवती भवेत् ॥
प्रहरैर्द्वादशैर्मृत्युर्भवत्येव न संशयः ॥ ७१ ॥

अर्थ—जो अंगूठेकी जडसे पौन अंगुल आगे शीतल बहती होय तो उसकी बारह प्रहरमें मृत्यु कहना ॥ ७१ ॥

अर्द्धांगुलगता नाडी शीतला यदि तिष्ठति ॥
यामत्रयोदशैर्मृत्युर्भवत्येव न संशयः ॥ ७२ ॥

अर्थ—जो नाडी अंगूठेकी जडसे आधे अंगुलके बीचमें शीतल होकर वहे उसकी त्रयोदश प्रहरमें मृत्यु जानना ॥ ७२ ॥

अर्द्धांगुलगता नाडी सोष्णा वेगवती भवेत् ॥
यामैश्चतुर्दशैर्मृत्युर्भविष्यति न संशयः ॥ ७३ ॥

अर्थ—जा अंगूठेकी जडसे आधे अंगुलके ऊपर नाडी गरम और वेगवती होय तो चौदह प्रहरमें उसकी मृत्यु जानना ॥ ७३ ॥

अर्द्धांगुलगता नाडी चञ्चला यदि तिष्ठति ॥
यामैः पञ्चदशैर्मृत्युर्जायते नात्र संशयः ॥ ७४ ॥

अर्थ—जो नाडी अंगूठेकी जडसे आधे अंगुल ऊपर चंचल रीतिसे चले तो उस रोगीकी पन्द्रह प्रहरमें मृत्यु जानना ॥ ७४ ॥

पादांगुलगता नाडी सहजा यदि तिष्ठति ॥
यामैः षोडशभिर्मृत्युर्जायते नात्र संशयः ॥ ७५ ॥

अर्थ—जो अंगूठेकी जडसे चौथाई अंगुल ऊपर नाडी स्वाभाविक रीतिसे चलती होय तो उस रोगीकी सोलह प्रहरमें मृत्यु जानना ॥ ७५ ॥

पादांगुलगता नाडी चञ्चला यदि तिष्ठति।
त्रिभिश्च दिवसैर्मृत्युर्जायते नात्र संशयः ॥ ७६ ॥

अर्थ—जो अंगूठेकी जडसे चौथाई अंगुल ऊपर चंचलरीतिसे नाड़ी फड़कती होय तो उस रोगीकी तीन दिनमें मृत्यु जानना ॥ ७६ ॥

पादांगुलगता नाडी सोष्णा वेगवती भवेत् ॥
चतुर्भिर्दिवसैर्मृत्युं विजानीयाद्विचक्षणः ॥ ७७ ॥

अर्थ—वही नाड़ी गरम और वेगवती बहती होय तो उस रोगीकी चार दिनमें मृत्यु जानना ॥ ७७ ॥

पादांगुलगता नाडी मंदास्पंदा यदा भवेत् ॥
पञ्चभिर्दिवसैर्मृत्युर्जायते नात्र संशयः ॥ ७८ ॥

अर्थ—जो अंगूठेकी जड़से पाव अंगुल स्थित नाड़ी धीरे २ बहती होय तो उस रोगीकी पांच दिनमें मृत्यु जानना ॥ ७८ ॥

निरीक्ष्य दक्षिणे पादे नाडीयस्य न लभ्यते ॥
मध्ये द्वादशमासानां मृत्युर्भवति निश्चितम् ॥७९॥

अर्थ—जिस मनुष्यके दहिने पांवकी नाड़ी देखनेपर नहीं प्रतीत हो उस मनुष्यकी बारह महीनेमें मृत्यु जानना ॥ ७९ ॥

सूर्य्यमण्डलसे आयुका प्रमाण.

लक्ष्यं लक्षणलक्षितेन मनसा भानुप्रभामण्डलं
हीनं दक्षिणपश्चिमोत्तरपरा षड्द्वित्रिमासैः क्रमात्॥
मध्ये छिद्रगतं भवेद्दशदिनं धूमाकुलं तद्दिनं
सर्वज्ञेन तु भाषितं शिवमते ह्यायुःप्रमाणं सदा८०॥

अर्थ—जो वैद्यको रोगीके जीवित मरणके लक्षण जानने होयँ तो इस प्रकार से निश्चय करे कि—यदि रोगीको सूर्य्यका मंडल दक्षिणकी ओर खंडित दीखे तो छ महीनेमें उसकी मृत्यु कहना। जो पश्चिमकी ओर खंडित दीखे तो दोही महीनेमें मृत्यु जानना। और जो उत्तरकी ओर खंडित दीखे तो तीन महीनेमें उसकी मृत्यु जानना। और जो वह मंडल छिद्रयुक्त दीखे तो रोगीकी दश दिनमें मृत्यु जानना और जो धुएँकी समान दीखे तो उसीदिन मृत्यु कहना। इस प्रकार महादेवके मतसे सर्वज्ञ महात्माने आयुका प्रमाण कहाहै ॥ ८० ॥

साध्यरोगीकी नाडी.

स्पन्दते चैकमानेन त्रिंशद्वारं यदा धरा ॥
स्वस्थाने च तदा नूनं रोगी जीवति नान्यथा॥८१॥

अर्थ–जो रोगीकी नाडी यथा स्थानमें एकसी तीसवार धडके तो वह रोगी निश्चय जीताहै इसमें कुछ सन्देह नहीं ॥ ८१ ॥

भारप्रहारमूर्च्छाभयशोकप्रमुखकारिता नाडी ॥
संमूर्च्छितापि गाढं पुनरपि सञ्जीवनं लभते ॥८२ ॥

अर्थ–भार(बोझका ढोना और दबावका पडना) प्रहार (चोटका लगना) मूर्च्छा,भय और शोक आदिसे नाडी मूर्च्छित होकर भी फिर बहने लगतीहै॥८२॥

एवं सूक्ष्मादिभेदेन नाडी ज्ञेया विचक्षणैः ॥
स्वर्गेपि दुर्लभा विद्या गोपनीया प्रयत्नतः ॥ ८३ ॥

अर्थ–इसप्रकार चतुर वैद्यको सूक्ष्मादि नाडियोंके भेदसे नाडीका ज्ञान जानना चाहिये । यह नाडीज्ञान स्वर्गलोकमें भी दुर्लभ है इसलिये वडे यत्नके साथ गुप्त रखना चाहिये ॥ ८३ ॥

अथ मूत्रपरीक्षा ।

मूत्र ग्रहण करनेका समय.

पश्चाच्च रजनीयामे घटिकानां चतुष्टये ॥
उत्थाय रोगिणं वैद्यो मूत्रोत्सर्गं तु कारयेत् ॥८४॥

अर्थ–रात्रिके पिछले प्रहरमें चार घडी रात्रि रहनेपर वैद्य रोगीको उठाकर मूत्रका त्याग करावे ॥ ८४ ॥

मूत्र कौनसा ग्रहण करना चाहिये.

आद्यधारां परित्यज्य मध्यधारासमुद्भवम् ॥
श्वेतकाचमये पात्रे क्षिप्तं मूत्रं परीक्षयेत् ॥ ८५ ॥

अर्थ–मूत्रकी प्रथम धाराको छोडकर दूसरी धारके मूत्रको सफेद कांचके पात्रमें ग्रहण करके पश्चात् वैद्य उसकी परीक्षा करे ॥ ८५ ॥

भास्करोदयवेलायां प्रकाशस्थानके धृतम् ॥
लोडयित्वा पुनः सम्यक् ततो मूत्रं परीक्षयेत्॥८६॥

अर्थ–सूर्योदयके समय प्रकाशवाले स्थानमें उस मूत्रको हिलाकर फिर उसकी परीक्षा करे ॥ ८६ ॥

वातमूत्रके लक्षण.

लाक्षाभारससंभवे यदि पुनर्धूमाभ्रकृष्णं तथा
नीलं मूत्रमिदं नृणामिति तदा वातस्य तल्लक्षणम् ॥
ज्ञात्वा चेतसि चावधार्य निखिलं शास्त्रोदितं बुद्धिमान्
कुर्याद्वातचिकित्सितं बहुविधं वातोपशान्त्यै तदा ॥८७॥

अर्थ–जो मूत्रका रंग लाखकी समान या आलकी समान अथवा धुएँकी समान या बादलकी समान काला और नीला होय तो उस रोगीको वातविकार जाने पश्चात् बुद्धिमान् वैद्य वैद्यकशास्त्रमें जो वायुके लक्षण कहेहैं उनको विचार कर वायुकी शांतिके लिये अनेक प्रकारकी शास्त्रोक्त वातजचिकित्सा करे ॥८७॥

पित्तमूत्रके लक्षण.

मञ्जिष्ठासदृशं भवेद्यदि जपापुष्पाभमूत्रं नृणां
सिन्दूरारुणकं च कुंकुमनिभं हारिद्रकौसुम्भवत् ॥
दृष्ट्वा पित्तविकारहेतुजनितं कार्य्या चिकित्सा तदा
स्वस्थो जीवति येन जन्तुनिवहो दुःखातुरः सत्वरम् ॥८८॥

अर्थ–जिस मनुष्यके मूत्रका वर्ण मँजीठके समान या जवाके फूलकी समान लाल होय अथवा सिन्दूरकी समान या केशरकी समान अथवा हल्दीकी समान पीला किंवा कुसुम्भेकी समान लाल होय तो उस रोगीको पित्तजन्य विकार जानना इसप्रकार उसके लक्षण जानकर शीघ्र ही उसकी चिकित्सा करे कि जिससे दुःखसे पीडित यह मनुष्यसमूह सुखपूर्वक अवस्थाको व्यतीत करे ॥८८॥

कफमूत्रके लक्षण.

शुभ्रं फेननिभं घनं मलयजाकारं च पाण्डूपमं
स्वच्छं चेक्षुरसोपमं घृतसमं तोयोपमं शीतलम् ॥

वर्णैरेभिरलं वदन्ति भिषजो मूत्रं सदा श्लेष्मजं
ज्ञात्वा त्वं कुरु वैद्यराज सततं शास्त्राच्चिकित्सां पराम् ८९

अर्थ–जो मूत्रका रंग झागकी समान सफेद चन्दनकी समान गाढा या सफेद रंगका होय अथवा स्वच्छ ईखके रसकी समान हो अथवा घृतकी समान या जलकी समान शीतल होय तो उस रोगीको वैद्य कफका विकार जाने फिर शास्त्रके आधारपर उसकी चिकित्सा करे ॥ ८९ ॥

वातपित्तमूत्रके लक्षण.

रक्तं किंशुकपुष्पवर्णसदृशं गोमूत्रवर्णं भवेत्
पीतं यन्मधुतुल्यतां च कुरुते कृष्णत्वबाहुल्यताम् ॥
एतल्लक्षणलक्षितो भवति भोः पित्तानिलः प्राणिनां
ज्ञेयःशान्तिविधिः सदौषधवशादात्रेयनाम्नो मुनेः ९० ॥

अर्थ–जो रोगीका मूत्र ढाकके फूलकी समान लाल अथवा गोमूत्रकी समान पीला अथवा सहतकी समान रंगसे युक्त या विशेष कृष्णता लिये हुए होय तो उसको पित्तसहित वायुका प्रकोप हुआहै ऐसा जानना, फिर उसकी चिकित्सा आत्रेयके मतसे उत्तम औषधियोंके द्वारा करे ॥ ९० ॥

वातकफमूत्रके लक्षण.

मञ्जिष्ठवर्णं सितरक्तरूपं धात्रीफलानामपि वर्णतुल्यम् ॥
कफानिलेमूत्रमिदंपरीक्षेत्कार्याक्रियावातकफामयघ्नी ९१

अर्थ–जिसका मूत्र मँजीठकी समान लाल अथवा आमलेकी समान सफेद या लाल होय तो उस रोगीके कफसहित वायुका प्रकोप जानना, फिर उसकी वातकफनाशक चिकित्सा करे ॥ ९१ ॥

पित्तकफमूत्रके लक्षण.

स्निग्धं घनं दाडिमपुष्पवर्णं मूत्रं कफे पित्तसमन्वितेपि ॥ ज्ञात्वा सदा वैद्यविदांवरेण कार्या चिकित्सा सततं हिताय ॥ ९२ ॥

अर्थ—जो रोगीका मूत्र चिकना भारी और अनारके फूलकी समान वर्णवाला होय तो उसके पित्तकफका विकार जानकर वैद्य निरन्तर रोगीकी हितकारक चिकित्सा करे ॥ ९२ ॥

तैलबिन्दुके योगसे मूत्रपरीक्षा.

पात्रमादाय तैलस्य बिन्दुं तत्र नियोजयेत् ॥
जायन्ते बुद्बुधा यस्य विकारः सोस्ति पित्तजः ॥९३॥

अर्थ—रोगीके मूत्रको एक पात्रमें करके उसमें तेलकी बूंदें डाले जो वह बूंदे मूत्रमें बबूलेकी माफिक हो जायँ तो उसको पित्तका विकार जानना ॥ ९३ ॥

स्निग्धं तु श्यामलच्छायं वाते मूत्रं प्रजायते ॥
तरिश्चोपरि बध्नाति तैलबिन्दुयुते तथा ॥ ९४ ॥

अर्थ—वातरोगमें मूत्रका रंग चिकना और कलौंचलिये होताहै उसमें तेलकी बूंदे डालनेसे मूत्रके उपर फैलने लगजाती हैं ॥ ९४ ॥

मूत्रं श्लेष्मणि जायेत समं पल्वलवारिणा ॥
मूत्रेण सार्द्धं निलयं तैलबिन्दुः प्रजायते ॥ ९५ ॥

अर्थ—कफरोगीके मूत्रका रंग तालाबके जलकी समान होजाता है उसमें तेलकी बूंदें डालनेसे मूत्रमें मिलजाती हैं ॥ ९५ ॥

सिद्धार्थतैलसदृशं मूत्रं वै पित्तमारुते ॥
तैलबिन्दुस्तथा क्षिप्तश्चतुर्दिक्षु विसर्पति ॥ ९६ ॥

अर्थ—वातपित्तरोगीके मूत्रका वर्ण सरसोंके तेलकी समान होता है उसमें तेलकी बूंद डालनेसे चारों ओरको फैलजाती हैं ॥ ९६ ॥

श्लेष्मवातोद्भवं मूत्रं सौवीरेण समं तथा ॥
पाण्डुरं श्लेष्मपित्तं च पीतं चैव परीक्षयेत् ॥ ९७ ॥

अर्थ—कफवातरोगीके मूत्रका वर्ण सौवीर नामक मदिराकी समान होताहै कफपित्तरोगीका सफेद तथा पीला होता है ॥ ९७ ॥

सन्निपातोद्भवं मूत्रं कृष्णं च लक्षयेद्बुधः ॥
तैलबिन्दुस्तथा क्षिप्तो बुद्बुदास्तु भवन्ति च ॥ ९८ ॥

अर्थ-सन्निपातरोगीका मूत्र काला होता हैं और उसमें तेलकी बूंद डालनेसे बबूलेकी समान होजाती हैं ॥ ९८ ॥

मूत्रधाराकी परीक्षा.

श्वेतधारा शुभा ज्ञेया पीतधारा तथा ज्वरे ॥
रक्तधारा दीर्घरोगे कृष्णा च मरणान्तिके ॥ ९९ ॥

अर्थ-मूत्रकी धारा जो सफेद रंगकी होय तो उत्तम होतीहै और जो पीली होयतो उस मनुष्यको ज्वरवाला समझना, जो लाल होय तो बहुत दिनोंका रोगी जानना और जो काली होयतो मरणके योग्य रोगीको समझना ॥ ९९ ॥

निर्दोषमूत्रके लक्षण.

सौवीरेण समं शस्तं मातुलिंगसमप्रभम् ॥
पानीयसदृशं मूत्रं विकाररहितं भवेत् ॥ १०० ॥

अर्थ-जो मूत्रका रंग सौवीर नामक कांजी या मदिराकी समान होय अथवा बिजौरे नींबूकी समान होय अथवा जलकी समान होय तो उसको निर्विकार समझना ॥ १०० ॥

वातादिज्वरमें मूत्रका वर्ण.

वातज्वरे समानं स्यादधो बहुलमेव च ॥
तिलतैलं समं मूत्रं सहजेन च पित्तलम् ॥
कफात्पल्वलपानीयतुल्यं मूत्रं प्रजायते ॥ १०१ ॥

अर्थ-वातज्वरमें वातजन्य मूत्रके वर्णकी　अर्थात् लाख, आल, धुआँ और नीलके वर्णकी समान होता है और वह पात्रमें कियाहुआ नीचे भारी जान पडता है पित्तज्वरमें स्वाभाविक रीतिसे रोगीका मूत्र तिलके तेलकी समान होताहै कफज्वरमें रोगीका मूत्र तालाबके जलकी समान होता है ॥ १०१ ॥

वातरक्तमें मूत्रका वर्ण.

रक्तवातेन रक्तं स्यात्कौसुम्भप्रतिमं भवेत् ॥ १०२ ॥

अर्थ-वातरक्तरोगीका मूत्र लाल अथवा कुसूमके रंगकी समान होताहै ॥ १०२ ॥

अतीसारमें मूत्रका वर्ण.

अधो बहुलमारक्तं मूत्रमालोक्यते यदा ॥
वदन्ति तदतीसारलिंगं तुल्यांगवेदनम् ॥ १०३ ॥

अर्थ-जो मूत्र नीचेसे अधिकतर लाल दीखै तो उसके अतीसार रोग जानना, तथा उस रोगीके शरीरमें अतीसारकी पीडा होती है ॥ १०३ ॥

जलोदररोगीके मूत्रका वर्ण.

जलोदरसमुद्भूतं मूत्रं घृतकणोपमम् ॥
आमवातवशान्मूत्रं तक्रतुल्यं प्रजायते ॥ १०४ ॥

अर्थ-जलोदर रोगीके मूत्रका वर्ण घीके समान होताहै और आमवातरोगीका मूत्र तक्रकी समान होता है ॥ १०४ ॥

पित्ताधिक्य और समधातुवालेके मूत्रका वर्ण.

पीतं तैलोपरिच्छायं मूत्रं पित्तोदये सति ॥
समधातोः पुनः कूपजलतुल्यं प्रजायते ॥ १०५ ॥

अर्थ-जिसके शरीरमें पित्तकी अधिकता होय उसका मूत्र तेलकी समान पीला होताहै और जिसके शरीरमें वात, पित्त और कफ यह तीनों दोष समान होंय उसका मूत्र कुएँके जलकी समान निर्मल होता है ॥ १०६ ॥

वातज्वररोगीके मूत्रका वर्ण.

वातज्वरसमुद्भूतं मूत्रं कुंकुमपिञ्जरम् ॥
मलेन पीतवर्णं च बहुलं संप्रजायते ॥ १०६ ॥

अर्थ-वातज्वरवाले रोगीका मूत्र केशरकी समान पीला होता है और जो मलकी अधिकता होयतो अत्यन्त पीला होता है ॥ १०६ ॥

रक्त और कफरोगीके मूत्रका वर्ण.

रक्तश्लेष्मवशात्कृष्णमसाध्यं मूत्रमुच्यते ॥
ऊर्ध्वं नीलमधो रक्तं रुधिरेण प्रजायते ॥ १०७ ॥

अर्थ–रक्त और कफ रोगीका मूत्र काला होता है और यह असाध्य समझना और जो केवल रुधिरका ही प्रकोप होय तो मूत्र ऊपरमें नीला और नीचेके भागमें लाल होता है ॥ १०७ ॥

असाध्यमूत्रका वर्ण.

पीतवर्णं यदा मूत्रं बुद्बुदैः संयुतं तथा ॥
तदसाध्यं समुद्दिष्टं मूत्रं वैद्यो विनिर्दिशेत् ॥१०८॥

अर्थ–जो मूत्र पीले रंगका होय और उसमें बबूले मालूम होतेहों तो उस मूत्रको असाध्य समझना ॥ १०८ ॥

अजीर्ण और अजीर्णज्वरमें मूत्रका वर्ण.

अजीर्णे तु भवेन्मूत्रं श्वेतं चापि तथारुणम् ॥
अजामूत्रसम मूत्रमजीर्णज्वरसम्भवम् ॥ १०९ ॥

अर्थ–अजीर्णरोगमें मूत्रका रंग सफेद अथवा लाल रंगका होताहै अजीर्ण ज्वरमें मूत्र बकरीके मूत्रकी समान होताहै ॥ १०९ ॥

वायुवृद्धिमे मूत्रका वर्ण.

प्रवर्त्तते यदा मूत्रं स्निग्धं तैलसमप्रभम् ॥
आहारेप्युदरस्थे तु वृद्धिं याति तदानिलः ॥ ११० ॥

अर्थ–जब वातकी वृद्धि होतीहै तब मूत्र चिकना और तेलकी समान वर्ण वाला होताहै और उसको किया हुआ भोजन भी नहीं पचताहै ॥ ११० ॥

पित्ताधिक्यसन्निपातमें मूत्रका वर्ण.

ऊर्ध्वं पीतमधो रक्तं मूत्रं चेद्रोगिणस्तथा ॥
पित्तप्रकृतिसंभूतं सन्निपातस्य लक्षणम् ॥ १११ ॥

अर्थ—जो रोगीका मूत्र ऊपरसे पीला और नीचेके भागमें लाल होय तो उसके पित्तप्रकृतिसे उत्पन्न हुआ सन्निपात जानना ॥ १११ ॥

रसवृद्धिवाले रोगीके मूत्रका लक्षण.

यस्येक्षुरससङ्काशं मूत्रं कुङ्कुमपिञ्जरम् ॥
रसाधिक्यं विजानीयान्निर्दिष्टं तस्य लङ्घनम् ॥११२॥

अर्थ—जिस रोगीके मूत्रका रंग ईखके रसकी समान अथवा केशरकी समान पिंगलवर्ण होय तो उस रोगीके शरीरमें अन्नके आमरसकी वृद्धि हुईहै ऐसा जानना । इस रोगीको लंघन करना उत्तम है ॥ ११२ ॥

आमवात और ज्वररोगीके मूत्रका वर्ण.

पीतं च बहुलं चैव ह्यामवाते प्रजायते ॥
रक्तं स्वच्छं च यन्मूत्रं ज्वराधिक्यस्य लक्षणम् ॥११३॥

अर्थ—आमवात रोगीका मूत्र पीला और अधिक आताहै और जिसके ज्वरकी अधिकता होतीहै उसके मूत्रका वर्ण लाल तथा स्वच्छ होताहै ॥११३॥

तैल बिन्दुके योगसे मूत्रकी परीक्षा.

पूर्वाशां बाध्यते रोगी बिन्दुनैवायुषस्त्रुटी ॥
दक्षिणाशां भवेद्बिन्दुर्ज्वरभावो भवेत्तदा ॥ ११४

अर्थ—जो रोगीके मूत्रमें तेलकी बिन्दु डालनेसे पूर्वकी ओर फैले तो उसके जीवनमें सन्देह जानना । जो तेलकी बिन्दु दक्षिणकी ओरको फैले तो उस रोगीके ज्वर अथवा ज्वरकी उत्पत्ति होगी ऐसा जानना ॥ ११४ ॥

उत्तरस्यां यदा बिन्दुप्रसरश्च प्रजायते ॥
आमरोगो तदा नूनं पुरुषस्य भवेद्ध्रुवम् ॥ ११५ ॥

अर्थ—यदि तैलकी बिन्दु उत्तरकी ओरको फैले तो उस रोगीके आम रोग जानना ॥ ११५ ॥

वारुणीदिशमाश्रित्य बिन्दुविस्तरणं यदा ॥
रोगिणां रोगहानिः स्यादायुर्वृद्धिमवाप्नुयात् ॥ ११६ ॥

अर्थ–यदि तैलकी बूंदे मूत्रमें डालनेसे पश्चिमकी ओरको फैलें तो उस रोगीका रोग नष्ट होकर आयुकी वृद्धि होतीहै ॥ ११६ ॥

ईशान्यां तैलप्रसरो जायते यदि रोगिणाम् ॥
जीवेच्च मासमेकं तु नूनं याति यमालयम् ॥ ११७ ॥

अर्थ–जो तैलकी बूंदें मूत्रमें डालनेसे ईशान कोणकी ओर फैलें तो रोगी एक महीने तक जीवेगा और पीछे निश्चय मरजावेगा ॥ ११७ ॥

आग्नेय्यां च यदा रेखा तैलबिन्दुसमुत्थिता ॥
तस्यौषधं न कर्त्तव्यं निश्चितं स विनश्यति ॥ ११८ ॥

अर्थ–जो तैलकी बूंदें मूत्रमें डालनेसे अग्निकोणकी ओर फैलें तो वैद्य उस रोगीकी औषधि न करे क्योंकि वह रोगी अवश्य मरजाताहै ॥ ११८ ॥

प्रसरो यदि तैलस्य नैर्ऋतिं दिशमाश्रितः ॥
सच्छिद्रश्च पुमान्मूत्रे मृत्युमाप्नोत्यसंशयम् ॥ ११९ ॥

अर्थ–जो तैलकी बूंदें मूत्रमें डालनेसे नैर्ऋत्य कोणकी ओर फैलें और उस फैलेहुए तेलमें छिद्र जान पडे तो वह मनुष्य निश्चय मृत्युको प्राप्त होताहै॥ ११९॥

वायव्यां दिशमाश्रित्य तैलस्य प्रसरो यदि ॥
स रोगी कालदेहान्ते चिरं क्रीडति निश्चितम् ॥ १२० ॥

अर्थ–जो तैलकी बूंदें वायव्यदिशाकी ओर फैलें तो वह रोगी बहुत दिनों तक निश्चय कालके घरमें क्रीडा करताहै ॥ १२० ॥

मूत्रमें भस्म डालकर परीक्षा करनेका प्रकार.

भस्म क्षिपेद्यदा मूत्रे तैलबिन्दुर्विसर्पति ॥
तदा साध्यं विजानीयादसाध्यं चान्यथा भवेत् १२१ ॥

अर्थ–रोगीके मूत्रमें तेल डालकर उसमें भस्म डाले जो उससे वह तैल फैलजाय तो उस रोगीको साध्य समझना और जो न फैले तो असाध्य समझना ॥ १२१ ॥

तैलकी आकृतिका ज्ञान.

भद्रपीठपृथुदर्पणपद्मशंखचक्ररथचामरवीणा॥कुण्डलाकृति भवेद्यदि तैलं मूत्रपात्रपतितं स न प्रैति ॥ १२२ ॥ पक्षिकूर्मवृषसिंहशूकरैः सर्पवानरबिडालकुक्कुटैः ॥ वृश्चिकेनसहिताकृतिर्यदा सोत्रजीवतिनयोगवित्तमैः ॥ १२३ ॥

अर्थ–जो मूत्रमें तैल डालनेसे उसमें संखियेकी समान, पृथुकी समान, दर्पणकी समान, कमलकी समान, शंखकी समान, चक्रकी समान, चामरकी समान, वीणाकी समान और कुण्डलकी समान आकृति (चिह्न) होय तो रोगी बचजाताहै अर्थात् रोगीको वैद्य साध्य समझकर उसकी चिकित्सा करे यदि मूत्रमें पक्षी, कछुआ, बैल, सिंह, सूअर, सर्प, बन्दर, बिल्ली, कुत्ता और विच्छूकी समान आकृति दीखे तो वह बडे २ वैद्योंके यत्न करनेपर भी आरोग्य नहीं होताहै अर्थात् इसको असाध्य समझना ॥ १२२ ॥ १२३ ॥

अथ नेत्र परीक्षा ।

वातरोगीके नेत्रोंकी परीक्षा.

रौद्रे रूक्षे च धूम्राभे नयने स्तब्धचञ्चले ॥
तथाभ्यन्तरकृष्णाभे भवतो वातरोगिणः ॥ १२४ ॥

अर्थ–वातरोगीके नेत्र रौद्र (भयंकर) रूखे, धुएँकी समान स्थिर और चंचल होतेहैं और भीतरसे काले होतेहैं ॥ १२४ ॥

पित्तरोगीके नेत्रोंकी परीक्षा.

पित्तरोगे तु पीताभे नीले वा रक्त वर्णके ॥
सतप्ते भवतो दीपं सहेते नावलोकितम् ॥ १२५ ॥

अर्थ–पित्तरोगीके नेत्र पीले या नीले अथवा लाल रंगके होतेहैं तथा उनमें सन्ताप और दाह होताहै और वह दीपक आदि प्रकाशित पदार्थोंको देखनेमें असमर्थ होतेहैं ॥ १२५ ॥

कफरोगीके नेत्रोंकी परीक्षा.

ज्योतिर्हीने च शुक्लाभे जलपूर्णे सगौरवे ॥
मन्दावलोकने नेत्रे भवतः कफरोगतः ॥ १२६ ॥

अर्थ—कफरोगीके नेत्र तेजरहित, सफेद, जलसे परिपूर्ण, भारी और मंद दृष्टिवाले होतेहैं ॥ १२६ ॥

त्रिदोष नेत्रोंकी परीक्षा.

तन्द्रामोहाङ्किते श्यामे कृशे च सूक्ष्मरौद्रके ॥
रक्तवर्णे च भवतो नेत्रे दोषत्रयोदये ॥ १२७ ॥

अर्थ—त्रिदोषके रोगमें रोगीके नेत्र तन्द्रा और मोह युक्त, काले, दुबले, पतले, भयंकर, और लाल होतेहैं ॥ १२७ ॥

दोषत्रये भवेच्चिह्नं नेत्रयोस्तु त्रिदोषजम् ॥
दोषद्वयप्रकोपे तु भवेद्दोषद्वयोदितम् ॥ १२८ ॥

अर्थ—जो तीनों दोषोंका प्रकोप हुआ होय तो पूर्वोक्त तीनों दोषोंके लक्षण होतेहैं और जो दो दोष कुपित हुए होयँ तो दो दोषोंके लक्षण प्रतीत होते हैं ॥ १२८ ॥

दोषत्रयोद्भवेनेत्रे स्वाधीने न च रोगिणः ॥
उन्मीलिते च भवतः क्षणादेव निमीलिते ॥ १२९ ॥
सततोन्मीलिते नेत्रे यद्वा नित्यं निमीलिते ॥

अर्थ—त्रिदोषयुक्त रोगीके नेत्र उसके स्वाधीन नहीं रहतेहैं वह क्षणमें खुलजातेहैं क्षणमें बंद होजातेहैं कभी निरन्तर खुले रहतेहैं और कभी निरन्तर बंद रहते हैं ॥ १२९ ॥

असाध्य रोगीके नेत्रोंकी परीक्षा.

विलुप्तकृष्णसारे च भ्रमद्भूमोग्रतारके ॥ १३० ॥

बहुवर्णे च भवतो विकृतानेकचेष्टते ॥
नेत्रे मृत्युं कथयतो रोगिणो नात्र संशयः ॥ १३१ ॥

अर्थ-जो रोगीके नेत्रकी काली पुतिलीके बीचका गोलक नहीं दीखे तथा काली पुतली धुएँकी समान रंगवाली तथा भयंकर होकर ऊपर नीचे घूमती होय नेत्रमें अनेक प्रकारके रंग दींखते होंय अनेक प्रकारकी विकृत चेष्टा जानपडती होय तो उस रोगीका निश्चय मरण जानना ॥ १३० ॥

रोग शान्तिसूचक नेत्रोंके लक्षण.

सौम्यदृष्टी प्रसन्नाभे प्रकृतिस्थे मनोरमे ॥
नेत्रे कथयतः शीघ्रं रोगशान्तिन्तु रोगिणः ॥१३२॥

अर्थ-यदि रोगीके नेत्रोंकी दृष्टि सौम्य तथा निर्मल कांतिसे युक्त हो और स्वाभाविक रीतिसे प्रकृतिमें स्थित एवं रमणीय होतो रोगकी शीघ्र ही शांति होती है ॥ १३२ ॥

अथ मुखपरीक्षा ।

वात और पित्तके कोपमें मुखकी परीक्षा.

वातकोपे मुखं रूक्षं स्तब्धं वक्रं गतप्रभम् ॥
पित्तकोपे भवेद्रक्तं पीतं वा परितप्तकम् ॥ १३३ ॥

अर्थ-वातरोगीका मुख रूखा, स्तब्ध, टेढा और कांतिरहित होता है, पित्तदोषसे युक्त मनुष्यका मुख लाल और पीला तथा गरम होताहै ॥ १३३ ॥

कफ और त्रिदोषमें मुखकी परीक्षा.

कफकोपे गुरु स्निग्धं भवेत्स्विन्नमिवाननम् ॥
त्रिलक्षणं त्रिदोषे स्याद्द्विचिह्नं च द्विदोषके ॥ १३४ ॥

अर्थ-कफदोषसे युक्त मनुष्यका मुख भारी, चिकना, और पसीनेसे भीजे हुएकी समान होताहै, त्रिदोषमें तीन दोषोंके लक्षण और दो दोषोंके विकारमें दो दोषोंके लक्षण होतेहैं ॥ १३४ ॥

अथ जिह्वापरीक्षा ।

वातकोपमें जिह्वापरीक्षा.

वातकोपे प्रसुप्तेव स्फुटिता मधुरा भवेत् ॥
स्तब्धा वर्णेन हरिता जिह्वा लालां प्रमुञ्चति ॥१३५॥

अर्थ–वातके प्रकोपसे जीभ प्रसुप्त और फटीसी मधुर, स्तब्ध, हरे रंगकी और लारको गिराती है ॥ १३५ ॥

पित्तकोपमें जिह्वापरीक्षा.

पित्तकोपे तु रक्ताभा तिक्ता दग्धेव जायते ॥
जिह्वा दाहान्विता विद्धा कण्टकैरिव सर्वतः॥१३६॥

अर्थ–पित्तके प्रकोपसे जिह्वाका लाल रंग होताहै और स्वाद कडवा तथा जलेहुएकी समान होजातीहै उसमें दाह और उसके ऊपर चारों और कांटे होते हैं ॥ १३६ ॥

कफकोपमें जिह्वापरीक्षा.

कफोदयेभवेज्जिह्वा स्थूला गुर्वी विलेपिनी ॥
सुस्थूलकण्टकोपेता क्षारा बहुकफावहा ॥ १३७ ॥

अर्थ–कफके प्रकोपसे जीभ स्थूल, भारी, चिकनी, बडे बडे काँटोंसे व्याप्त उसका स्वाद खारी और उसमेंसे बहुत साफ कफ निकलता है ॥ १३७ ॥

द्विदोष और त्रिदोषके कोपमें जिह्वापरीक्षा.

दोषद्वये द्विदोषोक्ता लवणा रसना भवेत् ॥
सर्वचिह्वा त्रिदोषे स्याद्विकृतानेकलक्षणा ॥ १३८ ॥

इति श्रीपरमजैनाचार्यश्रीकण्ठसूरिविरचिते
हितोपदेशे प्रथमःसमुद्देशः ॥ १ ॥

अर्थ-दो दोषोंके प्रकोपमें उपर्युक्त दो दोषोंके लक्षणोंके सिवाय लवणरस विशिष्ट होतीहै और तीनों दोषोंके प्रकोपमें तीन दोषोंके लक्षणोंके सिवाय अन्यान्य अनेक विकारयुक्त लक्षण देखनेमें आते हैं ॥ १३८ ॥

इति श्रीपरमजैनाचार्य्य श्रीकण्ठविरचिते हितोपदेशे वैद्यकसारसंग्रहे भिषग्वर हरिशङ्करात्मज शङ्करलालकृतभाषाटीकायां नाडीनेत्रमुखजिह्वापरीक्षावर्णनं नाम प्रथमः समुद्देशः ॥ १ ॥

हेत्वादि परीक्षाकी आवश्यकता.

परीक्ष्य हेत्वामयलक्षणानि चिकित्सितज्ञेन चिकित्सकेन ॥ निरामदेहस्य हि भेषजानि भवन्ति युक्तान्यमृतोपमानि ॥ १ ॥

अर्थ-रोगीकी चिकित्सा करनेवाले चिकित्सितज्ञ वैद्यको उचितहै कि रोगके हेतु और रोगके लक्षणोंकी परीक्षा अर्थात् रोग आम है वा पक्व है यानी दोषोंके पकानेकी आवश्यकता है या पकेहुए रोगको औषधादिके उपचारसे दूर करनेकी आवश्यकता है इत्यादिका विचार करै क्योंकि आमदोषसे रहित रोगीके देहमें प्रयोग कियेहुए औषध अमृतकी समान गुण करते हैं ॥ १ ॥

वातदोषके लक्षण.

पारुष्यसंकोचनतोदशूलान्श्यामत्वमङ्गव्यधचेष्टभङ्गान् ॥ सुप्तत्वशीतत्वखरत्वशोकान्कर्माणि वायोः प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ॥ २ ॥

अथ-जब शरीरमें वायुका प्रकोप होताहै तब शरीरकी त्वचामें कठोरता, शिराआदिमें संकोच तोडने सरीखी पीडा, शूल, शरीरका वर्ण कालासा, अंगोंमें पीडाका होना, चेष्टाका भंग होना, शरीरका अकडजाना, शीतका लगना और खरखरा होना, तथा शोकका होना ये सब लक्षण होते हैं ॥ २ ॥

कफदोषके लक्षण.

श्वेतत्वपीतत्वगुरुत्वकण्डूः स्नेहोपदेहस्तिमितत्व-लेपाः॥ उत्सेधसंवातचिरक्रियत्वं कफस्य कर्माणि वदन्ति तज्ज्ञाः॥ ३॥

अर्थ—शरीर आदिका अथवा मल आदिका सफेद, पीला और भारी होना, शरीरमें खुजलीका होना, चिकनापन शरीरमें लेप कियेहुएके समान जानपडना अंगोंका स्थिर होना या जकडना, लेपकी समान चिकने मलका निकलना, मलके एकत्र हुएकासा जानपडना और सम्पूर्ण क्रियाओंका मंद होना ये सब कफके कर्म्म हैं॥ ३॥

पित्तदोषके लक्षण.

परिश्रमस्वेदविदाहरागवैगन्ध्यसंक्लेदविपाककोपाः॥ प्रलापमूर्च्छाभ्रमपीतता च पित्तस्य कर्माणि वदन्ति तज्ज्ञाः॥ ४॥

अर्थ—शरीरमें परिश्रमका जानपडना, पसीनेका आना, दाहका होना, शरीरादिक अथवा मलादिकमें रक्तताका होना, दुर्गन्धका आना, क्लेद, विपाक और प्रकोप होना, प्रलाप, भ्रम, मूर्च्छा और सम्पूर्ण अंगोमें पीलापन होना ये सब पित्तके कर्म जानने॥ ४॥

देववन्दना.

**कल्पान्तमारुतोद्भूत कालानलभयङ्करम्॥
नमाम्यनेकदुःखौघवातज्वरहरं परम्॥ ५॥**

अर्थ—कल्पान्त कालकी पवनसे उत्पन्न हुए कालाग्निके समान भयंकर और जिसमें अनेक दुःखोंका समूह रहताहै ऐसे वातज्वरको हरनेवाले परमदेवको प्रमाण करताहूं॥ ५॥

ज्वरोत्पत्ति.

दक्षापमानसंक्रुद्धरुद्रनिश्वाससम्भवः ॥
प्राणिनो धातुवैषम्याज्ज्वरो ज्वरयते किल ॥ ६ ॥

अर्थ–दक्षप्रजापतिके किये हुए अपमानसे कुपित हुए महादेवके श्वाससे उत्पन्न हुआ ज्वर जब प्राणियोंके शरीरमें वातादि धातुओंकी विषमता होती है तब उनको ज्वरसे युक्त करता है ॥ ६ ॥

ज्वरके आठ भेद.

वातपित्तकफोद्भूतः सन्निपातोभिचारजः ॥
देवग्रहप्रकोपोत्थो मानसोऽष्टविधो ज्वरः ॥ ७ ॥

अर्थ–यह ज्वर आठ प्रकारका है (१) वातज्वर, (२) पित्तज्वर, (३) कफज्वर, (४) सन्निपातज्वर, (५) अभिचारज्वर, (मंत्रादिकसे उत्पन्न हुआ) (६) देवप्रकोपसे उत्पन्न हुआ, (७) ग्रहोंके कोपसे उत्पन्न हुआ, (८) मानसज्वर ॥ ७ ॥

ज्वरोत्पत्तिके अन्य कारण.

शोकक्रोधात्तथामोहात्सन्तापाद्बलहानितः ॥
अन्तकाले मनुष्याणां जायन्ते दारुणा ज्वराः ॥ ८ ॥
अन्येऽपि विविधाकारा व्यायामाजीर्णसम्भवाः ॥
धातोरसात्म्यवैषम्यैः कायजाता ह्यनेकधाः ॥ ९ ॥

अर्थ–तथा शोकसे, क्रोध, मोह, संताप और निर्बलतासे ज्वर उत्पन्न होता है इसीप्रकार मनुष्योंके अन्तकालमें भी महादारुण ज्वर उत्पन्न होतेहैं तथा अत्यन्त परिश्रम करनेसे, अजीर्णसे, मिथ्या आहार विहार करनेसे (जो धातुओंके अनुकूल न हो) तथा धातुओंकी विषमता एवं अन्योन्य कारणोंसे भी भिन्न २ जातिके अनेक प्रकारके शरीरमें ज्वर उत्पन्न होते हैं ॥ ८ ॥ ९ ॥

आमज्वरके लक्षण.

स्तैमित्यं वर्चसस्तृष्णा विदाहः पर्वणां च रुक् ॥
सग्लानि मूत्रबाहुल्यं ज्वरस्यामस्य लक्षणम् ॥ १० ॥

अर्थ—जिस ज्वररोगी का मल बंधगयाहो, तृषा होय, संधियोंमें दाह और तोडने सरीखी पीडा होय, ग्लानि होय, और अत्यन्त मूत्र आता होय तो उसके आमज्वर जानना ॥ १० ॥

मलज्वरके लक्षण.

शोषदाहप्रलापोंऽगभङ्गोभ्रमशिरोव्यथा ॥
एतानि यस्य चिह्नानि स विज्ञेयो मलज्वरः ॥ ११ ॥

अर्थ—जिस ज्वररोगीके कंठमें शोष होय, शरीरमें दाह होय, प्रलाप होय, शरीरमें तोडने सरीखी पीडा होय, भ्रम होय और शिरमें पीडा होय यह लक्षण जिसमें होयँ उसको मलज्वर जानना ॥ ११ ॥

पक्कज्वरके लक्षण.

ज्वरवेगोऽधिका तृष्णा प्रलापः श्वाससम्भ्रमौ ॥
मलप्रवृत्तिरुत्क्लेदः पच्यमानस्य लक्षणम् ॥ १२ ॥

अर्थ—ज्वरका अधिक वेग हो, तृषा लगे, प्रलाप होय, श्वास होय, भ्रम होय, दस्त आनेलगै और शरीरमें ग्लानि उत्पन्न होय यह लक्षण पक्क ज्वरके जानने ॥ १२ ॥

ज्वरमुक्तिहोनेके लक्षण.

अन्नाकाङ्क्षा शिरःकण्डूः क्षवथुर्गात्रलाघवम् ॥
प्रस्वेदो मुखपाकश्च ज्वरमुक्तस्य लक्षणम् ॥ १३ ॥

अर्थ—रोगीको भोजन करनेकी इच्छा होय, शिरमें खुजली होय, छींके आवैं, शरीर हलकापन हो, पसीना आवे और मुखपाक होय ये सब लक्षण ज्वरमुक्तके जानने ॥ १३ ॥

ज्वरमें प्रथम उपचार.

निर्वातसेवनात्स्वेदाल्लङ्घनादुष्णवारिणः ॥
पानादिभिर्ज्वरे क्षिप्ते पश्चाद्यूषः प्रयुज्यते ॥ १४ ॥

अर्थ—ज्वररोगीको प्रथम वायुरहित स्थानमें रक्खे तथा पसीने निकलवावे, लंघन करावे और पीनेके लिये औटाया हुआ जल देवे इस प्रकार उपचार करनेसे जब रोगीका ज्वर हलका होजाय तब उसको मूंग इत्यादिका यूष पान करनेके लिये देवे ॥ १४ ॥

वातज्वरके लक्षण.

शीतकम्पो भ्रमालापो रोमाञ्चः शीर्षवेदना ॥
अङ्गमर्दोतिमन्दाग्निर्जृम्भा वातज्वरेङ्गितम् ॥ १५ ॥

अर्थ—प्रथम शीत लगे, शरीर कांपे, भ्रम होय, प्रलाप होय, रोमांच हो आवें, शिरमें अत्यन्त पीडा होय, शरीर टूटे, अग्नि मंद होजाय, और वारंवार जम्भाई आवे ये लक्षण वातज्वरके जानने ॥ १५ ॥

वातज्वरका उपचार.

याति वातज्वरो विश्वागुडूचीक्वाथपानतः ॥
दुरालभामृताक्वाथो हन्ति वातं समांशतः ॥ १६ ॥

अर्थ—सोंठ और गिलोयका क्काथ पीनेसे वातज्वर नष्ट होताहै । धमासा और गिलोयको समान भाग लेकर क्काथ बनाकर पीनेसे वातज्वर दूर होताहै ॥ १६ ॥

सद्यो वातज्वरं हन्ति शतावर्यमृतारसः ॥
समांशः सगुडः पीतो बलहीनस्य देहिनः ॥ १७ ॥

अर्थ—शतावर और गिलोयके रसको समान भाग लेकर उसमें गुड डालकर पीनेसे निर्बल मनुष्यका भी वातजज्वर तुरन्त नाशको प्राप्त होताहै ॥ १७ ॥

द्राक्षा दुरालभा पथ्या गुडूची समभागतः ॥
एता गुडान्विता पीता नाशयत्यनिलज्वरम् ॥ १८ ॥

अर्थ–काली दाख, धमासा, हरड तथा गिलोय ये सब समान भाग लेकर काथ बनाकर उसमें गुड डालकर पीनेसे वातज्वर नाशको प्राप्त होताहै ॥१८॥

पित्तज्वरके लक्षण.

अतीसारो भ्रमो दाहः प्रलापस्तृण्मुखं कटु ॥
नासाधरनखाः कृष्णा मूर्च्छा पित्तज्वरेङ्गितम् ॥१९॥

अर्थ–वारंवार पतले दस्त आवैं, भ्रम होय, प्रलाप होय, तृषा लगे, मुख कडवा होय, नासिका, ओष्ठ, और नख काले पडजाय, और मूर्च्छा होय ये लक्षण पित्तज्वरके जानने ॥ १९ ॥

पित्तज्वरके उपचार.

भद्रमुस्तामृता द्राक्षा पर्पटः कटुरोहिणी ॥
अष्टावशेषितः काथ एतेषां समभागतः ॥ २० ॥

अर्थ–नागरमोथा, गिलोय, दाख, पित्तपापडा और कुटकी इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर काथ बनावे जब जल जलकर आठवां भाग शेष रहजाय तब पीवे तो पित्तज्वर दूर होताहै ॥ २० ॥

घृतभृष्टं शिवाचूर्णं पिष्टमम्लतुषाम्भसा ॥
प्रलेपाद्दाघनुत्फेनं बदर्या वा दलोद्भवम् ॥ २१ ॥

अर्थ–हरडका चूर्ण करके घीमें भूनकर तुषोदक नामक कांजीमें पीसकर लेप करनेसे पित्तज्वरका दाह दूर होताहै अथवा बेरीके पत्तोंके झाग निकालकर शरीरपर लेप करनेसे पित्तज्वरकी दाह दूर होती है ॥ २१ ॥

वृषो दुरालभा श्यामा पर्पटः कटुरोहिणी ॥
किरातमथवैतेषां काथः पीतः सितान्वितः ॥२२॥
रक्तोद्भवं महादाघं तृष्णां मूर्च्छां मतिभ्रमम् ॥
पित्तज्वरं हरत्याशु पापं वीरो यथा स्मृतः ॥२३॥

अर्थ–अडूसा, धमासा, अनंतमूल, पित्तपापडा, कुटकी और चिरायता इन

सबका काथ बनाकर पीनेसे दूषित रुधिरसे उत्पन्न हुए दाह, तृषा, मूर्च्छा और भ्रमसहित पित्तज्वर तत्काल दूर होजाताहै जिसप्रकार श्रीमहावीर वर्द्धमान स्वामीका स्मरण करनेसे सब प्रकारके पाप नष्ट होजातेहै ॥ २२ ॥ २३ ॥

किरातमुस्ताकटुकीसमांशं छिन्नोद्भवा रिंगिणिका च रेणुः ॥ क्काथो निपीतो हरति प्रलापं पित्तज्वरं दाघतृषे भ्रमं च ॥ २४ ॥

अर्थ—चिरायता, नागरमोथा, कुटकी, गिलोय, कटेरीकी जड और पित्तपापडा ये सब समान भाग लेकर काथ बनाकर पीनेसे प्रलाप, दाह, तृषा और भ्रमसहित पित्तज्वर नाश होता है ॥ २४ ॥

पर्पटश्चन्दनं मुस्ता विश्वोशीरद्वयं समम् ॥
क्काथ एषां तृषां छर्दिं हन्ति पित्तज्वरं भ्रमम् ॥ २५ ॥

अर्थ—पित्तपापडा, लाल चन्दन, नागरमोथा, सोंठ, खस और लामज्जक तृण इन सबको समान भाग लेकर काथ बनाकर पीनेसे तृषा, वमन, और भ्रमसहित पित्तज्वर दूर होता है ॥ २५ ॥

पद्मकं काशुली शुण्ठी धान्यकोशीरयुग्मकम् ॥
पर्पटश्च समः क्काथः पीतः पित्तज्वरापहः ॥ २६ ॥

अर्थ—पद्माख, कासनी, सोंठ, धनिया, खस तथा लामज्जक तृण और पित्तपापडा यह सब औषधि समान भाग लेकर काथ बनाकर पीनेसे पित्तज्वर नाशको प्राप्त होता है ॥ २६ ॥

श्रीपर्णी काशुली द्राक्षा चन्दनं बालकद्वयम् ॥
मुस्ता पर्पटको यष्टिरमीषां समभागतः ॥ २७ ॥
अष्टावशेषितः क्काथः पीतः शर्करया सह ॥
पित्तज्वरं भ्रमं दाघं हन्ति छर्दिमसंशयम् ॥ २८ ॥

अर्थ—कुम्भेर, कासनी, दाख, चन्दन, खस, सुगंधवाला, नागरमोथा, पित्त-

पापडा और मुलेठी इन सब औषधियोंका अष्टावशेष क्वाथ बनाकर मिश्री मिलाकर पानकरनेसे भ्रम, दाह और वमनसहित पित्तज्वर दूर होता है ॥ २७ ॥ २८ ॥

कफज्वरके लक्षण.

शुष्कछर्दिर्जडत्वं च रोमाञ्चं मधुरं मुखम् ॥
उष्णेच्छाऽस्वल्पसंतापः श्लेष्मज्वरविचेष्टितम् ॥ २९ ॥

अर्थ–यदि सुखी उबकाई आवे, शरीर जकडजाय, रोमांच हो आवे, मुख मीठा होजाय, गरम वस्तुओंकी इच्छा होय और शरीरमें ज्वरकी गरमी थोडी हो तो कफज्वरके लक्षण जानना चाहिये ॥ २९ ॥

कफज्वरकी चिकित्सा.

कण्टकार्यमृतादारु वृषा विश्वा समांशतः ॥
क्वाथः कणारजः पीतः श्लेष्मज्वरविनाशनः ॥ ३० ॥

अर्थ–कटेरी, गिलोय, देवदारू, अडूसा और सोंठ ये सब समान भाग लेकर क्वाथ बनाकर पीपलका चूर्ण डालकर पीनेसे कफज्वर नाशको प्राप्त होता है ॥ ३० ॥

कणा विश्वामृता दारुकिरातैरण्डमूलकाः ॥
निम्ब एषां समः क्वाथः पीतः श्लेष्मज्वरापहः ३१

अर्थ–पीपल, सोंठ, गिलोय, देवदारु, चिरायता, अण्डकी जड और नीमकी छाल इन सबको समान भाग लेकर क्वाथ बनाकर पीनेसे कफज्वर दूर होताहै ॥ ३१ ॥

दारु विश्वामृता कृष्णा पुष्करैरण्डमूलकाः ॥
किरातं च समः क्वाथः पीतः श्लेष्मज्वरापहः ॥ ३२ ॥

अर्थ–देवदारू, सोंठ, गिलोय, पीपल, पोकर मुल, अण्डकी जड और चिरायता इनको समान भाग लेकर क्वाथ बनाकर पीनेसे कफज्वर दूर होताहै ॥ ३२ ॥

निम्बशुण्ठीकणामूलं पथ्या कटुकरोहिणी ।
व्याधिघातः समः क्वाथः पीतः श्लेष्मज्वरापहः ३३ ॥

अर्थ–नीमकी छाल, सोंठ, पीपलामूल, हरड, कुटकी और अमलतास इन सबको समान भाग लेकर क्काथ बनाकर पीनेसे कफज्वर दूर होता है ॥ ३३ ॥

हिवजश्चविका दारु हरिद्रा कटुका समः ॥
श्लेष्मज्वरापहः क्काथो निपीतोऽष्टावशेषितः ३४॥

अर्थ–चोक, चव्य, देवदारु, हलदी और कुटकी इन सबको समान भाग लेकर अष्टावशेष क्काथ बनाकर पीनेसे कफज्वर दूर होताहै ॥ ३४ ॥

वासवोऽतिविषा कुष्ठं देवदारु महौषधम् ॥
मुस्ता समांशतः क्काथः पीतः श्लेष्मज्वरापहः॥३५॥

अर्थ–अडूसा, अतीस, कूठ, देवदारु, सोंठ और नागरमोथा इन सबको समान भाग लेकर क्काथ बनाकर इसके पीनेसे कफज्वर दूर होताहै ॥ ३५ ॥

मुस्ता दुरालभा शुण्ठी क्काथ एषां समांशतः ॥
हन्ति श्लेष्मज्वरं तीव्रं निपीतः पथ्यभोजनम्॥३६॥

अर्थ–नागरमोथा, धमासा और सोंठ इन तीनोंको समान भाग लेकर क्काथ बनाकर पीनेसे तथा पथ्य भोजन करनेसे तीव्र कफज्वर दूर होताहै ॥ ३६ ॥

वातपित्तज्वरके लक्षण.

श्वासः कफस्तथा छर्दिर्जडत्वं मधुरं मुखम् ॥
प्रतिश्यायो जलं चास्ये निद्रा शीर्षकटिव्यथा ॥३७॥
रोमोद्गमो ज्वरे चिह्नं वातपित्तसमुद्भवम् ॥
अमुं द्वन्द्वजमित्याहुर्वैद्यशास्त्रविशारदाः ॥ ३८ ॥

अर्थ–यदि ज्वररोगीके श्वास होय कफ होय, वमन होय, शरीरमें जडता और मुखमें मीठापन होय, प्रतिश्याय होय, मुखमें पानी भरआवे, निद्रा आवे शिर और कमरमें पीडा होय, रोमांच होआवे तो उसके वात पित्तज्वर जानना इस प्रकार दोनों दोषोंके लक्षण मिलनेसे वैद्योंने इसको द्वन्द्वज ज्वर कहा है ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

वातपित्तज्वरकी चिकित्सा.

बालके काशुली मुस्ता यष्टिर्द्राक्षाटरूषकः ॥
क्वाथ एषां सितापीतो वातपित्तज्वरापहः ॥ ३९ ॥

अर्थ–सुगन्धवाला, कासनी, नागरमोथा, मुलैठी, दाख और अडूसा इनका क्वाथ बनाकर उसमें मिश्री मिलाकर पीनेसे वातपित्तज्वर दूर होता है ॥ ३९ ॥

द्राक्षा किरातको भार्ङ्गी कर्चूरोऽमृतवल्लरी ॥
एषां क्वाथो गुडोपेतः पीतो द्वन्द्वजरोगहृत् ॥४०॥

अर्थ–दाख, चिरायता, भारंगी, कचूर और गिलोय इन औषधियोंके क्वाथमें गुड डालकर पीनेसे वातपित्तज्वर दूर होता है ॥ ४० ॥

मधुयष्टिर्निशायुग्मं पटोली व्याधिघातकः ॥
मुस्तानिम्बाह्वयः क्वाथो वातपित्तज्वरापहः ॥४१॥

अर्थ–मुलैठी, हल्दी, दारुहल्दी, पटोलपत्र, अमलतास, नागरमोथा, और नीमकी छाल इन औषधियोंका क्वाथ बनाकर पीनेसे वातपित्तज्वर दूर होताहै॥ ४१॥

चिक्कणी मधुकं द्राक्षा मधुपुष्पं वृषोत्पलम् ॥
पद्मकं बालकद्वन्द्वं क्वाथ एषां सुशीतलः ॥ ४२ ॥
पीतः पथ्याशितो हंति प्रलापं मोहमुत्कटम् ॥४३॥

अर्थ–सुपारी, मुलैठी, दाख, महुएके फूल, अडूसा, कमल, पद्माख और दोनों प्रकारके सुगन्धवाले इन औषधियोंका क्वाथ बनाकर शीतल करके पीनेसे और पथ्यपूर्वक रहनेसे प्रलाप और मूर्च्छा दूर होती है ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

वातकफज्वरके लक्षण.

तन्द्रास्तैमित्यसन्तापं पर्वरुक्चांगगौरवम् ॥
शीतकासारुचिश्वासौ विद्याद्वातकफज्वरे ॥ ४४ ॥

अर्थ–वातज्वरमें नेत्रोंमें तन्द्रा होय, शरीरमें जडता होय, दाह होय सन्धियोंमें पीडा होय अङ्गोंमें भारीपन रहे, शीत लगे, खांसी होय, अरुचि होय और श्वास हो ॥ ४४ ॥

वात कफज्वरकी चिकित्सा ॥

क्षुद्रामृतानागरपुष्कराह्वयैः कृतः कषायः कफमारुतोत्तरे ॥ सश्वासकासारुचिपार्श्वशूले ज्वरे त्रिदोषप्रभवे विशस्यते ॥ ४५ ॥

अर्थ-कटेरी, गिलोय, सोंठ और पोहकरमूल इन औषधियोंका काथ बनाकर पीनेसे वातकफज्वरसे उत्पन्न हुए श्वास, खांसी, अरुचि, और पशलियोंका शूल तथा त्रिदोषज ज्वर दूर होता है ॥ ४५ ॥

आरग्वधग्रन्थिकमुस्ततिक्ताहरीतकीभिः क्वथितः कषायः ॥ सामे सशूले कफवातयुक्ते ज्वरे हितो दीपनपाचनश्च ॥ ४६ ॥

अर्थ-अमलतास, पीपलामूल, नागरमोथा, कुटकी और हरड इन औषधियोंका काथ बनाकर पीनेसे आमशूल और कफवातज्वर दूर होता है यह काथ जठराग्निको दीपन करनेवाला और मलको पकानेवाला है ॥ ४६ ॥

पित्तकफज्वरके लक्षण.

शीतं दाहोऽरुचिः कासस्तृष्णा मोहो मुखं कटु ॥
आलस्यमिति चिह्नानि ज्वरे पित्तकफात्मके ॥४७॥

अर्थ-यदि शीत लगे, दाह होय, अरुचि होय, खांसी होय, तृषा लगे मूर्च्छा होय, मुख कडवा होय और आलस्य होय तो पित्तकफज्वरके चिह्न जानने होतें हैं ॥ ४७ ॥

पित्तकफज्वरकी चिकित्सा.

किरमालो वचा हिंगुर्बालकं धान्यकं निशा ॥
मुस्ता यष्टिस्तथा भार्ङ्गी पर्पटः समभागतः ॥ ४८ ॥
अष्टावशेषितः क्राथो मधुना प्रतिवासितः ॥
पित्तश्लेष्मज्वरं हन्ति क्राथ एषां निषेवितः ॥ ४९ ॥

अर्थ—अमलतास, वच, हींग, सुगन्धवाला, धनियां, हल्दी, नागरमोथा, मुलैठी, भारंगी और पित्तपापडा इन सब औषधियोंको चारचार तोले लेकर सोलहगुने जलमें औटावे जब जलकर आठवां भाग शेष रहजाय तब ठण्डा होनेपर सहत डालकर पीवे इस क्वाथको पीनेसे कफपित्तज्वर दूर होताहै ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

पटोलीनिम्बपत्राणि पथ्या कटुकरोहिणी ॥
पित्तश्लेष्मज्वरं हन्ति क्वाथ एषां निषेवितः ॥५०॥

अर्थ—पटोलपत्र, नीमके पत्ते, हरड और कुटकी इन औषधियोंका क्वाथ बनाकर पीनेसे पित्तकफज्वर दूर होताहै ॥ ५० ॥

त्रिफला बालकं यष्टिरटरूषः पटोलिका ॥
क्वाथो मधुयुतः पीतः श्लेष्मपित्तज्वरापहः ॥ ५१ ॥

अर्थ—त्रिफला (हरड बहेडा आमला), सुगन्धवाला, मुलैठी, अडूसा, और पटोलपत्र इन औषधियोंका क्वाथ बनाकर ठण्डा करके सहत मिलाकर पीनेसे कफपित्तज्वर दूर होताहै ॥ ५१ ॥

पटोली रिङ्गिणी शुण्ठी किरातं कटुरोहिणी ॥
गुडूचीन्द्रयवावासा मुस्ता भार्ङ्गी च चन्दनम् ॥५२॥
क्वाथः पीतोऽरुचिं दाहं तृष्णां छर्दिमसंवरम् ॥
श्लेष्मपित्तज्वरं हन्ति कासं शूलं च दारुणम् ॥५३॥

अर्थ—पटोलपत्र, कटेरी, सोंठ, चिरायता, कुटकी, गिलोय, इन्द्रजो, अडूसा, नागरमोथा, भारंगी और लाल चन्दन इन औषधियोंका क्वाथ बनाकर पीनेसे अरुचि, दाह, तृषा, वमन और अप्रसन्नता, कफपित्तज्वर तथा महाभयंकर खांसी और शूल दूर होताहै ॥ ५२ ॥ ५३ ॥

सन्निपातज्वरके लक्षण.

आलस्यमरुचिः कर्णसन्ध्यस्थिशीर्षवेदना ॥
मूर्च्छा दाहस्तृषा निद्रा नैव जिह्वातिपाण्डुरा ॥५४॥

पीते वा लोहिते नीले लोचने शीतलं वपुः ॥
भ्रमः कासो मुखं तप्तं सन्निपातज्वरेङ्गितम् ॥ ५५ ॥

अर्थ—सन्निपातज्वरमें आलस्य, अरुचि, कान, सन्धि, अस्थि और शिरमें पीडा होय, मूर्च्छा, शरीरमें दाह होय, तृषा लगे, निद्रा नहीं आवे, जिह्वा अत्यन्त सफेद होजाय, नेत्र पीले नीले, या लाल होजायँ देह ठण्डा होय, भ्रम होय, खांसी होय और मुख गरम होय ये लक्षण सन्निपातज्वरके जानने ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

सन्निपातज्वरकी चिकित्सा ।

शुण्ठी दारु वचा मुस्ता किरातं काशुली तथा ॥
कण्टकार्यमृताक्वाथः सन्निपातज्वरापहः ॥ ५६ ॥

अर्थ—सोंठ, देवदारु, वच, नागरमोथा, चिरायता, कासनी, कटेरी और गिलोय इन औषधियोंका क्वाथ बनाकर पीनेसे सन्निपातज्वर नष्ट होजाताहै ॥ ५६ ॥

संज्ञाजनक नस्य.

मधूकसारसिंधूत्थवचोषणकणाः समाः ॥
बोधयत्यञ्जसा चूर्णं नस्यतो ज्वरमूर्च्छितम् ॥ ५७ ॥

अर्थ—मुलैठीका सत, सैंधानमक, वच, मिरच और पीपल इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण करके सुंघानेसे ज्वरसे मूर्च्छित हुआ मनुष्य तुरन्त सावधान होताहै ॥ ५७ ॥

यवासेन्द्रयवा भार्ङ्गी कर्चूरः कटुरोहिणी ॥
पटोली च सितैरण्डमूलं कर्कटशृंगिका ॥ ५८ ॥
एषां समांशतः क्वाथः श्वासं कासं तथा भ्रमम् ॥
सन्निपातज्वरं हन्ति रोगिणः पथ्यभोजिनः ॥ ५९ ॥

अर्थ—जवासा, इन्द्रजौ, भारंगी, कचूर, कुटकी, पटोलपत्र, सफेद अण्डकी जड और काकडाशिंगी इन सबको समान भाग लेकर क्वाथ बनाकर पीनेसे और पथ्य भोजन करनेसे श्वास, खांसी, भ्रम और सन्निपातज्वर दूर होताहै ॥ ५८ ॥ ५९ ॥

निम्बो दारु निशा मुस्ता त्रिफला कटुरोहिणी ॥
पटोलीक्वाथपानेन याति त्रैदोषजो ज्वरः ॥ ६० ॥

अर्थ–नीम, देवदारु, हल्दी, नागरमोथा, त्रिफला, कुटकी और पटोलपत्र इन औषधियोंका क्वाथ बनाकर पीनेसे त्रिदोषजज्वर दूर होताहै ॥ ६० ॥

पर्पटश्चन्दनश्छिन्नसम्भवा समभागतः ॥
सन्निपातज्वरं हन्ति क्वाथ एषां निषेवितम् ॥ ६१ ॥

अर्थ–पित्तपापडा, लाल चन्दन और गिलोय इन तीनोंको समान भाग लेकर क्वाथ बनाकर पीनेसे सन्निपातज्वर दूर होताहै ॥ ६१ ॥

किरातेन्द्रयवा मुस्ता कटुकी विश्वभेषजम् ॥
चूर्णमेषां सितायुक्तं सन्निपातज्वरापहम् ॥ ६२ ॥

अर्थ–चिरायता, इन्द्रजौ, नागरमोथा, कुटकी और सोंठ इन औषधियोंका चूर्ण करके मिश्रीमें मिलाकर सेवन करनेसे सन्निपातज्वर दूर होताहै ॥ ६२ ॥

हिङ्गु शुण्ठी कणा पथ्या मातुलुङ्गरसान्वितम् ॥
भक्षितं चूर्णमेतेषां सन्निपातज्वरापहम् ॥ ६३ ॥

अर्थ–हींग, सोंठ, पीपल और हरड इन औषधियोंका चूर्ण करके विजौरे नीबुके रसके साथ सेवन करनेसे सन्निपातज्वर दूर होताहै ॥ ६३ ॥

सञ्ज्ञाजनक अञ्जन,

शिरीषबीजगोमूत्रकृष्णामरिचसैन्धवैः ॥
बोधयत्यञ्जनं सुप्तं सन्निपातेन मानवम् ॥ ६४ ॥

अर्थ–सिरसके बीज, गायका मूत्र, पीपल, मिरच और सैंधानोन इन औषधियोंका बारीक अंजन बनाकर नेत्रोंमें लगानेसे सन्निपातसे उत्पन्न हुई बेहोसी दूर होकर चेतना उत्पन्न होतीहै ॥ ६४ ॥

दाहकर्म.

कृते संज्ञाविधानेऽपि संज्ञा यस्य न जायते ॥
पादयोस्तं ललाटे वा दहेत्तप्तशलाकया ॥ ६५ ॥

अर्थ–जो सन्निपातरोगीको चैतन्य करनेवाली, औषधियोंके प्रयोग करनेसे भी सावधानता न होय तो लोहेकी सलाईको आगमें तपाकर दोनों पांवों और मस्तकपर दाग देना चाहिये ॥ ६१ ॥

त्रिवृच्छ्यामासिता कृष्णा त्रिफला मधुमोदकः ॥
सन्निपातज्वरं शोकं रक्तपित्तं निरस्यति ॥ ६६ ॥

अर्थ–काला निसोत, पीपल, और त्रिफला इन औषधियोंका चूर्ण करके सहत और मिश्री मिलाकर मोदक बनाकर सेवन करनेसे सन्निपातज्वर, सूजन और रक्तपित्त दूर होताहै ॥ ६६ ॥

देवदारु निशा निम्बो रोहिणी त्रिफला घनः ॥
पटोली शस्यते क्वाथः सन्निपातेऽतिदारुणे ॥ ६७ ॥

अर्थ–देवदारु, हल्दी, नीमकी छाल, कुटकी, त्रिफला, नागरमोथा और पटोलपत्र इन औषधियोंका क्वाथ बनाकर पीनेसे महाभयंकर सन्निपातज्वर दूर होताहै ॥ ६७ ॥

किरमालकणामूलं मुस्ता कटुकरोहिणी ॥
पथ्या तत्सम्भवः क्वाथः सन्निपातेऽतिदारुणे॥ ६८ ॥

अर्थ–अमलवास, पीपलामूल, नागरमोथा, कुडेकी छाल और हरड इन औषधियोंका क्वाथ बनाकर पीनेसे सन्निपातज्वर दूर होताहै ॥ ६८ ॥

शठ्यादिवर्ग.

शठी पुष्करमूलं च व्याघ्री सिंही दुरालभा ॥
गुडूची नागरं पाठा किरातं कटुरोहिणी ॥ ६९ ॥

अर्थ–कचूर, पोहकरमूल, कटेरी, छोटी कटेरी, धमासा, गिलोय, सोंठ पाठ, चिरायता और कुटकी इन औषधियोंको शठ्यादि वर्ग कहतेहैं ॥ ६९ ॥

एष शठ्यादिको वर्गः सन्निपातज्वरापहः ॥
आमदोषं तथा शूलं कासं च श्लेष्ममारुतम् ॥७०॥

रौद्रान्सर्वज्वरान्हन्ति रोगिणः पथ्यभोजिनः ॥ ७१ ॥

अर्थ–यह शट्यादिवर्ग पथ्यभोजी रोगीके सन्निपातको दूर करताहै तथा आमदोष, शूल, खांसी, कफवात एवं सब प्रकारके ज्वरको हटता किन्तु रोगीको पथ्यसे रहना चाहिये ॥ ७० ॥ ७१ ॥

अथ सामान्य चिकित्सा।

त्रिफलावन्ध्यकर्कोटी वचा मुस्ता निशाद्वयम् ॥
कुष्ठं किरातकं क्काथः पीतः सर्वज्वरापहः ॥ ७२ ॥

अर्थ–त्रिफला, बांझक कोडा, वच, नागरमोथा, हलदी, दारुहल्दी, कूठ और चिरायता इनका क्काथ बनाकर पीनेसे सर्वप्रकारका ज्वर दूर होताहै ॥ ७२ ॥

गुडूची रिङ्गिणी शुण्ठी क्काथ आसां कणान्वितः ॥
पीतः सर्वज्वरान्हंति श्वासं शूलं तथाऽरुचिम् ॥ ७३ ॥

अर्थ–गिलोय, कटेरी और सोंठ इन औषधियोंका क्काथ बनाकर उसमें पीपलका चूर्ण डालकर पीनेसे सर्वप्रकारके ज्वर तथा श्वास, शूल, और अरुचि दूर होतीहै ॥ ७३ ॥

अथ विषमज्वर चिकित्सा.

विभीतो व्याधिघातश्च कटुकी त्रिवृता तथा ॥
क्काथो हन्ति तृषा दाघं विषमज्वरमञ्जसा ॥ ७४ ॥

अर्थ–बहेडा, अमलतास, कुटकी और निसोत इनका क्काथ बनाकर पीनेसे तृषा और दाह सहित विषमज्वर शीघ्र दूर होताहै ॥ ७४ ॥

मधूकवल्कलं कुष्ठमुत्पलं चन्दनं वचा ॥
त्रिफला दुल्लरी वासा द्राक्षा शिरीषपद्मकम् ॥ ७५ ॥

अर्थ–महुएकी छाल, कूट, कमल, लालचन्दन, वच, त्रिफला, दुल्लरी (गुजरातमें प्रसिद्ध) अडुसा, दाख, सिरसकी छाल, पद्माख ॥ ७५ ॥

मूर्वा यष्टिरयं क्काथो दाघं मूर्च्छां तृषां भ्रमम् ॥
रक्तपित्तज्वरं हन्ति निपीतो मधुना सह ॥ ७६ ॥

अर्थ—मूर्वा और मुलैठी इन औषधियोंका क्वाथ बनाकर उसमें सहत डालकर पीनेसे दाह, मूर्च्छा, तृषा, भ्रम और रक्तपित्तज ज्वर दूर होताहै ॥७६॥

यष्टिर्दुरालभा पाठा त्रिफला तालकामृते ॥
मुस्ता क्वाथः सितापीतो विषमज्वरनाशनः ॥ ७७ ॥

अर्थ—मुलैठी, धमासा, पाढ, त्रिफला, तालीसपत्र, गिलोय और नागरमोथा इन औषधियोंका क्वाथ बनाकर मिश्री मिलाकर पीनेसे विषमज्वर दूर होता है७७॥

कणाचूर्णं मधुक्षीरसर्पिः पक्वं निहन्ति तत् ॥
पीतं शर्करया श्वासं हृद्रोगं विषमज्वरम् ॥ ७८ ॥

अर्थ—सहत, दूध और घी इनको पकाकर पीपलका चूर्ण और मिश्री डालकर पीनेसे श्वास, हृदयरोग और विषमज्वर दूर होताहै ॥ ७८ ॥

पटोलीन्द्रयवं पाठा गुडूची निम्बपल्लवाः ॥
हन्ति क्वाथो निपीतोऽयं सततं विभ्रमज्वरम् ॥ ७९ ॥

अर्थ—पटोलपत्र, इन्द्रजी, पाढ, गिलोय और नीमके पत्ते इन औषधियोंका क्वाथ बनाकर पीनेसे भ्रम और सततज्वर दूर होताहै ॥ ७९ ॥

ज्वरनाशक अञ्जन और धूप ।

ज्वरेऽञ्जनं शिला तैलं कृष्णामरिचसैन्धवैः ॥
वचा हरीतकी सर्पिर्धूपः स्याद्विषमज्वरे ॥ ८० ॥

अर्थ—मैनशिल, तेल, पीपल, मिरच और सेंधानोन इन औषधियोंको बारीक पीसकर नेत्रोंमें लगानेसे विषमज्वर दूर होताहै । वच, हरड और घी इनकी धूप देनेसे विषमज्वर दूर होताहै ॥ ८० ॥

चन्दनं धान्यकं मुस्ता गुडूची विश्वभेषजम् ॥
ज्वरं पञ्चमकं हन्ति क्वाथो एषां निषेवितः ॥ ८१ ॥

अर्थ—चन्दन, धनियां, नागरमोथा, गिलोय और सोंठ इन औषधियोंका क्वाथ बनाकर पीनेसे पांचवें दिन आनेवाला ज्वर दूर होताहै ॥ ८१ ॥

मुस्तापाठाशिवाक्वाथश्चातुर्थिकज्वरापहः ॥
दुग्धेन त्रिफला पीता हन्ति चातुर्थिकं ज्वरम् ॥८२॥

अर्थ–नागरमोथा, पाढ और हरड इनका काथ बनाकर पीनेसे चौथे दिन आनेवाला ज्वर दूर होताहै। दूधके साथ त्रिफलेका चूर्ण सेवन करनेसे चौथेदिन आनेवाला ज्वर दूर होताहै ॥ ८२ ॥

यवासो हैमजा दारु शुण्ठी वासा समन्ततः ॥
काथो निषेवितो हन्ति ज्वरं षष्ठदिनोद्भवम् ॥ ८३ ॥

अर्थ–जवासा, हिमज (स्वर्णक्षीरी), देवदारु, सोंठ और अडूसा इन औषधियोंको समान भाग लेकर काथ बनाकर पीनेसे छठे दिन आनेवाला ज्वर दूर होताहै ॥ ८३ ॥

मुस्ता विश्वामृता धान्यं बालकं चन्दनं समाः ॥
क्वाथो मधुसितापीतो त्र्याहिकज्वरनाशनः ॥ ८४ ॥

अर्थ–नागरमोथा, सोंठ, गिलोय, धनियां, सुगन्धवाला और चन्दन इन औषधियोंको समान भाग लेकर काथ बनाकर सहत अथवा मिश्री मिलाकर पीनेसे तीसरे दिन आनेवाला ज्वर दूर होताहै ॥ ८४ ॥

सितामधुकणासर्पिस्तप्तदुग्धस्य पानतः ॥
शाम्यन्ते श्वासहृद्रोगप्रलापविषमज्वराः ॥ ८५ ॥

अर्थ–मिश्री, सहत, पीपल, घी और गरम दूध इनको एकमें मिलाकर पीनेसे, श्वास, हृदयरोग, प्रलाप और विषमज्वर दूर होताहै ॥ ८५ ॥

शिरीषो लांगली कुष्ठं निम्बो दन्ती हरीतकी ॥
मध्वाज्यभक्षितं चूर्णं विषमज्वरनाशनम् ॥ ८६ ॥

अर्थ–सिरस, कलिहारी, कूठ नीमकी छाल, दन्तीकी जड और हरड इन औषधियोंका चूर्ण करके सहत और घीके साथ सेवन करनेसे विषमज्वर दूर होताहै ॥ ८६ ॥

ग्रहभूतादिव्याधिहर नस्य.

शिरीषो निम्बपत्राणि हिङ्गु सर्पस्य कंचुकः ॥
समांशं चूर्णमेतेषां वारिपिष्टं च नस्यतः ॥ ८७ ॥
ग्रहभूतपिशाचानांशा किनीरक्षसामपि ॥
दोषं हन्ति ज्वरं तीक्ष्णं तरणिस्तिमिरं यथा॥८८॥

अर्थ-सिरस, नीमके पत्ते, हींग और सांपकी कैंचुली इन सबको समान भाग लेकर इनका चूर्ण करके जलमें पीसकर नास देनेसे ग्रह, भूत, पिशाच, शाकिनी और राक्षस, इत्यादिसे उत्पन्नहुए दोष तथा तीक्ष्णज्वर दूर होताहै जिसप्रकार सूर्य्यके निकलनेसे अन्धकार दूर होताहै ॥ ८७ ॥ ८८ ॥

ग्रहज्वरहर धूप.

शिरीषं बिल्वजं चाम्रकपित्थार्जुनपल्लवैः ॥
सपुरः शल्लकैर्धूपः सर्वग्रहज्वरापहः ॥ ८९ ॥

अर्थ-सिरस, बेल, आम, कैथ और अर्जुनके पत्ते तथा गूगल और सालई इनकी धूप बनाकर देनेसे सर्वप्रकारके ग्रहोंसे उत्पन्न हुआ ज्वर दूर होताहै ॥८९॥

लशुनादि अञ्जन.

लशुनं पिप्पली राजी वचा पथ्या समांशतः ॥
एतच्चूर्णं जले पिष्टं चक्षुष्यं ज्वरनाशनम् ॥ ९० ॥

अर्थ-लशुन, पीपल, राई, वच और हरड इन सबके समान भागोंको जलमें बारीक पीसकर नेत्रोंमें आंजनेसे सर्वप्रकारका ज्वर नष्ट होताहै ॥ ९० ॥

ज्वरातिसारकी चिकित्सा.

गुडूचीन्द्रयवौ शुण्ठी किरातातिविषा घनः ॥
एतत्क्वाथः कृतः पीतः सर्वज्वरातिसारजित्॥९१॥

अर्थ-गिलोय, इन्द्रजौ, सोंठ, चिरायता, अतीस, और नागरमोथा इन औषधियोंका काथ बनाकर पीनेसे सर्वप्रकारका ज्वरातिसार दूर होताहै ॥९१॥

चन्दनं कुटकी पाठा किरातोऽशीरपर्पटाः ॥
ज्वरातिसारहृत्क्वाथो निपीतो मधुना सह ॥९२॥

अर्थ—लालचन्दन, कुटकी, पाठकी जड, चिरायता, खस और पित्तपापडा इन औषधियोंका क्वाथ बनाकर सहत डालकर पीनेसे सर्वप्रकारके ज्वरातिसार नष्ट होते हैं ॥ ९२ ॥

पर्पटश्चन्दनं यष्टिः कुटजोऽतिविषामृता ॥
मुस्तैषां समधुः क्वाथः पीतो ज्वरातिसारहृत् ॥९३॥

अर्थ—पित्तपापडा, लाल चन्दन, मुलैठी, इन्द्रजौ, अतीस गिलोय और नागरमोथा इन औषधियोंका क्वाथ बनाकर सहत डालकर पीनेसे ज्वरातिसार दूर होता है ॥ ९३ ॥

गोक्षुरश्चन्दनं यष्टिः कुटजोऽतिविषामृता ॥
मुस्ताबालककुष्ठानि लज्जरी समभागतः ॥ ९४ ॥
अष्टावशेषितः क्वाथो मधुना पीतमुल्बणम् ॥
ज्वरातिसारकं हन्ति कुक्षिशूलं च दारुणम् ॥९५॥

अर्थ—गोखरू, लालचन्दन, मुलैठी, इन्द्रजौ, अतीस, गिलोय, नागरमोथा, सुगन्धवाला, कूठ और लज्जरी (लज्जावंती) इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर क्वाथ बनावे जब जल जलकर आठवां भाग बाकी रहजाय तब क्वाथमें सहत डालकर पीनेसे अत्यन्त भयानक ज्वरातिसार और महादारुण कुक्षिशूल नष्ट होता है ॥ ९४ ॥ ९५ ॥

शूलादिरोगोंमें अपथ्य.

वर्जयेद्विदलं शूली कुष्ठी मांसं ज्वरी घृतम् ॥
मद्यपानमपस्मारी नेत्ररोगी च मैथुनम् ॥ ९६ ॥

अर्थ—शूलरोगी दो दालवाला अन्न त्याग देवे कुष्ठरोगी मांसका भोजन त्याग देवे ज्वररोगी घृत सेवन करना छोड देवे मृगीरोगवाला मद्यपान करना छोड देवे और नेत्ररोगीको मैथुन करना त्याग देना चाहिये ॥ ९६ ॥

ज्वरमें पथ्य

शालयो रक्तशाल्याद्याः शस्यंते षष्टिकास्तथा ॥
पटोलपत्रवार्ताकौ कर्कोटादीनि च ज्वरे ॥ ९७ ॥

अर्थ-लाल शालिधान तथा साठीके चावल इत्यादि तथा परवलके पत्ते बैंगुन और ककोडे इत्यादिका शाक ज्वररोगीको हितकारीहै ॥ ९७ ॥

पिप्पल्यादियवागू.

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः ॥
यवागूसेविता सिद्धा दीपनी पाचनी हिता ॥९८॥

अर्थ-पीपल, पीपलमूल, चव्य, चीता और सोंठ इन औषधियोंका चूर्ण करके यवागू छः भाग जलमें सिद्ध कियेहुए तण्डुल आदिमें मिलाकर सेवन करनेसे ज्वररोगीकी जठराग्नि दीपन होतीहै तथा यह यवागू पाचन और हितकारी है ॥ ९८ ॥

मुद्गादिक्काथ.

कषायो भृष्टमुद्गानां लाजाः क्षौद्रयुताः सिताः ॥
छर्द्यतीसारतृड्दाहपित्तज्वरनिवारणम् ॥ ९९ ॥

अर्थ-भुनीहुई मूंगके क्वाथमें खीलें, सहत और मिश्री डालकर सेवन करनेसे वमन, अतीसार, तृषा, दाह और पित्तज्वर दूर होता है ॥ ९९ ॥

मुद्गादिपेय.

भृष्टदालीकृता मुद्गाः शाली लाजाश्च धान्यकम् ॥
जीरकं सैन्धवं तोयमेभिः पेयं प्रशस्यते ॥ १०० ॥

अर्थ-भुनीहुई मूंगकी दालमें शालिधानकी खीलें, धनियां, जीरा और सेंधा नमक डालकर सिद्ध कियेहुए पेयसंज्ञक पदार्थका सेवन करना ज्वररोगीको हितकारी है ॥ १०० ॥

ज्वररोगीको योग्य शाकान्न.

पटोली वास्तुका मेथी तुण्डीरी शतपुष्पिका ॥

शालीतंदुलजः शाकः ज्वरिणामुपकारकः ॥१०१॥

अर्थ–परवल, वथुआ, मेथी, कौआठोडी सौंफ और शालिचावल यह सब ज्वररोगींको हितकारी है॥ १०१ ॥

अभिचारादिज्वरोंकी उत्पत्ति और चिकित्सा.

मन्त्रौषधक्रियायन्त्रैरभिचारज्वरो भवेत् ॥
वृक्षारामतडागेषु देवतायतनेषु च ॥ १०२ ॥

अर्थ–मंत्रसाधनसे, औषधिप्रयोगसे अथवा किसी प्रकारकी मंत्रक्रियासे अभिचार ज्वर उत्पन्न होताहै विशेष करके वृक्ष, वगीचा और देवालय इत्यादि स्थानोंमें जानेसे भूतादिजनित ज्वर उत्पन्न होताहै, ॥ १०२ ॥

गोब्राह्मणयतीनां च पीडां कुर्वंति ये नराः ॥
तेषामेव प्रकोपेन विज्ञेयो दैविको ज्वरः ॥ १०३ ॥

अर्थ–जो मनुष्य गाय ब्राह्मण और यति आदियोंको दुःख देते हैं उनके उनके प्रकोपसे दैविक ज्वर उत्पन्न होते है ॥ १०३ ॥

वातजाद्या ज्वराः साध्याश्चत्वारो भेषजैर्बुधैः ॥
अपरेऽभीष्टदेवस्य सेवयेति प्रतिक्रिया ॥ १०४ ॥

अर्थ–पूर्वोक्त वातादिकसे उत्पन्न चार प्रकारके ज्वर तो चिकित्सा करनेसे साध्य होजाते हैं परन्तु अभिचारादिक ज्वर अपने इष्टदेवकी पूजाआदिके करनेसे दूर होते हैं ॥ १०४ ॥

औषधकी त्रिविध मात्रा.

श्रेष्ठा मध्याधमा मात्रा पलमर्द्धं तदर्धतः ॥
स्नेहे क्वाथौषधे सा तु द्विगुणार्द्धं विधीयते ॥१०५॥

अर्थ–पीछे जो ज्वररोगमें क्वाथ तैलादि कहे चुकेहैं उनकी मात्रा तीन प्रकारकी है श्रेष्ठ, मध्यम और अधम तहां स्नेह (तैल इत्यादि) की श्रेष्ठ मात्रा चार तोलेकी है, मध्यम मात्रा दो तोलेकी है और अधम मात्रा एक तोलेकी जाननी, क्वाथरूप औषधकी श्रेष्ठ मात्रा आठ तोलेकी, मध्यममात्रा चार तोलेकी और अधम मात्रा दो तोलेकी जाननी ॥ १०५ ॥

काथमें जलका प्रमाण.

औषधे कठिने मध्ये कोमले विहितं क्रमात् ॥
क्वाथाय निर्मलं तोयं षोडशाष्टचतुर्गुणम् ॥१०६॥

इति श्रीश्रीकण्ठसूरिविरचिते हितोपदेशे
द्वितीयः समुद्देशः ॥ २ ॥

अर्थ–जो काथकी औषध कठिन होयँ तो उसमें जल सोलह गुना डालना चाहिये, मध्यम होयँ तो आठगुना जल डालना चाहिये और कोमल होयँ तो चौगुना जल डालना चाहिये (काथके लिये औषध चार तोले लेवे और बालकके लिये काथकी औषधी दो तोले लेवे) ॥ १०६ ॥

इति श्रीपरमजैनाचार्य्यश्रीकण्ठसूरिविरचिते वैद्यकसारसंग्रहे हितोपदेशे
भिषग्वर–हरिशंकरात्मजशंकरलालकृतभाषाटीकायां ज्वरनिदान-
चिकित्सावर्णनं नाम द्वितीयः समुद्देशः ॥ २ ॥

अथ शिरोरोगाद्यधिकारः ।

शिरोरोगवर्णन.

अकालपलितं पीडा सूर्य्यावर्तार्द्धभेदकाः ॥
इत्यादयः शिरोरोगास्तान्यथादोषमाहरेत् ॥
पृथक्समस्तदोषासृक्कृमिभिश्च भवन्ति ते ॥ १ ॥

अर्थ–विना ही समय बालोंका सफेद होजाना, शिरमें पीडा, सूर्य्यावर्त्त, अर्धावभेद (आधाशीसी) इत्यादि शिरोरोगमें प्रथम दोषोंका निश्चय करके पश्चात् चिकित्सा करे यह शिरोरोग वात, पित्त और कफके भेदोंसे पृथकपृथक् तीन प्रकारके है, एवं सान्निपातिक, रुधिरजन्य और कृमिजन्य आदि भेदोंसे अनेक प्रकारका है ॥ १ ॥

वातजशिरोरोगलक्षण.

तत्र वातप्रकोपेन निर्निमित्तं शिरोव्यथा ॥ २ ॥

अर्थ—यहां जो शिरोरोगमें वायुका प्रकोप होय तो विना ही कारण शिरमें पीडा होतीहै ॥ २ ॥

पित्तकफज शिरोरोग लक्षण.

निशि तीव्रा तु पित्तेन वष्मौंष्ण्यं मूर्धधूमनम् ॥
कफजे कफपूर्णांगं सशूनाक्षि हिमं गुरु ॥ ३ ॥

अर्थ—यदि पित्तका प्रकोप होय तो रात्रिमें अत्यन्त पीडा होय, शिर गरम होय और शिरमें सन्तापकी समान वेदना होय, कफका प्रकोप होय तो माथा कफसे भराहुआ होय, नेत्र सूज जायँ, शिर ठण्डा और भारीसा जानपडे ॥ ३ ॥

त्रिदोषज शिरोरोग लक्षण.

सर्वजे सर्वरूपाणि रक्तोत्थः पित्तलक्षणः ॥
स्पर्शासहत्वं शिरसो रुजस्तीव्रतरा तथा ॥ ४ ॥

अर्थ—जो सर्व दोषोंसे शिरोरोग हुआ होय तो सर्वलक्षण होतेहैं, जो रुधिरसे शिरोरोग हुआ होय तो उसमें पित्तके लक्षण होतेहैं और उसको स्पर्श न सहाजावै और अत्यन्त तीव्रवेदना होती है ॥ ४ ॥

शिरोरोगकी चिकित्सा.

मांसी महौषधं कुष्ठं वचा गन्धर्वहस्तकः ॥
पिष्ट्वा तुषोदकैर्लेपः सतैलो मस्तकार्तिहा ॥ ५ ॥

अर्थ—जटामांसी (बालछड) सोंठ, कूठ, वच, और अण्डकी जड इन सबके समान भागोंको कांजीमें पीसकर तेलमें मिलाकर लेप करनेसे शिरकी पीडा दूर होतीहै ॥ ५ ॥

एरण्डशिग्रुनिर्गुण्डीविशाखानां दलानि च ॥
उष्णानि मस्तके बध्वा शिरसोर्तिं विनाशयेत ॥ ६ ॥

अर्थ-अण्ड, सैजिना निर्गुण्डी और पुनर्नवाके पत्ते इन औषधियोंको पीसकर गरम करके बांधनेसे शिरकी पीडा दूर होतीहै ॥ ६ ॥

गिरिकर्णीफलं मूलं सजलं नस्यमाचरेत् ॥
मूलं वा बन्धयेत्कर्णे निहन्त्यर्द्धशिरोव्यथाम् ॥ ७ ॥

अर्थ-कोइलीके फल और जडको जलमें पीसकर सुंघानेसे आधाशीसी दूर होतीहै अथवा कोइलीकी जडको कानोंमें बांधनेसे आधाशीसी दूर होतीहै ॥ ७ ॥

गुडः करञ्जबीजं च नस्यमुष्णजलैर्हितम् ॥
मरिचैर्भृङ्गजैर्द्रवैर्लेपो वा हन्ति तां व्यथाम् ॥ ८ ॥

अर्थ-गुड और करंजके बीजोंको गरम जलमें पीसकर सूंघनेसे आधाशीसी दूर होतीहै. भांगरेके रसमें काली मिरचोंको पीसकर लेप करनेसे आधाशीसी दूर होतीहै ॥ ८ ॥

कुङ्कुमं मधुयष्टी च सिता घृतगुणोत्तरम् ॥
सप्ताहेन कृते नस्ये दाहं हन्ति शिरोरुजम् ॥ ९ ॥

अर्थ-केशर एक तोला, मुलैठी दो तोले मिश्री चार तोले और घी ८ तोले लेवे, इन सबको समान भाग लेकर पीसकर सात दिन तक सूंघनेसे दाह और शिरकी पीडा दूर होती है ॥ ९ ॥

शिग्रुपत्ररसैर्मर्द्यं मरिचं मूर्ध्नि शूलजित् ॥
मर्द्यं वातारितैलं वा हन्ति सद्यः शिरोव्यथाम् ॥ १० ॥

अर्थ-सैजिनेके पत्तोंके रसमें मिरचोंको पीसकर मस्तकपर मलनेसे शिरका शूल दूर होताहै अथवा अण्डीके तेलको शिरपर लेप करनेसे मस्तककी पीडा तत्काल दूर होती है ॥ १० ॥

स्वेदनं घृतगोधूमैर्निर्गुण्ड्याः क्वथितेन वा ॥
सन्निपातोद्भवां हंति पुराणघृतपानकैः ॥ ११ ॥

अर्थ-घी, गेंहू अथवा निर्गुण्डीके काथसे मस्तकको स्वेद देनेसे अथवा पुराने घीको पीनेसे सन्निपातसे उत्पन्नहुई मस्तककी पीडा दूर होतीहै ॥ ११ ॥

शुण्ठ्या नस्यमजाक्षीरं शिरोर्तिं नाशयेत्क्षणात् ॥
कुङ्कुमं घृतसंयुक्तं नस्याद्धन्ति शिरोऽव्यथाम् ॥१२॥

अर्थ–सोंठको बकरीके दूधमें पीसकर सूंघनेसे तत्काल मस्तककी पीडा दूर होतीहै केशर और घीको एकत्र करके सूंघनेसे मस्तककी पीडा दूर होतीहै॥१२॥

पारदं मर्दयेन्निष्कं कृष्णधत्तूरकैर्द्रवैः ॥
नागवल्लीद्रवैर्वाथ वस्त्रखण्डं प्रलेपयेत् ॥ १३ ॥

अर्थ–एक पैसाभर पारेको लेकर उसको काले धतूरेके रसमें अथवा नागरबेलके पानोंके रसमें मर्दन करे पश्चात् उस पारेकी लुगदीको लेकर एक कपडे पर फैलाकर तीन प्रहर तक शिरपर धारण करनेसे निःसन्देह शिरकी समस्त जूं और लीखें गिरजाती हैं॥ १३ ॥

तद्वस्त्रं मस्तके वेष्ट्य धार्यं यामत्रयं ततः ॥
यूकाः पतंति निःशेषाः सलिक्षा नात्र संशयः ॥१४॥
जातीपुष्पदलं मूलं कृष्णागोमूत्रपेषितम् ॥
लेऽपोयं सप्तरात्रेण दृढकेशकरः परः॥ १५ ॥

अर्थ–चमेलीके पत्ते और जड तथा पीपल इनको गायके मूत्रके साथ पीसकर लेप करनेसे सात दिन में ही बाल दृढ होजातेहैं॥ १४ ॥ १५ ॥

शृंगाटं त्रिफला भृङ्गी नीलोत्पलमयो रजः ॥
सूक्ष्मचूर्णं समं कृत्वा पचेत्तैलं चतुर्गुणम् ॥
तल्लेपाच्च दृढाः केशाः कुटिलाः सरला अपि ॥१६॥

अर्थ–सिंघाडे, त्रिफला, भांगरा, नील कमल और लोहचूर्ण इन सब औधियोंको समान भाग लेकर बारीक चूर्णकरके चौगुने तेलमें डालकर पकावे इस तेलको शिरमें मलनेसे बाल बढजातेहैं तथा काले और दृढ होजातेहैं॥१६॥

भल्लातकं च बृहती गुञ्जामूलं फलं तथा ॥
मधुना सह लेपेन खालित्यं याति दुःसहम् ॥ १७ ॥

अर्थ—भिलावां, कटेरी, चौंटलीकी जड और चौंटली इन सबका चूर्ण करके सहत मिलाकर लेप करनेसे दुःसाध्य खालित्य रोग दूर होता है ॥ १७ ॥

गुञ्जामूलफलश्चूर्णं कण्टकारिफलद्रवैः ॥
तेन लेपेन हन्त्याशु इन्द्रलुप्तं सुदुःसहम् ॥ १८ ॥

अर्थ—चौंटलीकी जड और फल इन दोनोंका चूर्ण करके कटेरीके पत्तोंके रसमें खरल करे पश्चात् इसका लेप करनेसे अत्यन्त दुःसाध्य इन्द्रलुप्त नष्ट होता है ॥ १८ ॥

अथ कर्णरोगाधिकारः ।

कर्णरोग निदान.

करोति विगुणो वायुर्मलं संगृह्य कर्णयोः ॥
सकफः पाकबाधिर्यशूलस्रावादिकान्गदान् ॥ १९ ॥

अर्थ—विगुण हुआ वायु कफके साथ मिलकर कानके मैलको इकट्ठा करके कानमें पाक, बधिरता, शूल और स्राव इत्यादि रोगोंको उत्पन्न करताहैं ॥ १९ ॥

कर्णरोगचिकित्सा.

कर्णशूलहरः क्षिप्तो लवणार्द्रकयो रसः ॥
दन्तैस्तु चर्वयेन्मूलं नन्द्यावर्त्तपलाशयोः ॥ २० ॥
तल्लालापूरिते कर्णे ध्रुवं गोमक्षिका व्रजेत् ॥
अर्कपत्रद्रवैस्तैलपूरणात्कर्णशूलजित् ॥ २१ ॥

अर्थ--अदरखका रस और सेंधानमक कानमें डालनेसे कर्णशूल नष्ट होता है तगर और ढाककी जडको दांतोंसे चावकर उसका रस कानमें डालनेसे कानमें प्रविष्ट हुए कृमि इत्यादि पतित होजाते हैं आकके पत्तोंके रसमें तेलको पकाकर कानमें डालनेसे कानकी चीस दूर होती हैं ॥ २० ॥ २१ ॥

लशुनस्य रसं कोष्णं पूरयेच्छब्दशान्तये ॥
मेघनादरसैः पूर्णे कर्णे पूयं प्रणश्यति ॥ २२ ॥

अर्थ—लशुनके रसको निकालकर कुछ गरम करके कानोंमें डालनेसे कानमें शब्दका होना दूर होताहै चौलाईके रसको कानमें डालनेसे कानका वहना बंद होताहै ॥ २२ ॥

मुसलीबाकुचीचूर्णं खादेद्बाधिर्यशान्तये ॥
कनकं शिग्रुलवणमारनालेन पेषयेत् ॥ २३ ॥
कर्णमूलस्थितं स्फोटं सोष्णं लेपाद्विनाशयेत् ॥
मुसलीकन्दचूर्णं च महिषीनवनीततः ॥ २४ ॥
लोडयेद्रोधयेद्भाण्डे धान्यराशौ निवेशयेत् ॥
सप्ताहादुद्धृतं लेपात्कर्णपालीं विवर्द्धयेत् ॥२५॥

अर्थ—मूसली और बावचीको समान भाग लेकर चूर्ण करके सेवन करनेसे बहरापन दूर होताहै. निर्मलीके फल, सैंजिना और सेंधानमक इन सबका चूर्ण करके कांजीमें खरल करे । पश्चात् कुछ गरम करके कानके जडमें लेप करनेसे कानका स्फोटक दूर होताहै, मूसलीके कन्दका चूर्ण करके भैंसके मक्खनमें मिलाकर पश्चात् एक मिट्टीके पात्रमें रखकर मुख बंद करके धानोंके ढेरमें गाढ देवे फिर सात दिनमें उखाडकर लेप करनेसे कानकी पाली बढजातीहै॥२३–२५॥

अश्वगन्धा वचा कुष्ठं गजपिप्पलिका समम् ॥
महिषीनवनीतेन लेपात्कर्णौ विवर्द्धते ॥ २६ ॥

अर्थ—असगन्ध, वच, कूठ और गजपीपल इन सबके समान भागोंका चूर्ण करके भैंसके मक्खनमें मिलाकर लेप करनेसे कानकी वृद्धि होतीहै ॥ २६ ॥

गुञ्जामूलफलं चूर्णं महिषीक्षीरसंयुतम् ॥
शृतं दधि ततः कुर्यान्नवनीतं तदुत्थितम् ॥ २७ ॥
कर्णस्य लेपान्नित्यं च वर्द्धते नात्र संशयः ॥
अश्वगन्धासमं लोध्रं तत्समा गजपिप्पली ॥ २८ ॥
चतुर्भागमितं तोयं तिलतैलं च भागिकम् ॥

तैलशेषं पचेत्सर्वं तेन लेपे कृते सति ॥ २९ ॥
स्तनयोः कर्णपाल्योश्च स्थूलता विस्तृता भवेत् ॥३०॥

अर्थ–चौंटलीकी जड और चौंटली इन दोनोंका चूर्ण करके भैंसके दूधमें मिलाकर दही जमादेवे फिर उस दहीको मथकर घी निकाललेवे उस नवनीत घृतका लेपकरनेसे कानकी वृद्धि होतीहै असगन्ध, लोध और गजपीपल इन तीनोंको समान भाग लेकर चौगुने जलमें क्राथ बनावे फिर इसमें एक भाग तिलका तेल डालकर पकावे जब जल जलकर केवल तेल ही शेष रहजाय तब उतारकर छानलेवे इस तैलका लेप करनेसे स्तन और कर्णकी पालियोंमें स्थूलता बढजातीहै ॥ २७–३० ॥

भल्लातं दाडिमीछल्लं रिङ्गिणीमूलकं त्रयम् ॥
पक्वं शिरीषतैलेन लेपनात्कर्णवृद्धिकृत् ॥ ३१ ॥

अर्थ–भिलावां, अनारकी छाल, तथा कटेरीकी जड इन तीनों औषधियोंको सरसोंके तेलमें पकावे इस तैलका लेप करनेसे कर्णकी पाली बढजाती हैं ॥३१॥

कुष्ठाश्वगन्धागजपिप्पलीनां चूर्णं महिष्या नवनीतपक्कम् ॥ कर्णप्रवृद्धिं स्तनतुङ्गतां च काठिन्यमुच्चैर्विदधाति लेपात् ॥ ३२ ॥

अर्थ–कूठ, असगन्ध और गजपीपल इनका चूर्ण करके भैंसके नैनी घीमें पकावे तत्पश्चात् इसका लेप करे तो कानकी पाली बढजातीहैं तथा स्तन कठिन होजाते है ॥ ३२ ॥

रिङ्गिणी दुल्लरी पिष्टा वारिणा वाजिगन्धया ॥
कर्णयोस्तनयोर्वृद्धिं कुर्वन्त्येते प्रलेपतः ॥ ३३ ॥

अर्थ–कटेरी, दुल्लरी और असगन्ध इनको एकत्र जलमें पीसकर लेप करनेसे कान तथा स्तनोंकी वृद्धि होतीहै ॥ ३३ ॥

सतैलककपित्थेन सव्रणा कर्णपालिका ॥
लिप्ता पश्चाद्धवाचूर्णयुक्ता सा निर्व्रणा भवेत् ॥ ३४ ॥

अर्थ-कैथके सूखे चूर्णमें तेल मिलाकर लेप करे फिर उसके ऊपर धायके चूर्णको छिडके तो कर्णपाली व्रणरहित हो जातीहै ॥ ३४ ॥

शुण्ठी राजिकयोश्चूर्ण गृहधूमोर्कभाजने ॥
घृतं तक्रान्वितं लेपान्निर्व्रणं कुरुते श्रुतिम् ॥ ३५ ॥

अर्थ-सोंठ और राईका चूर्ण करके उसमें घरका धुआँ मिलाकर आकके पात्रमें रक्खे पश्चात् उसमें घी और छांछ मिलाकर लेप करे तो कर्णपाक रोग दूर होताहै ॥ ३५ ॥

अथ नासिकारोगाधिकारः ।

नासिकारोगवर्णन.

अर्शोस्रस्रावपिडिकाः पूयस्रावश्च पीनसः ॥
प्रतिश्यायश्छलिकाश्चेत्याद्या नासामयाःस्मृताः॥३६॥

अर्थ-नासार्श, नासास्र, नासास्राव, नासापिंडिका, पूयस्राव, पीनस, प्रतिश्याय और छलिका ये सब नासिकाके रोग हैं ॥ ३६ ॥

नासिकारोगकी चिकित्सा.

वारिपिष्टं त्रयं दूर्वा कुसुम्भं दाडिमीफलम् ॥
नस्यतो नासिकारक्तं स्तम्भयेत्प्रवहद्द्रुतम् ॥ ३७ ॥

अर्थ-दूब, कसूमके फूल और अनार इन तीनों औषधियोंको जलमें पीसकर सुंघानेसे नाकमेंसे वहता हुआ रुधिर शीघ्र ही बंद होजाता है ॥ ३७ ॥

कटुतुम्बीलताकन्दो रसो दूर्वारसान्वितः ॥
नस्यतो नासिकारक्तं स्तम्भयेत्प्रवहद्ध्रुवम् ॥ ३८ ॥

अर्थ-कडवी तोंबीके वेलकी जडको ठण्डे जलमें घिसकर सुंघानेसे नाकका वहताहुवा रुधिर अवश्य बंद होजाताहै ॥ ३८ ॥

कटुतुम्बीलताकन्दो घृष्टः शीतेन वारिणा ॥
नस्यतो हन्ति नासाया रक्तवाहं न संशयः ॥ ३९ ॥

अर्थ—कडवी तोंम्बीके वेलका रस ये दोनों मिलाकर सुंघानेसे नाकका वहता हुआ रुधिर एक ही प्रहरमें बंद होजाता है ॥ ३९ ॥

जम्बुपत्रयुतो दूर्वारसो दाडिमपुष्पयुक् ॥
नासाया नस्यतो रक्तं पतद्धारयतेऽनिशम् ॥ ४० ॥

अर्थ—जामुनके पत्ते, दूब और दाडिमके फूल इनको एकत्र पीसकर रस निकालकर नाकमें सुंघानेसे निरन्तर वहताहुआ रुधिर भी बंद होजाताहै ॥ ४० ॥

व्याघ्रीदन्तीवचाशिग्रुसुरसाव्योषसैन्धवैः ॥
पाचितं नावनात्तैलं पूतनासागदं हरेत् ॥ ४१ ॥

अर्थ—कठेरी, दन्तीकी जड, वच, सैंजिना, तुलसी, सोंठ, मिरच, पीपल और सैंधानमक इन सबका कल्क बनाकर उसमें तिलका तेल डालकर पकावे इस तेलकी एक बिन्दु नाकमें डालनेसे नाकमें वहताहुआ पीब बंद होजाता है ॥ ४१ ॥

निपतद्धारयेद्रक्तं नासाया गोघृतान्विता ॥
शर्करा नस्यतोवश्यमापदं पद्मिनी तथा ॥ ४२ ॥

अर्थ—जिसप्रकार पद्मावती देवीका स्मरण करनेसे आपत्ति दूर होतीहै उसी प्रकार गायके घीमें मिश्री मिलाकर सुंघानेसे वहताहुआ रुधिर अवश्य बंद होजाता है ॥ ४२ ॥

शय्यारूढो जलं शीतं निद्राकालेऽपि यः पिबेत् ॥
तस्य पीनसजं दुःखं शमं याति दिनत्रयात् ॥ ४३ ॥

अर्थ—जो मनुष्य शय्यापर शयन करते समय शीतल जल पीताहै उसका पीनसरोग तीन दिनमें ही दूर होताहै ॥ ४३ ॥

त्रिफलापिप्पलीचूर्णं मधुना लीढमाशु तत् ॥
पीनसं वा महाश्वासं सशोफं शमयेद्द्रुतम् ॥ ४४ ॥

अर्थ—त्रिफला और पीपलके चूर्णको सहतमें मिलाकर चाटनेसे पीनसरोग शीघ्र ही दूर होजाता है तथा इस औषधके सेवन करनेसे सूजन और महास्वास भी शीघ्र ही दूर होजाताहै ॥ ४४ ॥

विगतघननिशीथे प्रातरुत्थाय नित्यं
पिबति खलु नरो यो घ्राणरन्ध्रेण वारि ॥
स भवति मतिपूर्णश्चक्षुषा तार्क्ष्यतुल्यो
वलिपलितविहीनो रोगमुक्तश्चिरायुः ॥ ४५ ॥

अर्थ–जो मनुष्य नित्य रात्रिके अंतमें प्रातःकाल उठकर नासिकाके छिद्रके द्वारा जलपान करतेहैं वह अतीव मतिपूर्ण गरुडकी समान नेत्रवाले और वलिपलित आदिरोगोंसे रहित होकर चिरायु होतेहैं ॥ ४५ ॥

मरिचं दधिमिश्रेण गुडौषधेन शाम्यति ॥
पीनसो याति गोधूमक्षिप्राभोजनतोऽथवा ॥ ४६ ॥

अर्थ–दहीमें मिरचोंका चूर्ण मिलाकर चाटनेसे अथवा गुडमें सोंठ मिलाकर खानेसे और गेहूंकी दलिया खानेसे पीनसरोग दूर होता है ॥ ४६ ॥

शंखगोकर्णयोः कल्कौ धातक्या मधुकस्य च ॥
घ्राणास्रावे सृजि प्रोक्तो योषित्क्षीरेण योजितः ॥ ४७ ॥

अर्थ–शंख, चुरनहार, धायके फूल और मुलैठी इन औषधियोंका कल्क बनाकर उसमें स्त्रीका दूध मिलाकर सुंघानेसे नाकसे निकलता हुआ रुधिर बंद होजाताहै ॥ ४७ ॥

नस्यं दाडिमपुष्पोत्थरसो दूर्वोद्भवोऽथवा ॥
आम्रास्थिजः पलाण्डोर्वा नासिकास्रुतिरक्तनुत् ॥४८॥

अर्थ–दाडिमके फूलोंका रस अथवा दूबका रस, एवं आमका रस तथा प्याजका रस इनमेंसे किसी एक रसके सुंघानेसे नाकसे बहता हुआ रुधिर बंद होजाता हैं ॥ ४८ ॥

गृहधूमकणादारुक्षारनक्ताह्वसैन्धवैः ॥
सिद्धं शिखरिबीजैश्च तैलं नासागदापहम् ॥ ४९ ॥

अर्थ—घरका धुआँ, पीपल, देवदारू, जवाखार, हल्दी, सेंधानमक और चिरचिटा इन औषधियोंके द्वारा बनायाहुआ तेल नाकमें डालनेसे नासिका-रोग दूर होजाताहै ॥ ४९ ॥

अभयादाडिमीपुष्पलांगलं पिष्टमम्भसा ॥
नस्यतो हन्ति नासाया रक्तस्रावमिति श्रुतम् ॥ ५० ॥

अर्थ—हरड, दाडिमके फूल और कलिहारी इन सबको जलमें पीसकर सुंघानेसे नाकसे वहताहुआ रुधिर बंद होता हैं ॥ ५० ॥

अथ मुखरोगाधिकारः ।

मुखसे रुधिर निकलनेकी चिकित्सा.

पिष्ट्वा तण्डुलतोयेन कुस्तुम्बरुशिफां मुखात् ॥
स्तम्भयेन्निपतद्रक्तं प्रातः पीतं तु वेगतः ॥ ५१ ॥

अर्थ—धनियोंकी जडको चावलोंके जलमें पीसकर प्रातःकाल पीनेसे मुखमेंसे वेगपूर्वक गिरताहुआ रुधिर बंद होजाताहै ॥ ५१ ॥

उदुम्बरशिफां पिष्ट्वा पीता तण्डुलवारिणा ॥
पतद्रक्तं मुखान्नूनं वारयत्यतिवेगतः ॥ ५२ ॥

अर्थ—गूलरकी जडको चावलोंके जलमें पीसकर पीनेसे अत्यन्त वेगसे गिरताहुआ रुधिर तत्काल ही बंद होजाताहै ॥ ५२ ॥

आटरूषकपत्राणां रसो मधुसमन्वितः ॥
शोणितं स्तम्भयेदास्यात्प्रातः पीतं पतद्ध्रुवम् ॥ ५३ ॥

अर्थ—अडूसेके पत्तोंके रसमें सहत मिलाकर प्रातःकालके समय पीनेसे मुखसे गिरताहुआ रुधिर निश्चय बंद होजाताहै ॥ ५३ ॥

स्वरभङ्गकी चिकित्सा.

विभीतं सैंधवं कृष्णा चूर्णं पीतं वराम्भसा ॥
स्वरभंगं तथा कृच्छ्रशब्दोच्चारं च वारयेत् ॥ ५४ ॥

अर्थ–बहेडेके फलकी छाल, सेंधानमक और पीपल इन तीनों औषधियोंका चूर्ण करके त्रिफलेके जलके साथ पीनेसे अत्यन्त बैठाहुआ स्वर भी स्वच्छ होजाताहै तथा अत्यन्त जोरसे बोलनेपर भी अवाज नहीं बैठतीहै ॥ ९४ ॥

कृच्छ्रशब्दं स्वरभंगं शिवाचूर्णं निवारयेत् ॥
गोक्षीरं संयुतं पीतं शीतं वारि यथा तृषाम् ॥ ९९ ॥

अर्थ–जिस प्रकार शीतल जलको पीनेसे तृषा दूर होतीहै उसीप्रकार आमलोंके चूर्णको गायके दूधके साथ पीनेसे बैठाहुआ स्वर और स्वरभंग दूर होताहै ॥ ९९ ॥

मुखपाककी चिकित्सा.

गुडो लवणसिद्धार्थहरिद्रामरिचं कणा ॥
चूर्णमुष्णाम्भसा वक्रे धृतं तद्रोगनाशनम् ॥ ९६ ॥

अर्थ–गुड, सेंधानमक, सरसों, हल्दी, मिरच और पीपल इन औषधियोंका चूर्ण करके गरम जलके साथ मुखमें रखनेसे मुखरोग दूर होताहै ॥९६॥

तिलतैलान्वितः पक्को कटुबिम्बीदलोद्भवः ॥
रसो हंति मुखान्तस्थः पक्कतुण्डमसंशयम् ॥ ९७ ॥

अर्थ–कडवी कन्दूरीके पत्तोंके रसमें तिलका तेल मिलाकर पकावे फिर उस तेलको मुखमें रखनेसे मुखपाक अवश्य दूर होजाताहै ॥ ९७ ॥

जातीपत्रामृताद्राक्षादेवदारुफलत्रिकैः ॥
क्वाथः क्षौद्रयुतः पीतो गण्डूषो मुखपाकजित् ॥ ९८ ॥

अर्थ–चमेलीके पत्ते, गिलोय, दाख, देवदारु और त्रिफला इन औषधियोंका क्वाथ बनाकर सहत मिलाकर कुल्ले करनेसे मुखपाक रोग दूर होताहै ॥९८॥

बालकद्वितयं कृष्णं बुब्बुलं शतपत्रकम् ॥
एतल्लेपेन नश्यन्ति स्फोटका रसनोद्भवाः ॥
मुखरोगं निहन्त्याशु निशाक्वाथो मुखे धृतः ॥ ९९ ॥

अर्थ-खस, सुगन्धवाला, बबूलका रस और कमल इन सबको एकत्र पीसकर लेप करनेसे जिह्वाके ऊपर उत्पन्नहुए फोडे, फुन्सी दूर होतेहैं । हल्दीका क्राथ बनाकर मुखमें भरकर कुल्ले करनेसे मुख रोग शीघ्र ही दूर होजाताहै॥५९॥

दन्तरोग चिकित्सा.

चर्विता दन्तसंलग्ना गुडूची दन्तशूलहृत् ॥ ६० ॥
चर्विते विधृते वक्रे जातीपत्रे विनश्यति ॥
मुखरुक्केशरोद्भूतैर्बीजैः स्युर्दशना दृढाः ॥ ६१ ॥

अर्थ -गिलोयको चावकर दांतोमें रखनेसे दन्तरोगकी पीडा दूर होती है चमेलीके पत्तोंको चावकर मुखमें रखनेसे मसूढोंका रोग दूर होताहै और इसी प्रकार नागकेशरके बीजोंको चावकर मुखमें रखनेस दांत दृढ होजाते हैं ॥ ६०॥ ६१॥

शृंगवेररसोपेतं केशरं दन्तचर्वितम् ॥
दन्तजन्तून्निहन्त्याशु करोति दशनान्दृढान् ॥ ६२ ॥

अर्थ-अदरखके रसके साथ नागकेशरको चावनेसे दांतके कृमि तत्काल ही दूर होजातेहै और दांत अत्यन्त मजबूत होजातेहैं ॥ ६२ ॥

चर्वित्वा विधृतं हंति दन्तकीटकवेदनाम् ॥
गुञ्जावराहकर्णीयं मूलमेकैकमुद्धृतम् ॥ ६३ ॥

अर्थ-चौंटलीकी जड अथवा बिदारीकी जडको उखाडकर एक किसीको लेकर दांतकी जडमें रखनेसे कृमिकी पीडा दूर होतीहै ॥ ६३ ॥

नीलीमूलं स्नुहीमूलमेकैकं दन्तचर्वितम् ॥
विधृतं हन्ति दन्तानां कीटं वेदनया सह ॥ ६४ ॥

अर्थ-नीलकी जड अथवा थूहरकी जडको दांतोंसे चवाकर मुखमें रखनेसे दांतकी पीडा तथा दांतके कृमि दूर होजातेहैं ॥ ६४ ॥

खदिरो जातिपत्राणि छल्लिर्हैवजवृक्षजा ॥
टिंटुबीजैः कृतं तैलं गण्डूषो दन्तदार्ढ्यकृत् ॥६५॥

अर्थ-खैर, चमेलीके पत्ते, हैवजवृक्षकी छाल (चोक) और अरलुके बीज इन औषधियोंके कल्कके द्वारा तेल बनावै इस तेलके कुल्ले करनेसे दांत दृढ होजाते हैं॥ ६९ ॥

गुडूचीवारिणा पिष्टा जलैर्मुखधृतैर्व्रजेत् ॥
दन्तशूलं दृढास्ते स्युः स्वेदिता द्युमणेर्दलैः ॥ ६६ ॥

अर्थ-गिलोयको जलमें पीसकर उस जलको मुखमें भरकर कुल्ले करनेसे दांतोंका शूल दूर होजाताहै और दांत दृढ हो जातेहैं इसी प्रकार आकके पत्तोंको चबाकर दांतोंमें रखनेसे दांत दृढ होजातेहैं ॥ ६६ ॥

आटरूषरसापिष्टकसेरुरसपूरिते ॥
कर्णे दन्तस्थिता यान्ति कृमयो निखिला द्रुतम्॥६७॥

अर्थ-अडूसेके रसमें भद्रमोथेको पीसकर कानमें डालनेसे दांतमें रहनेवाले सर्वप्रकारके कृमि नाशको प्राप्त होतेहैं॥ ६७ ॥

सिन्दुवारविडङ्गार्कक्षीरं लवणसंयुतम् ॥
यावकापिष्टमेतच्च कृमिहृद्दन्तलेपनम् ॥ ६८ ॥

अर्थ-निर्गुण्डी, वायविडंग, आकका दूध और सेंधानमक इन सबको लाखके रसमें पीसकर दांतोंमें लेप करनेसे दातोंके कृमि नष्ट होतेहैं॥ ६८ ॥

अथोष्ठरोगाधिकारः ।

ओष्ठचिकित्सा.

गैरिकाम्भो घृतं तैलं सर्जिसैन्धवसिक्थकम् ॥
वरुणाम्भःशृतं पक्वमोष्ठपाकव्रणापहम् ॥ ६९ ॥

अर्थ-गेरूका पानी, घी, तेल, सज्जीखार सेंधानमक और मोम इन सबको वरनेके क्वाथमें पकावे पकनेपर इस मरहमको ओष्ठके ऊपर लगानेसे ओष्ठपाक दूर होताहै ॥ ६९ ॥

सिक्थकं यावकोपेतं कटुतैलेन पाचितम् ॥
ओष्ठे विपादिका हंति लेपतो वेगतोऽखिलान् ॥७०॥

अर्थ-मोम और लाखका रस इन सरसोंके तेलमें मिलाकर पकावे इस मरहमको ओष्ठके ऊपर लगानेसे ओठोंका फटना, व्रण और ओठोंके समस्त रोग शीघ्र ही नष्ट होजाते हैं ॥ ७० ॥

सिद्धार्थतैलसंलिप्ततापिताम्रस्य पल्लवैः ॥
अधरे स्वेदिते शीघ्रं समं याति विपादिका ॥७१॥

अर्थ-आमके पत्तोंके ऊपर सरसोंका तेल लगाकर और गरम करके ओठोंके ऊपर स्वेददेनेसे फटतेहुए ओठ शीघ्र ही आराम होजातेहैं ॥ ७१ ॥

मुखकी दुर्गंधिका यत्न.

बालाह्वमदनं जातीफलं मरुकषाभिधम् ॥
गुटिकास्ये धृता हंति पूतिगन्धं सुदारुणम् ॥७२॥

अर्थ-सुगन्धवाला , मैंनफल, जायफल, और मरुवा इन सब औषधियोंकी गोली बनाकर मुखमें रखनेसे अत्यन्त दुर्गन्धि भी दूर होजातीहै ॥ ७२ ॥

जातीपत्राणि जातेश्च फलं संपीड्य वारिणा ॥
तस्य लेपे कृते याति मुखदौर्गंध्यलाञ्छनम् ॥७३॥

अर्थ-जावित्री और जायफल इनको जलमें पीमकर लेप करनेसे मुखमें अत्यन्त दुर्गन्धि आती होय तो भी दूर होजाती है ॥ ७२ ॥

इंगुदीफलमज्जा वा पिष्टा शीतेन वारिणा ॥
प्रलेपो नाशयत्येव मुखदौर्गन्ध्यलाञ्छनम् ॥७४॥

अर्थ-अथवा हिंगोटकी मींगको शीतल जलमें पीसकर लेप करनेसे मुखकी दुर्गन्धी दूर होजाती है ॥ ७४ ॥

चूनेसे फटेहुए मुखकी चिकित्सा.

तांबूलीतीव्रचूर्णेन दग्धेऽन्तर्वदने सति ॥

तैलस्य काञ्जिकस्याथ गण्डूषो हंति वेदनाम् ॥७५॥

अर्थ—पानमें चूना अत्यन्त होनेसे मुखके भीतर छाले होजांय तो अथवा मुख फटजाय तो तेल और कांजीके कुल्ला करनेसे समस्त वेदना नष्ट होती है ॥७५॥

स्वरके शुद्ध होनेका यत्न.

जातीपत्रं कणा लाजा मातुलुंगदलं मधु ॥
एषां लेहे भवेन्नादः किन्नरस्वरतोऽधिकः ॥ ७६ ॥

अर्थ—जावित्री, पीपल, खीलै, विजौरे, नींबूके पत्ते और सहत इन सबका अवलेह बनाकर चाटनेसे किन्नर जातिके देवताओंसे भी अधिक स्वच्छ स्वर होजाता है ॥ ७६ ॥

मुखव्यंगकी चिकित्सा.

सिद्धार्थतिलजीराणां चूर्णं पिष्टं समांशतः ॥
दुग्धेन लेपतस्तस्य मुखव्यङ्गं विनश्यति ॥ ७७ ॥

अर्थ—सरसों, तिल और काला जीरा इन औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण करके दूधमें मिलाकर लेप करनेसे मुखके ऊपरके युवा अवस्थाके मुहासे दूर होजाते हैं ॥ ७७ ॥

बदरीफलबीजानि पिष्टानि मधुनाऽथवा ॥
गुडेन नवनीतेन तल्लेपो मुखरोगहृत् ॥ ७८ ॥

अर्थ—बेरकी मींगको सहतके साथ अथवा गुड और मक्खनको एकत्र पीसकर लेप करनेसे मुखकी झांईरोग दूर होजाताहै ॥ ७८ ॥

वरुणस्य त्वचं पिष्ट्वा छागीदुग्धेन तत्त्वचा ॥
मुखलेपे कृते याति कार्ष्ण्यं वा व्यंगलाञ्छनम् ७९॥

अर्थ—वरनाकी छालको बकरीके दूधमें पीसकर लेप करनेसे मुंहासे झाईं और दाग इत्यादि मुखरोग दूर होजाते हैं ॥ ७९ ॥

अथ गलरोगाधिकारः ।

गलरोगचिकित्सा.

श्वेतापराजितामूलमुद्धृतं सह सर्पिषा ॥
पीतं वा कन्धराबद्धं गण्डमालोपशांतिकृत् ॥८०॥

अर्थ—सफेद अपराजिताकी जडको उखाडकर घीके साथ पीसकर पीनेसे अथवा गलेमें बांधनेसे गंडमाला दूर होजातीहै ॥ ८० ॥

श्वेतापराजितामूलं विशालायाः शिफाऽथवा ॥
गोमूत्रसंयुता चैव गण्डमालाविनाशिनी ॥ ८१ ॥

अर्थ—सफेद अपराजिताकी जड अथवा इन्द्रायणकी जडको गायके मूत्रके साथ पीसकर लेप करनेसे गंडमाला दूर होतीहै ॥ ८१ ॥

छुच्छुन्दरीयुतं तैलं पाचितं तस्य लेपतः ॥
गण्डमालाऽतिघोराऽपि लेपभीतापसर्पति॥ ८२ ॥

अर्थ—छछुन्दरी नामक वनस्पतिको तेलमें पकाकर उस तेलका लेप करनेसे महाभयंकर गंडमाला भी लेपके भयसे दूर होजातीहै ॥ ८२ ॥

वल्लास्तैलयुता भुक्ता गण्डमालांविनाशिनः ॥
चित्रोद्धृतं गले बद्धं कुन्दमूलं निहन्ति ताम्॥८३॥

अर्थ—तेल और वाल खानेसे गंडमाला दूर होतीहै । कुन्दकी जडको चित्रा नक्षत्रमें उखाडकर गलेमें बांधनेसे गंडमाला दूर होतीहै ॥ ८३ ॥

ब्रह्मदण्डीशिफा सार्द्रा पिष्टा तन्दुलवारिणा ॥
स्फुटितां हन्ति वेगेन गण्डमालामतिद्रुतम् ॥८४॥

अर्थ—ब्रह्मदण्डीकी हरी जडका चावलोंके जलमें पीसकर फूटी हुई गंडमालाके ऊपर लेप करनेसे शीघ्र ही दूर होतीहै ॥ ८४ ॥

निर्गुण्डीमूलिका पिष्टा वरातोयेन सर्पिषा ॥
किंवा पराजितामूलं घृतपीतं निहंति ताम्॥ ८५ ॥

अर्थ—निर्गुण्डीकी जडको त्रिफलाके जलमें पीसकर घीके साथ पीनेसे गंडमाला दूर होतीहै अपराजिताकी जडको घीके साथ पीनेसे भी गंडमाला दूर होतीहै ॥ ८५ ॥

शेफालीमूलिका भुक्ता गलशुण्डीनिवारिणी ॥
उपजिह्वा शमं याति तच्छिराशोणिते गते ॥८६॥

अर्थ—हार शिंगारकी जड और रायसनको पीसकर जलके साथ पीनेसे गलशुंडी दूर होतीहै । उपजिह्वा रोगमें नसको छेदकर रुधिर निकलवानेसे उपजिह्वा रोग दूर होताहै ॥ ८६ ॥

तण्डुलोदकसंपिष्टभारंगीमूललेपतः ॥
गलगण्डः शमं याति यथा दुष्टोऽतिपीडितः॥८७॥

अर्थ—जिस प्रकार दुष्ट मनुष्य अत्यन्त पीडित करनेसे शांत होताहै उसीप्रकार भारंगीकी जडको चावलोंके जलमें पीसकर लेप करनेसे गलेके ऊपर उत्पन्न हुआ गलगंड दूर होताहै ॥ ८७ ॥

अजाम्भः कटुतैलं च तक्रसैन्धवसंयुतम् ॥
एतल्लेपो निहन्त्येव गलगण्डमसंशयम् ॥ ८८ ॥

अर्थ—बकरीका मूत्र, सरसोंका तेल, छाछ और सेंधा नमक इन सबको एकत्र करके लेप करनेसे गलगंड रोग अवश्य दूर होजाताहै ॥ ८८ ॥

हयमाररसो बीजं देवदारोः सुपाचितः ॥
निहंति नस्यतः स्वैरं गलरोगमसंशयम् ॥ ८९ ॥

अर्थ—कनेरका रस और देवदारुके बीज इन दोनोंको एकत्र पकाकर नास लेनेसे गलरोग निश्चय दूर होजातेहैं ॥ ८९ ॥

द्वौ क्षारौ त्रिफला व्योषविडंगं लवणान्वितम् ॥
चित्रकश्चेति चूर्णानि गोमूत्रे लेहवत्पचेत् ॥ ९० ॥

अर्थ—जवाखार, सज्जीखार, हरड, बहेडा, आमला, सोंठ, मिरच, पीपल,

बायविडंग, सेंधा नमक और चीता इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण करके गायके मूत्रमें लेहकी समान पकाले जब यह पककर कठिन होजाय तब वृत्त बनावे ॥ ९० ॥

एषा गोमूत्रिकावर्तिर्गलरोगविनाशिनी ॥
शस्त्रसाध्यानपि व्याधीन्निहन्त्येव न संशयः ॥९१॥

अर्थ–यह बत्ती गलरोगोंको दूर करनेवाली है जो गलरोग शस्त्रके विना छेदन किये आरोग्य नहीं होते उन रोगोंके यह बत्ती अवश्य दूर करती है ॥ ९१ ॥

वत्सकातिविषादारुपाठातिक्ताम्बुदाः समाः ॥
गोमूत्रक्वथिताः पेया गलरोगे समाक्षिकाः ॥९२॥

अर्थ–कुडेकी छाल, अतीस, देवदारु, पाढ, कुटकी और नागरमोथा यह सब समान भाग लेकर गायके मूत्रमें क्वाथ बनावे फिर इसमें सहत मिलाकर पीनेसे गलरोग दूर होता है ॥ ९२ ॥

गलशोषचिकित्सा.

पटोलीमूलिका साद्रा तूवरी मधुयष्टिका ॥
क्रमुकं चिक्कणं निंबुछल्लो च खदिरान्विता ॥९३॥
कटुकी तवराजोथ क्वाथोऽमीषां सुशीतलः ॥
गण्डूषकरणाद्धंति गलशोषं सुदारुणम् ॥ ९४ ॥

अर्थ–परवलकी गीली जड, सोरटकी मट्टी, मुलैठी, चिकनी सुपारी, नींबूकी छाल, खैरसार कुटकी और तुरंजवीन इन सबका क्वाथ बनाकर शीतल करके कुल्ला करे तो अत्यन्त दारुण गलशोष दूर होताहै ॥ ९३ ॥ ९४ ॥

श्रीखण्डं पद्मकं मुस्ता धान्यकं निम्बुवल्कलम् ॥
कूष्माण्डं खदिरो दूर्वामूलं च तवराजकम् ॥९५॥
अष्टावशेषितोऽमीषां क्वाथः शीतलतां गतः ॥
गण्डूषकरणाद्धन्ति रोगिणः शोषमुल्बणम् ॥९६॥

अर्थ—चन्दन, पद्माख, नागरमोथा, धनियां, नींबूकी छाल, पेठा, खैरसार, दूबकी जड और तुरंजवीन इन औषधियोंका अष्टावशेष काथ बनाकर शीतल करके कुल्ले करे तो अत्यन्त भयानक शोष भी दूर होजाताहै ॥ ९९ ॥ ९६ ॥

कणा जीरं सिता नागकेसरं दाडिमीफलम् ॥
मधुना भक्षणादेषां शोषः शाम्यति सत्वरम् ॥९७॥

अर्थ—पीपल, जीरा, मिश्री, नागकेशर और अनार इन सबको एकत्र पीसकर सहत मिलाकर चाटनेसे तत्काल ही शोष दूर होजाता है ॥ ९७ ॥

वटपादाः शिवा कृष्णा मधुकं मधुना सह ॥
अवलेहे कृतेऽमीषां तृषारोगो विनश्यति ॥ ९८ ॥

अर्थ—वडके अंकुर, आमले, पीपल और मुलैठी इन सबको एकत्र पीसकर सहत मिलाकर चाटनेसे तृषा शांत होतीहै ॥ ९८ ॥

वटपादोत्पलं कुष्ठं लाजाधान्यकमम्भसा ॥
पिष्टैरेतैर्गुटी वक्त्रे मधुना शोषहन्मता ॥ ९९ ॥

अर्थ—वडके अंकुर, कमल, कूठ, खीलें और धनियां इन सबको जलमें पीस कर सहत मिलाकर गोली बनावे इसको मुखमें डालनेसे शोषरोग दूर होता है ॥ ९९ ॥

अर्धावर्द्धितपानीये सलाजे शीतले मधु ॥
तवराजयुतां द्राक्षां क्षिप्त्वा पीते तृषा व्रजेत्॥१००॥

अर्थ—ढेढगुने जलमें खीलोंको औटाकर उसको शीतल करके पश्चात् उसमें तुरंजवीन तथा दाख डालकर जलको पीनेसे तृषारोग दूर होताहै ॥ १०० ॥

कुष्ठं कासोद्भवं मूलं पद्माक्षं पिष्टमम्भसा ॥
भक्षितं तद्ध्रुवं हन्ति पिपासां चिरकालजाम्॥१०१॥

अर्थ—कूठ, कासकी जड और कमलगट्टे इन तीनोंको जलमें पीसकर पान करनेसे बहुत समयकी उत्पन्नहुई तृषा शांत होजातीहै ॥ १०१ ॥

जलं मलयजं रक्तचन्दनं पद्मकं समम् ॥
उशीरेणान्वितो लेपो मस्तके तृन्निवारणः ॥ १०२ ॥

अर्थ—सुगंधवाला, चन्दन, लाल चन्दन, पद्माख और खस इन सबको समान भाग लेकर जलमें पीसकर शिरपर लेप करनेसे तृषा दूर होतीहै ॥१०२॥

लेहो तृष्णाजयी कृष्णामधुक्षीरद्रुमांकुरैः ॥
तप्तलोहोदकं वारि लाजाक्षौद्रसितायुतम् ॥ १०३ ॥

अर्थ—पीपल, सहत और पंचक्षीरवृक्षोंके अंकुर इनको एकत्र पीसकर चाटनेसे तृषा दूर होजातीहै लोहेको अग्निमें गरम करके पानीमें बुझाकर शीतल करके उसमें सुगन्धवाला, खीलें, सहत और मिश्री मिलाकर पान करनेसे तृषा दूर होजातीहै ॥ १०३ ॥

वटशुङ्गमधुकुष्ठलाजानीलोत्पलैः कृता ॥
गुटिकैका मुखन्यस्ता तृषामाशु निरस्यति ॥१०४॥

अर्थ—बडके अंकुर, सहत, कूठ, खीलें और नीलोत्पल इन औषधियोंको एकत्र पीसकर गोली बनावे इन गोलियोंको मुखमें धारण करनेसे तृषा दूर होतीहै॥ १०४॥

गोस्तनीक्षुरसक्षीरयष्टीमधुमधूत्पलैः ॥
निश्चितं पाननस्याभ्यां तृषा शाम्यति दारुणा॥१०५॥

इति श्रीकण्ठसूरिविरचिते हितोपदेशे तृतीयः
समुद्देशः ॥ ३ ॥

अर्थ—दाख, ईखका रस, दूध, मुलैठी, सहत और कमल इन औषधियोंको एकत्र करके पान करनेसे अथवा नास देनेसे अत्यन्त दारुण तृषा भी दूर होतीहै ॥ १०५ ॥

इति श्रीपरमजैनाचार्य्यश्रीकण्ठसूरिविरचिते हितोपदेशे वैद्यकसारसंग्रहे भिषग्वरहरिशङ्करात्मजशङ्करलालकृतभाषाटीकायां शिरोरोगादिचिकित्सावर्णनं नाम तृतीयः समुद्देशः ॥ ३ ॥

नेत्ररोगाधिकारः ।

नेत्ररोगके प्रकार.

वातेन पित्तेन तथा कफेन रक्तप्रकोपेण च नेत्ररोगाः ॥ तद्धेतुमल्पं कथयामि येन स्पष्टो भवेन्नेत्रविकारदोषः ॥ १ ॥

अर्थ—नेत्ररोग वायुसे, पित्तसे, कफसे और रक्तके प्रकोपसे होतेहैं इनके हेतु संक्षेपसे कहताहूं जिससे कि नेत्रके विकार स्पष्ट विदित होजावें ॥ १ ॥

वातके नेत्ररोगके लक्षण.

शीतत्वमश्रुपातो वा संतापस्तीव्रवेदना ॥
नेत्रयोर्वातरोगाणां लक्षणं समुदाहृतम् ॥ २ ॥

अर्थ—आंख शीतल होय और आंसू निकलें, दाह और तीव्र वेदना होय तो दोनों नेत्रोंमें वायुका विकार जानना ॥ २ ॥

पित्तजनेत्ररोगके लक्षण.

उष्णत्वं पीतता पीडा दाघस्तीव्रोतिरक्तता ॥
नेत्रयोः पित्तदोषस्य चिह्नमूचुर्विचक्षणाः ॥ ३ ॥

अर्थ—पित्तजनेत्ररोगमें नेत्रोंमें उष्णता होय, पीलापन होय, पीडा होय, अत्यन्त दाह होय और नेत्र अत्यन्त लाल होजाते हैं ॥ ३ ॥

कफ तथा रुधिरजन्य नेत्रके लक्षण ।

कण्डूः शोफोऽश्रुपातश्च पिच्छिलत्वं च शीतता ॥
नेत्रयोः कफदोषोयं रक्तदोषेतिरक्तता ॥ ४ ॥

अर्थ—जो नेत्रोंमें खुजली होय, सूजन होय, आंसू निकलें, कीचड आवे और शीतलता होय तो कफका दोष जानना और जो रुधिरके विकारसे नेत्र दुखते होंतो नेत्रोंमें अत्यन्त लाली होती है ॥ ४ ॥

वातज नेत्ररोगकी चिकित्सा.

सैन्धवं तवराजश्च लोध्रं शीतेन वारिणा ॥
पिष्टं नेत्रभृतं हंति वातरोगमसंशयम् ॥ ५ ॥

अर्थ–सेंधा नमक, तुरंजवीन और लोध इन तीनों औषधियोंको शीतल जलमें पीसकर नेत्रोमें लगानेसे वायुजनित नेत्ररोग अवश्य दूर होजाताहै ॥५॥

मधुकं तवराजश्च कुरण्टफलमूलिका ॥
नागरं नवनीतेन पिष्टं हन्त्यक्षिमारुतम् ॥ ६ ॥

अर्थ–मुलैंठी तुरंजवीन, सफेद कटसरैयाके फल और जड सोंठ इन सबको नवनीतघीमें पीसकर नेत्रोंमें लगानेसे वातजनित नेत्ररोग दूर होताहै ॥ ६ ॥

लवणं सैन्धवं शुण्ठी मधुकं सह सर्पिषा ॥
पूरितं नेत्रयोर्हंति वातरोगमसंशयम् ॥ ७ ॥

अर्थ–सेंधा नमक सोंठ और मुलैठी इन सबको घीमें घिसकर दोनों नेत्रोंमें लगानेसे वायुसे उत्पन्नहुआ नेत्ररोग अवश्य दूर होजाता है ॥ ७ ॥

मधुकं देवदारुश्च सैन्धवं निंबपल्लवाः ॥
श्रीखण्डं वारिणा पिष्ट्वा मुक्तं हन्त्यक्षिमारुतम् ॥८॥

अर्थ–मुलैठी, देवदारू, सेंधा नमक नीमके पत्ते और चन्दन इन सबको जलमें पीसकर नेत्रोंमें लगानेसे वायुसम्बन्धी समस्त नेत्ररोग दूर होतेहैं ॥ ८ ॥

पित्तजनेत्ररोगकी चिकित्सा.

पद्मकं केलिपत्रं च तुल्यं मधुकमिश्रितम् ॥
पुटपक्वं जलमिश्रं नेत्रस्थं पित्तरोगहृत् ॥ ९ ॥

कमलगट्टे, केलेके पत्ते, तूतिया और मुलैठी इन सबको एकत्र पुटपाककी विधिसे पकाकर पश्चात् जलमें मिलाकर नेत्रोंमें लगानेसे पित्तसम्बंधी नेत्ररोग दूर होता है ॥ ९ ॥

शिला दारु निशा लोध्रं मधुकं च रसाञ्जनम् ॥
छागलीपयसा पक्कं नेत्रस्थं पित्तरोगहृत् ॥ १० ॥

अर्थ–मैनशिल, दारुहल्दी, लोध, मुलेठी और रसौंत इन सब औषधियोंको बकरीके दूधमें पकाकर नेत्रोंमें डालनेसे पित्तसम्बधी नेत्ररोग दूर होताहै ॥ १० ॥

कफजनेत्ररोगकी चिकित्सा.

गालितं वारिणा पिष्टं निम्बपत्रं महौषधम् ॥
नेत्रयोः पूरितं हंति श्लेष्मरोगमसंशयम् ॥ ११ ॥

अर्थ–नीमके पत्ते और सोंठ इनको जलमें पीसकर वस्त्रमें छानलेवे पश्चात् उस रसको नेत्रोंमें डालनेसे कफसम्बधी नेत्ररोग निश्चय दूर होताहै ॥ ११ ॥

लोध्रचूर्णसमं निम्बपत्रचूर्णमनेन वा ॥
बद्ध्वा पुट्टलिनीं नीरे क्षिप्त्वा तामथ पीडयेत् ॥ १२ ॥
तद्रसो निर्मलो नेत्रपूरितः क्षणमात्रतः ॥
श्लेष्मरोगं निहन्त्याशु नैर्मल्यं कुरुते तयोः ॥ १३ ॥

अर्थ–लोधका चूर्ण और नीमके पत्तोंका चूर्ण करके दोनोंको एक वस्त्रकी पोटलीमें बांधकर जलमें डालदेवे फिर उस पोटली को दबानेसे जो रस निकले उसको नेत्रोमें डालनेसे समस्त कफजनित नेत्ररोग दूर होजातेहैं और दोनों नेत्र निर्मल होजातेहैं ॥ १२ ॥ १३ ॥

घृतपक्वामलं पिष्टं शिला लोध्रं च लेपतः ॥
हन्ति श्लेष्मोद्भवां पीडां नेत्रयोरतिवेगतः ॥ १४ ॥

अर्थ–आमलोंको घीमें भूनकर मैनशिल और लोधके साथ पीसलेवे फिर इन तीनों औषधियोंको जलमें मिलाकर लेप करनेसे कफजनित नेत्रोंकी पीडा शीघ्र ही दूर होतीहै ॥ १४ ॥

धातुर्दारु निशा पथ्या सैन्धवं च रसाञ्जनम् ॥
वारिपिष्टं प्रलेपेन हन्त्यक्ष्णोःश्लेष्मजां रुजम् ॥ १५ ॥

अर्थ-मैनशिल, दारुहलदी हरड, सेंधा नमक और रसौंत इन सबको जलमें पीसकर लेप करनेसे कफसे उत्पन्न हुई नेत्रोंकी पीडा दूर होतीहै ॥ १५ ॥

तवराजोऽब्धिफेनं च वारिपिष्टं समांशतः ॥
हंति नेत्रोद्भवां पीडां रतौ व्रीडां यथांगना ॥ १६ ॥

अर्थ-तुरंजवीन और समुद्रफेन यह दोनों औषधि समान भाग लेकर जलमें पीसकर लेप करनेसे जिसप्रकार रतिके समय स्त्रीकी लज्जा नष्ट होजाती है उसी प्रकार नेत्रोंकी पीडा नाश होजाती है ॥ १६ ॥

लवणं सैन्धवं तक्रं मरिचं कांस्यभाजने ॥
निघृष्टं नेत्रयोर्दत्तं हन्ति रोगं कफोद्भवम् ॥ १७ ॥

अर्थ-सेंधा नमक और मिरच इन दोनोंको समान भाग लेकर कांसीके पात्रमें तक्र (छाछ) से घीसे पश्चात् इसको नेत्रोंमें लगानेसे नेत्रोंकी पीडा दूर होती है ॥ १७ ॥

नेत्ररोगकी सामान्य चिकित्सा.

स्त्रीपयो यावको हिंगुत्रयं नेत्रभृतं ध्रुवम् ॥
दहत्यक्ष्णोः स्थितं दुःखं शुष्कं दारु यथानलः॥१८॥

अर्थ-कुलथी और हींगको स्त्रीके दूधमें एकत्र पीसकर नेत्रोंमें लगानेसे जिसप्रकार सूखी लकडी अग्निसे जलतीहै उसीप्रकार इससे नेत्रोंकी पीडा दूर होजाती है ॥ १८ ॥

जप्तेनारुणमंत्रेण वारिणा लोचनद्वये ॥
क्षालिते शाम्यति क्षिप्रमक्षिपीड़ातिदुःसहा ॥ १९ ॥

अर्थ-ॐ अरुणाय हूं फट् स्वाहा इस अरुण मंत्रसे जलको अभिमंत्रित करके जलसे दोनों नेत्रोंको धोनेसे अत्यन्त दुःसह नेत्रकी पीडा शीघ्र ही दूर होजाती है ॥ १९ ॥

मन्त्र.

ॐ अरुणाय हूं फट् स्वाहा ॥ इति मंत्रः ।

श्वेताश्वमारपत्रोत्थरसपूरितचक्षुषोः ॥
द्रुतं पीडा शमं याति यथा क्रीडातिवार्द्धके ॥ २० ॥

अर्थ–सफेद कनेरके पत्तोंके रसको नेत्रोंमें भरनेसे नेत्रोंकी पीडा शीघ्र शांत होजातीहै जिसप्रकार वृद्धावस्थामें रति क्रीडा शीघ्र शांत होजाती है ॥ २० ॥

सूतकं गन्धकोपेतं चांगेरीरसमर्दितम् ॥
अञ्जनं दृष्टिदं नृणां नेत्रामयविनाशनम ॥ २१ ॥

अर्थ–गन्धक और पारेकी कजली बनाकर नोनियाके रसमें मर्दन करे पश्चात् नेत्रोंमें आंजनेसे दृष्टि निर्मल होजातीहै तथा नेत्रोंके समस्त रोग दूर होजाते हैं ॥ २१ ॥

अपामार्गशिफा घृष्टा मधुना सैन्धवेन च ॥
ताम्रपात्रे भृता नेत्रे हन्ति पीडां तदुद्भवाम् ॥ २२ ॥

अर्थ–तांबेके पात्रमें सहत तथा सेंधा नमक मिलाकर उसमें चिरचिटेकी जडको घिसकर नेत्रोंमें लगानेसे समस्त नेत्रोंकी पीडा दूर होजातीं है ॥ २२ ॥

रसेन्द्रभुजगौ तुल्यौ तयोर्द्विगुणमञ्जनम् ॥
ईषत्कर्पूरसंयुक्तमञ्जनं नयनामृतम् ॥ २३ ॥

अर्थ–पारे और शीशेको समान भाग लेवे और दोनोंसे दुगुना काला सुरमा लेवे तथा कुछेक कपूर मिलाकर नेत्रोंमें लगानेसे अमृतकी समान गुण करता है इसको नयनामृत कहते हैं ॥ २३ ॥

प्रत्यहं जलसम्पूर्णमुखं क्षालयतेऽक्षिणी ॥
प्रातर्योमुच्यते रोगैर्लोचनोत्थैः सुनिश्चितम् ॥ २४ ॥

अर्थ–प्रतिदिन प्रातःकाल मुखमें जलभर उस जलसे नेत्रोंको सींचनेसे निश्चय नेत्ररोग दूर होजाते हैं ॥ २४ ॥

मधुशिग्रुदलोद्भूतरसपूरितलोचनम् ॥
विमुञ्चत्यक्षजा पीडा नरं वेश्येव निर्द्धनम् ॥ २५ ॥

अर्थ–जिसप्रकार धनरहित मनुष्यको वेश्या छोड देती है उसीप्रकार सहत और लाल सेंजिनके रसको नेत्रोंमें लगानेसे नेत्ररोगकी पीडा दूर होतीहै अर्थात् यह औषधि सर्व नेत्ररोगोंको दूर करेहै ॥ २५ ॥

तरुस्थितनखोद्भिन्नपक्कामलकवारिणा ॥
नेत्रयुग्मे भृते पीडा शीघ्रं शाम्यति देहिनः ॥ २६ ॥

अर्थ–जो मनुष्य आमलोंके वृक्षके ऊपर चढकर पकेहुए आमलोंको नखोंसे चीरकर उसके रसको दोनों नेत्रोंमें डालताहै उसके नेत्रोंकी पीडा तत्काल शांत होजाती हैं ॥ २६ ॥

तिमिररोगका निदान.

अच्छिद्रमसितं सर्वं पश्यन्वै यस्तु पश्यति ॥
तिमिरे वातजे ज्ञेयं लक्षणं सुविचक्षणैः ॥ २७ ॥

अर्थ–जो मनुष्य अपनी आंखोंसे सम्पूर्ण पदार्थोंको अन्धकारमय देखे और उनमें छिद्रतक भी नहीं दीखे तो उसको वातज तिमिररोग जानना ॥ २७ ॥

सुस्निग्धं पाण्डुरं सर्वं पश्यत्यक्षमलान्वितः ॥
क्षणेक्षणेऽबलादृष्टिस्तिमिरे श्लेष्मणो भवेत् ॥ २८ ॥

अर्थ–परन्तु जो नेत्ररोगी संपूर्ण पदार्थोंको अत्यन्त चिकना सफेदरंगका देखे तथा क्षणक्षणमें उसकी दृष्टि निर्बल होतीजाय तो उसके कफसे उत्पन्नहुआ तिमिररोग जानना ॥ २८ ॥

पीतं नीलं तथा रक्तं नरः पश्यति पित्तजे ॥
त्रिदोषतिमिरे तानि मिश्ररूपाणि पश्यति ॥ २९ ॥

अर्थ–जो पित्तसे तिमिररोग हुआ होय तो उस मनुष्यको सर्वत्र पीला, नीला तथा लाल दीखे, त्रिदोषसे उत्पन्न हुए तिमिररोगमें यह सब रूप मिश्रित चित्रविचित्र दीखते हैं ॥ २९ ॥

तिमिररोगकी चिकित्सा.

अशीतिस्तिलपुष्पाणि षष्टिः पिप्पलितण्डुलाः ॥

द्वात्रिंशज्जातिकलिका मरिचानि च षोडश ॥३०॥
तोयेन तिमिरं हन्ति मधुना हन्ति पुष्पकम् ॥
अजाक्षीरेण रात्र्यान्ध्यं गोमूत्रेण च चिप्पटम्॥३१॥

अर्थ–तिलके फूल ८०, पीपल ६०, चमेलीके फूलोंकी कली ३२, मिरच १६ इन सबका बारीक चूर्ण करके गोली बनालेवे। इन गोलियोंको जलमें घिसकर नेत्रोंमें आंजनेसे तिमिर रोग दूर होताहै। सहतमें घिसकर नेत्रोंमें लगानेसे फूल दूर होताहै। बकरीके दूधमें घिसकर लगानेसे रतौंधा दूर होताहै और गायके मूत्रमें घिसकर लगानेसे नेत्रोंका चिपिट रोग दूर होताहै॥ ३०॥ ३१॥

विभीतफलजं बीजं मधुकं मरिचं शिवा ॥
तुत्थमेतद्गुटी हन्ति तिमिरं चक्षुरञ्जनात्॥ ३२॥

अर्थ–बहेडेकी मींग, मुलैठी, मिरच, हरड और नीलाथोथा इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर गोली बनावे इन गोलिओंको जलमें घिसकर नेत्रोंमें आंजनेसे तिमिररोग नाश होताहै॥ ३२॥

समुद्रफेनं त्रिफला विडंगं रसाञ्जनं नूतनशङ्खनाभिः॥ शिला सुवर्णस्य फलं समांशं कटुत्रयं कुक्कुटिकाण्डखण्डम्॥ ३३॥ सुपिष्टं कारयेदेतैर्गुटीभागैस्तदञ्जनात्॥ तिमिरं वातकण्डूश्च पटलाश्रु द्रुतं व्रजेत्॥ ३४॥

अर्थ–समुद्रफेन, त्रिफला, वायविडंग, रसौंत, नवीन शंखनाभि, मैनफल, धतूरेके फल, सोंठ, मिरच, पीपल और मुर्गीके अण्डेका बक्कल इन सबको समान भाग लेकर बारीक पीसकर गोली बनावे इनको नेत्रोंमें आंजनेसे तिमिररोग, वातजनेत्ररोग, खुजली, पटल और नेत्रोंसे निरन्तर पानीका निकलना। ये सब शीघ्र ही दूर होजातेहैं॥ ३३॥ ३४॥

सैन्धवं वारिणा पिष्टं त्रिकटुत्रिफलान्वितम् ॥
जलपिष्टैर्बहिर्लेपः सर्वनेत्रामयापहः ॥ ३५ ॥

अर्थ-सैंधा नमक, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, बहेडा और आमला इन सब औषधियोंको जलमें बारीक पीसकर नेत्रोंके ऊपर लेप करनेसे सर्व प्रकारके नेत्ररोग दूर होजातेहैं ॥ ३५ ॥

शिवा निशा कणा कायफलं त्रिकटुकं समम् ॥
तैलपक्कं जले पिष्टं तच्चक्षुस्तिमिरापहम् ॥ ३६ ॥

अर्थ-हरड, हल्दी, पीपल, कायफल, सोंठ और मिरच इन सबको तेलमें भूनकर जलमें पीसकर नेत्रोंके ऊपर लेप करनेसे तिमिररोग दूर होताहै ॥ ३६ ॥

आयसे ताम्रपात्रे वा सैन्धवं दधिमर्दितम् ॥
कांस्यघृष्टे निशाकृष्णे त्वञ्जनं चाक्षिशूलहृत् ॥ ३७ ॥

अर्थ-लोहके अथवा ताँबेके पात्रमें दही, दारुहल्दी, पीपल और सैंधा नमक डालकर कांसीके पात्रसे खूब घोटे जब घुटकर बारीक होजाय तब नेत्रोंमें आंजनेसे नेत्रशूल दूर होताहै ॥ ३७ ॥

रसाञ्जनाभयादारुगैरिकं सैन्धवान्वितम् ॥
जलपिष्टैर्बहिर्लेपः सर्वनेत्रामयापहः ॥ ३८ ॥

अर्थ-रसौंत, हरड, दारुहल्दी, गेरू और सेंधा नमक इन सबको जलमें पीसकर नेत्रोंके ऊपर लेप करनेसे सर्वप्रकारके नेत्ररोग दूर होतेहैं ॥ ३८ ॥

अक्षास्थिसारयष्ट्याह्वधात्रीमरिचतुत्थकैः ॥
जलपिष्टैः कृतावर्तिस्तिमिराणि व्यपोहति ॥ ३९ ॥

अर्थ-बहेडेकी मींग, मुलैठी, आमला, मिरच और नीलाथोथा इन सबको जलमें बारीक पीसकर बत्ती बनावे इन बत्तियोंको नेत्रोंमें आंजनेसे सर्वप्रकारके तिमिररोग दूर होतेहैं ॥ ३९ ॥

व्योषं संचूर्ण्य सिन्धूत्थं त्रिफलाञ्जनसंस्थितम् ॥
गुटिका जलपिष्टेयमञ्जनात्तिमिरापहा ॥ ४० ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, सैंधा नमक, हरड, बहेडा, आमला और काला सुरमा इन सब औषधियोंको एकत्र जलमें पीसकर गोली बनावे इन गोलियोंको नेत्रोंमें आंजनेसे तिमिररोग दूर होता है ॥ ४० ॥

नेत्ररोगकी सामान्य चिकित्सा.

हरिद्रामलकी कृष्णा कतकं श्वेतसर्षपाः ॥
व्योषं नारीपयोवर्त्तिः सर्वनेत्रामयापहा ॥ ४१ ॥

अर्थ—हल्दी, आमला, पीपल, निर्मलीका फल, सफेद सरसों, सोंठ और मिरच इन सबका चूर्ण करके स्त्रीके दूधमें बत्ती बनावे यह बत्ती सर्वप्रकारके नेत्ररोगोंको नष्ट करनेवाली है ॥ ४१ ॥

चन्दनं गैरिका लाक्षा मालतीकलिका समैः ॥
चक्षुश्चक्रहरी वर्त्तिः शोणितस्य प्रसादनी ॥ ४२ ॥

अर्थ—चन्दन, गेरू, लाख और चमेलीके फूलोंकी कली इन सबको समान भाग लेकर बत्ती बनावै इस बत्तीको नेत्रोंमें आंजनेसे मोतियाबिन्द दूर होता है तथा दृष्टि निर्मल होजाती है ॥ ४२ ॥

रसाञ्जनं विडङ्गानि तुत्थकं मधुकं निशा ॥
त्रिफलाव्योषसिंधूत्थं पुण्डरीकं जलोद्भवम् ४३॥
आज्येन पयसा पिष्टा वर्त्तिश्छायाविशोषिता ॥
नेत्ररोगहरी प्रोक्ता नागाख्येन तु भिक्षुणा ॥४४॥

अर्थ-रसौंत, वायविडंग, लीलाथोथा, मुलैठी, हल्दी, हरड, बहेडा, आमला, सौंठ, मिरच, पीपल, सेंधा नमक और सफेद कमल इन औषधियोंको घी तथा दुधमें पीसकर बत्ती बनाकर छायामें सुखावै यह बत्ती नेत्रोंके समस्त रोगोंको दूर करती है यह प्रयोग नागार्जुन भिक्षुक नामक आचार्यने कहा है ॥४३॥ ४४ ॥

निशाद्वयाभयामांसीकुष्ठचूर्णावचूर्णितम् ॥
सर्वनेत्रामयान्हन्यादेतत्सौगतमञ्जनम् ॥ ४५ ॥

अर्थ—दारुहल्दी, हल्दी, जटामांसी, और कूठ इन सबका एकत्र चूर्ण करके नेत्रोंमें लगानेसे सर्व प्रकारके नेत्ररोग दूर होजातेहैं इसको सौगत अंजन कहतेहैं ॥ ४५॥

कुङ्कुमागरुकुष्ठैलाः पिष्टाः शीतेन वारिणा ॥
नाशयन्ति समस्तानि तिमिराण्यक्षिपूरिताः ॥ ४६॥

अर्थ—केशर, अगर, कूठ और इलायची इन सबको शीतल जलमें पीसकर नेत्रोंमें लगानेसे सब प्रकारके तिमिररोग दूर होजातेहैं ॥ ४६ ॥

निशाद्वयं सैन्धवशंखनाभिकरञ्जबीजं कटुकत्रयं च॥ शिफा सितैरण्डभवा समांशमजापयःपिष्टमथाक्षि-संस्थम् ॥ ४७ ॥ तिमिरं दूरमासन्नं पुष्पं रात्र्यंधकामलम् ॥ सर्पादिगरलं हन्ति गृहभूता-दिकानपि ॥ ४८ ॥

अर्थ—हल्दी, दारुहल्दी, सेंधा नमक, शंखकी नाभि, करंजके बीज, सोंठ, मिरच, पीपल और सफेद अंडकी जड इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर बकरीके दूधमें पीसकर नेत्रोंमें लगानेसे तिमिररोग दूरदृष्टिका रोग खंडितदृष्टि, फूला, रतौंधा, कामला, सांप आदिका विष तथा ग्रह और भूतादिक पीडा भी दूर होजाती है ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

कणाकरञ्जबीजानि त्रिफला च रसाञ्जनम् ॥ लोध्रं स्वर्णफलं शुण्ठी कांजिकेनातिपेषयेत् ॥ ४९ ॥
छायाशुष्कस्य तस्याशु वटिका वारिचूर्णिता ॥
निशान्ध्यंतिमिरंहन्तिकण्डूंचासृजिसंस्थिताम्॥५०॥

अर्थ—पीपल, करंजके बीज, त्रिफला, रसौंत, लोध, धतूरेके फल और सोंठ इन सबको विधिपूर्वक कांजीमें पीसकर गोली बनावे फिर छायामें सुखाकर इस

गोलीको जलमें घिसकर नेत्रोंमें आंजे तो रतौंधा, तिमिर और रुधिरसे उत्पन्नहुई खुजली शीघ्र ही नाशको प्राप्त होती हैं ॥ ४९ ॥ ५० ॥

तिमिरादिनेत्ररोगोंकी चिकित्सा.

निशा स्वर्णफलं कृष्णा घृष्टं वा रक्तचन्दनम् ॥
एतद्वटीजलं चक्षुःपूरितं तिमिरापहम् ॥ ५१ ॥

अर्थ—हल्दी, धतूरेके फल और पीपल अथवा लाल चन्दन इन सबकी गोली बनावे इस गोलीको जलमें घिसकर नेत्रोंमें लगानेसे तिमिररोग दूर होताहै ॥ ५१ ॥

सैन्धवं पिप्पली त्र्येकभागतोजापयोऽम्भसा ॥
सम्पिष्टंतद्वटीतोयं कण्डश्रुचिपिटापहम् ॥ ५२ ॥

अर्थ—सेंधा नमक तीन भाग और पीपल १ भाग लेकर बकरीके दूधमें पीसकर गोली बनावे इस गोलीको जलमें घिसकर नेत्रोंमें आँजनेसे खुजली, पानीका जाना और तिमिररोग दूर होताहै ॥ ५२ ॥

छागलीदुग्धमूत्राभ्यां पिष्टा गुञ्जाशिफा तथा ॥
नेत्रयोः पूरणाद्याति तिमिरं वेगतः परम् ॥ ५३ ॥

अर्थ—बकरीके दूध और मूत्रमें चौंटलीकी जडको पीसकर नेत्रोंमें लगानेसे बहुत दिनोंका तिमिररोग भी शीघ्र शांत होजाताहै ॥ ५३ ॥

तवक्षीरं कणा सिन्धुर्मधुकं त्रिफला पलम् ॥
पलानि तवराजस्य सप्तैकत्र प्रपेषयेत् ॥ ५४ ॥
रात्रौ तद्भक्षणाद्यान्ति शमं कष्टान्यनेकधा ॥
तिमिरं चिपिटं कण्डूरश्रुपातोऽतिवेगतः ॥ ५५ ॥

अर्थ—तवासीर, पीपल, सेंधा नमक, मुलैठी, हरड, बहेडा और आमला ये सब चारचार तोले और तुरंजवीन २८ तोले लेवे फिर सबको एकत्र पीसकर चूर्ण करलेवे इस चूर्णको रात्रिके समय सेवन करनेसे तिमिर,

खुजली, आंसुओंका निकलना और सर्वप्रकारके नेत्ररोग बहुत शीघ्र ही दूर होजातेहैं ॥ ९४ ॥ ९९ ॥

त्रिफला लोहचूर्णं च पटोलीमधुयष्टिका ॥ सर्वमे-
कांशतः पथ्या विभीतामलकं क्रमात् ॥ ९६ ॥
द्वित्र्यब्धिभागिकं रुद्रभागाः स्युस्तवराजकैः ॥
सर्पिषा भक्षिते यांति तच्चूर्णेऽक्षिरुजोऽखिलाः॥९७॥

अर्थ-हरड २ भाग, बहेडा ३ भाग, आमले ४ भाग, लोहभस्म १ भाग, पटोलपत्र १ भाग मुलैठी १ भाग और तुरंजवीन ११ भाग लेवे इन सबका एकत्र चूर्ण करके घीके साथ सेवन करनेसे समस्त नेत्ररोग दूर होते हैं ॥ ९६ ॥ ९७ ॥

विडङ्गं सैन्धवं कृष्णा समांशं च रसाञ्जनम् ॥
त्रिभागं काञ्जिकापिष्टं कण्ड्वश्रुचिपिटापहम् ॥ ९८ ॥

अर्थ-वायविडंग, सेंधा नमक और पीपल यह प्रत्येक एकएक भाग रसोंत ३ भाग इन सबको कांजीमें पीसकर लेप करनेसे चिपिटरोग, नेत्रोंमें पानीका निकलना और खुजली ये सब दूर होतेहैं ॥ ९८ ॥

अश्वगन्धोद्भवे चूर्णे त्रिफलोदकभक्षिते ॥ तिमिरो
दन्तरोगाश्च पटलं वा विनश्यति ॥ ९९ ॥ शङ्-
खनाभिर्वचा पथ्या मरिचं कुषकोद्भवा ॥ मञ्जैला-
समभागेन सम्पिष्टा नरवारिणा ॥ ६० ॥ वटिकां
कारयेत्तेन छायाशुष्कां तदञ्जनात् ॥ तिमिरं
चिपिटं पुष्पं पटलं च प्रणश्यति ॥ ६१ ॥

अर्थ-शंखकी नाभि, वच, हरड, मिरच, बहेडेकी मींग और इलायची इन सबको समान भाग लेकर मनुष्यके मूत्रमें पीसकर गोली बनावे फिर छायामें सुखाकर इस गोलीको नेत्रोंमें आंजनेसे तिमिर, चिपट, फूला और पटल रोग

नाशको प्राप्त होतेहैं असगंधके चूर्णको त्रिफलेके जलके साथ सेवन करनेसे तिमिररोग दंतरोग और पटलरोग ये सब नष्ट होते हैं ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥

रतौंधेकी चिकित्सा.

गोगोमयरसापिष्टपिप्पलीमूलचूर्णतः ॥
निशान्ध्यं नश्यति क्षिप्रं व्यसनेन यथा खलः ॥६२॥

अर्थ-गायके गोवरमेंसे रस निकालकर उसमें पीपलामूलका चूर्ण मिलाकर बारीक पीसे फिर इसको नेत्रोंमें लगानेसे जिस प्रकार दुष्ट मनुष्य व्यसनोंसे शीघ्र ही नाशको प्राप्त होताहै उसीप्रकार रतौंधा शीघ्र नाशको प्राप्त होताहै॥ ६२॥

जातीपत्ररसापिष्टं निशायुग्मं रसाञ्जनम् ॥
निशान्ध्यं नाशयत्येव यथा पापं जिनस्मृतिः ॥६३॥

अर्थ-चमेलीके पत्तोंके रसमें हल्दी, दारुहल्दी और रसोंतको पीसकर नेत्रोंमें आंजनेसे जिसप्रकार जिनदेवके स्मरणसे पाप नाशको प्राप्त होताहै उसी प्रकार रतौंधा शीघ्र नाशको प्राप्त होताहै ॥ ६३ ॥

मरिचं नील्यपामार्गः कासमर्दः पुनर्नवा ॥ एतच्छिफात्रयं घृष्ट्वा छागलीपयसा सह ॥ ताम्रपात्रे द्रुतं नेत्रे निशान्ध्यं घ्नन्ति वेगतः ॥ ६४ ॥

अर्थ-मिरच, नील, चिरचिटेकी जड, कसौंदीकी जड और पुनर्नवेकी जड इन सबको एकत्र तांबेके पात्रमें डालकर बकरीके दूधके द्वारा घिसे फिर इसको नेत्रोंमें लगानेसे रतौंधा शीघ्र नाशको प्राप्त होता है॥ ६४ ॥

विभीतफलमज्जायाश्चूर्णं मधुसमन्वितम् ॥
प्रातर्नेत्रभृतं हन्ति निशान्ध्यं चिरकालजम् ॥ ६५ ॥

अर्थ-बहेडेकी मींगको पीसकर सहतमें मिलाकर प्रातःकालके समय नेत्रोंमें लगानेसे बहुत दिनोंका रतौंधा भी शीघ्र ही नाश होजाता है॥ ६५ ॥

नेत्रगतपुष्पकी चिकित्सा.

काचचन्दनपक्ष्यण्डत्वक्छिलाशङ्खसैन्धवैः ॥
वारिपिष्टैः समैर्नेत्रैः पुष्पादिहरमञ्जनम् ॥ ६६ ॥

अर्थ–कांच, चन्दन, मुर्गीके अण्डेका बक्कल, मैनशील, शंख और सैंधा नमक इन सबको समान भाग लेकर जलमें पीसकर नेत्रों में लगानेसे नेत्रका फूला शीघ्र ही नाश होताहै ॥ ६६ ॥

शिलाजिच्छङ्खनाभिश्च तुत्थं कायफलं मधु ॥
मरिचं कुक्कुटाण्डं च फेनं चाब्धिभवं समम् ॥ ६७ ॥

अर्थ–शिलाजीत, शंखकी नाभि, नीलाथोथा, कायफल, सहत, मिरच, मुर्गीके अण्डेका बक्कल और समुद्रफेन इन सबको समान भाग लेकर जलमें पीसकर नेत्रोंमें लगानेसे फूला बहुत शीघ्र ही नाश होजाताहै ॥ ६७ ॥

पिष्टं पुष्प हरत्येव किंवा श्वेतापराजिता ॥
मूलं पुष्पहरं पिष्टं वारिणा नेत्रपूरितम् ॥ ६८ ॥

अर्थ–अथवा सुफेद अपराजिताकी जडको जलमें घिसकर नेत्रोंमें आंजनेसे फूला दूर होजाताहै ॥ ६८ ॥

काञ्जिके प्रक्षिपेत्तप्तामिष्टिकां तद्भवेन च ॥
बाष्पेण स्वेदयेच्चक्षुर्द्रुतं पीडानिवृत्तये ॥ ६९ ॥

अर्थ–ईटको अग्निमें तपाकर कांजीमें बुझाकर उसकी वाफ देनेसे तत्काल नेत्रोंकी पीडा दूर होतीहै ॥ ६९ ॥

त्रिफला सैन्धवं लोहचूर्णं त्रिकटुकं समम् ॥ छाग-
लीपयसा पक्वं छायाशुष्का च तद्गुटी ॥ ७० ॥
दुग्धघृष्टा भृता नेत्रे पुष्पहृत्काञ्जिकेन सा ॥ तिमिरं
मधुना हंति पटलं च शिवाम्भसा ॥ ७१ ॥ निशा-

न्ध्यं कामलं हंति काकमाचीरसेन च ॥ रम्भा-
म्भसाश्रुपातं च गुटी चन्द्रप्रभाभिधा ॥ ७२ ॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आमला, सेंधानमक, लोहचूर्ण, सोंठ, मिरच और पीपल इन औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण करके बकरीके दूधमें पकाकर गोली बनाकर छायामें सुखावे फिर इन गोलियोंको दूधमें घिसकर नेत्रोंमें आंजनेसे फूला दूर होजाताहै, कांजीमें घिसकर लगानेसे तिमिररोग दूर होजाताहै, सहतमें घिसकर लगानेसे पटल दूर होताहैं, आमलोंके जलमें घिसकर लगानेसे रतौंधा दूर होजाताहै, मकोयके रसमें घिसकर लगानेसे कामला दूर होजाताहैं और केलेके जलमें घिसकर लगानेसे जलका निकलना वंद होजाताहैं इन गोलियोंको चन्द्रप्रभा कहतेहैं ॥ ७०–७२ ॥

अश्वमूत्रेण संघृष्टकारवल्लीशिफाञ्जनात् ॥
लोचनस्था शमं याति नीली धूलिर्यथाम्भसा ॥ ७३ ॥

अर्थ–घोडेके मूत्रमें करेलेकी जडको घिसकर नेत्रोंमें लगानेसे जिसप्रकार पानीसे धूल दूर होजातीहैं उसी प्रकार नेत्रोंका नीलापन जातारहताहै ॥ ७३ ॥

चिपटादि रोगोंकी चिकित्सा.

छागमूत्रेण संभिन्नं देवदारुरजो भृशम् ॥
पक्ष्मलं नयनद्वन्द्वं जायते गतचिप्पटम् ॥ ७४ ॥

अर्थ– देवदारुकी लकडीको बकरीके मूत्रमें घिसकर नेत्रोंमें आंजनेसे दोनो नेत्रोंका चिप्पटरोग दूर होताहै ॥ ७४ ॥

शिलारसेन सम्पिष्टा हरिद्रा कतकं कणाः ॥
धात्रीफलं च तद्वर्तिरक्षिरोगविनाशनी ॥ ७५ ॥

अर्थ–हल्दी, निर्मलीके फल, पीपल और आमला इन औषधियोंको शिला रसमें पीसकर बत्ती बनावे इन बत्तीयोंको घिसकर नेत्रोंमें लगानेसे नेत्ररोग दूर होताहै ॥ ७५ ॥

श्वैतैरण्डशिफापत्रयुतं छागीपयोग्निना ॥
तापितं स्वेदितं चक्षुर्वातमूलं शमं नयेत् ॥ ७६ ॥

सफेद अण्डकी जड और पत्तोको बकरीके दूधमें पीसकर अग्निपर गरम करके नेत्रोंको वाफ देनेसे वायुसम्बन्धी नेत्रोंकी पीडा शान्त होजातीहै ॥ ७६ ॥

चन्दनं सैन्धवं पथ्या रसो ब्रह्मतरूत्थितः ॥
क्रमवृद्ध्याञ्जनं हन्ति पटलं पुष्पनीलिकाम् ॥ ७७ ॥

अर्थ-चन्दन १ तोला, सैंधानमक २ तोले हरड ३ तोले और पारसपीपलका रस ४ तोले सबको एकत्र मिलाकर नेत्रोंमें लगानेसे पटल, फूला और नीलिका रोग दूर होताहै ॥ ७७ ॥

पलाशरससंभिन्नकरञ्जतरुबीजजा ॥
वर्तिरक्षिप्रयुक्तासौ हन्ति पुष्पं चिरन्तनम् ॥ ७८ ॥

अर्थ-पलाशके रसमें करंजके बीजोंको पीसकर बत्ती बनाकर नेत्रोंमें आंजनेसे बहुत दिनोंका फूला भी दूर होजाता है ॥ ७८ ॥

छागमूत्रेण संघृष्टभद्रमुस्तांजनेन सा ॥
चिरकालोद्भवं पुष्पं रक्तत्वं वा व्यपोहति ॥ ७९ ॥

अर्थ-बकरिके मूत्रमें नागरमोथेको घिसकर नेत्रोंमें आंजनेसे बहुत दिनोंका फूल और लाली दूर होजातीहै ॥ ७९ ॥

तन्दुलोदकसंघृष्टकुब्जमूलस्य नस्यतः ॥
पटलं क्षीयते क्षिप्रमभ्रं वातहतं यथा ॥ ८० ॥

अर्थ-चिरचिटेकी जडको चावलोंके जलमें पीसकर नास देनेसे जिसप्रकार वायुसे बादल दूर होजातेहैं उसीप्रकार नेत्रोंका पटल तत्काल ही नष्ट होजाता है ॥ ८० ॥

भृङ्गराजशिफातैलं लवणेन तुषाम्भसा ॥
ताम्रघृष्टं हरत्याशु भृता नेत्रेऽतिचिप्पटम् ॥ ८१ ॥

अर्थ—भांगरेकी जडको तेल, सेंधा नमक और तुषोदक नामक कांजीके द्वारा तांबेके पात्रमें घिसकर नेत्रोंमें लगानेसे अत्यन्त बढे हुये चिपटादि रोग दूर होजाताहै ॥ ८१ ॥

मांस्या निम्बस्य पत्राणां निर्यासः शोणितापहः ॥
निशान्ध्यं भ्रमरीपत्ररसेऽक्ष्णि पूरिते व्रजेत् ॥ ८२

अर्थ—जटामांसी तथा नीमके पत्तोंका रस मिलाकर नेत्रोंमें आंजनेसे रुधिर वृद्धिको प्राप्त हुआ भी दूर होजाता है पनरीके पत्तोंके रसको नेत्रोंमें आंजनेसे रतौंधा दूर होजाता है ॥ ८२ ॥

अपामार्गशिफा गव्यमस्तु सैन्धवरोचनः ॥
ताम्रे घृष्ट्वा भृता कुर्यात्पक्ष्मलं नयनद्वयम् ॥ ८३ ॥

अर्थ—चिरचिटेकी जड, गायके दहीका पानी, सेंधा नमक और गोरोचन इन सबको तांबेके पात्रमें घिसकर नेत्रोंमें लगानेसे यदि पलक भी गिरगये हों तो नये पलक आजाताहै ॥ ८३ ॥

कटुतुंडीरिकापत्ररसो मरिचसंयुतः ॥
निशान्ध्यं नाशयत्यक्ष्णोः प्रदोषे पूरितो यदि ॥८४॥

अर्थ—कडवी तोरईके पत्तोंके रसमें मिरचोंका चूर्ण मिलाकर सन्ध्याके समय नेत्रोंमें लगानेसे रतौंधा दूर जाताहै ॥ ८४ ॥

काचतिमिरपटलादिकी चिकित्सा.

अक्षिप्रहारजं दुःखं छागचर्म सुकोमलम् ॥
चूर्णितं पूरितं नेत्रे शमयत्यतिवेगतः ॥ ८५ ॥

अर्थ—जो नेत्रोंमें किसीप्रकारकी चोट लगानेसे पीडा होय तो बकरीका कोमल चमडा लेकर उसका बारीक चूर्ण करके नेत्रोंमें लगावे तो शीघ्र पीडा शांत होजाती है ॥ ८५ ॥

शिलासैन्धवकासीसशंखव्योषरसांजनैः ॥
सक्षौद्रैः काचशुक्रोर्मतिमिरघ्नी रसक्रिया ॥ ८६ ॥

अर्थ—मैनशिल, सेंधा नमक, हीराकसीस, शंख, सोंठ, मिरच पीपल, और रसोंत इन सबका चूर्ण करके सहतमें मिलाकर नेत्रोंमें आंजनेसे आंखमें उत्पन्न हुआ कांच फूला, दृष्टिका कमहोना और तिमिर रोग ये सब दूर होजातेहैं ॥८६॥

प्रत्यग्रजातिपत्राणि यावको रक्तचन्दनम् ॥
गुटिका हन्ति काचांध्यं तिमिरं पटलं तथा॥८७॥

अर्थ—चमेलीके कोमल पत्ते, लाखका रस और लाल चन्दन इन तीनों औषधियोंकी गोली बनाकर जलमें घिसकर नेत्रोंमें आंजनेसे कांच, अन्धापन, तिमिर और पटल दूर होता है ॥ ८७ ॥

तमतिमिरकाचकण्डूं नीलीसुस्रावकुसुमपटलं च ॥
गोमूत्रसीसकोत्थमंजनमेतत्समस्तरोगहरम् ॥ ८८ ॥

अर्थ—सीसेको गोमूत्रमें घिसकर नेत्रोंमें लगानेसे घोर तिमिर, कांच, कंडू, नीलिका, स्राव, फूला और समस्त पटलगत रोग दूर होते हैं ॥ ८८ ॥

तमतिमिरकाचकंडूं नीलीसुस्रावकुसुमपटलं च ॥
अपहन्ति नेत्ररोगान्गुडूचीरससैन्धवं मधुना ॥ ८९ ॥

अर्थ—गिलोयका रस, सेंधा नमक और सहत मिलाकर नेत्रोंमें लगानेसे भी पूर्वोक्त तिमिरादि समस्त नेत्ररोग दूर होजाते हैं ॥ ८९ ॥

बिल्वमूलरसो बालमूत्रयुक्तोतिवेगतः ॥
पटलं नीलिकां हन्ति कुभृत्यः स्वामिनं यथा ॥९०॥

अर्थ—जिसप्रकार दुष्टसेवक स्वामीका नाश करता है उसीप्रकार बेलकी जडके रसको बालकके मूत्रमें मिलाकर नेत्रोंमें आंजनेसे पटल और नील शीघ्र ही दूर होजाते हैं ॥ ९० ॥

तारेण कनकेनाथ घृष्टा सूर्येण नश्यति ॥
अंजनी भूधरस्यापि कणाक्षौद्रोक्षतेन वा ॥ ९१ ॥

अर्थ—चांदी, सोना और सूर्यकान्तमणिसे अंजनीको घिसनेसे पर्वतकी अंजनी भी नष्ट होजातीहै तो मनुष्यके नेत्रकी अंजनी नष्ट होजाय तो आश्चर्य

ही क्या है ? अथवा पीपल और सहतको एकत्र घिसकर लगानेसे अंजनी भी नष्ट होजाती है ॥ ९१ ॥

कामलाकी चिकित्सा.

द्रोणपुष्पीरसैर्नेत्रे पूरिते यांति कामलाः ॥
हिंगुर्वा लोचनन्यस्तं कामलोन्मूलनक्षमम् ॥ ९२ ॥

अर्थ–द्रोणपुष्पीके रसको नेत्रोंमे लगानेसे कमला दूर होजाता है अथवा हींगको नेत्रोंमें आंजनेसे कामला दूर होजाता है ॥ ९२ ॥

कामलार्तस्य चैरंडपिप्पल्यौ नयनांजने ॥
लांगलीपत्रचूर्णं वा पिबेत्तक्रेण कामली ॥ ९३ ॥

अर्थ–कमलासे पीडित मनुष्य अण्ड और पीपलका चूर्ण (अथवा अण्डकी जड तथा पीपलको) जलमें घिसकर नेत्रोंमें आंजे तो कमला दूर होजाताहै अथवा कामलारोगी कलिहारीके पत्तोंके चूर्णको मट्ठेके साथ पीवे ॥ ९३ ॥

गुडार्द्रकयुता हन्ति कामलं त्रिफला सिता ॥
जालिनीपत्रमाघ्रातं नस्यं वा तंदुलाम्भसा ॥९४॥

अर्थ–हरड, बहेडा, आमले और विष्णुक्रान्ताकी जडको चूर्ण करके गुड और अदरखमें मिलाकर सेवन करनेसे कामला रोग दूर होजाताहै अथवा कडवी तोरईके रसका नास देनेसे वा चावलोंके जलके साथ तोरईके पत्तोंके रसको नाकमें टपकानेसे कामलारोग दूर होताहै ॥ ९४ ॥

त्रिफलाया गुडूच्या वा दार्व्या निंबस्य वा रसः ॥
प्रातः क्षौद्रेण संयुक्तो निपीतः कामलापहः ॥९५॥

अर्थ–त्रिफलेका रस अथवा गिलोयका रस या दारुहल्दीका रस अथवा नीमके रसको सहतके साथ प्रातःकाल पीवे तो कामलारोग दूर होजाताहै॥९५॥

चन्द्रोदयवटी.

हरीतकी वचा कुष्ठं पिप्पल्यो मरिचानि च ॥ विभी-
तकस्य मज्जानि शंखनाभिर्मनःशिला ॥ ९६ ॥

एतानि समभागानि अजाक्षीरेण पेषयेत् ॥ बाद-
रास्थिसमावर्त्तिश्छायाशुष्का च धारयेत् ॥ ९७ ॥
नाशयेत्तिमिरं कंडूं पटलान्यर्मदान्यपि ॥ अधि-
कानि च मांसानि पुष्पं वर्षशतादपि ॥ ९८ ॥
वटी चन्द्रोदया नाम नृणां दृष्टिप्रसादिनी ॥ मास-
मात्रप्रयोगेन नेत्ररोगाननेकधा ॥ ९९ ॥

अर्थ-हरड, वच, कूठ, पीपल, मिरच, बहेडेकी मींग, शंखकी नाभि और मैनशिल इन औषधियोंको समान भाग लेकर बकरीके दूधमें पीसकर बेरकी गुठलीकी बराबर बत्ती बनाकर छायामें सुखावे इन बत्तियोंको नेत्रोंमें लगावे यह बत्ती तिमिररोग, खुजली, कडूरोग, अर्म पटल, जिसकी आंखकी पुतलीके मांसका भाग बढगया होय और बहुत दिनोंका फूला ये सब रोग दूर होजाते है यह चन्द्रोदयवटी दृष्टिको अतीव निर्मल करती है इसको एक मास पर्य्यन्त नेत्रोंमें आंजनेसे अनेक प्रकारके नेत्ररोग दूर होते है ॥ ९६-९९ ॥

एरंडमूलिका पीता मधुना हन्ति कामलाम् ॥
द्रोणपुष्पीरसोपेता रोचना लोचनांजनात् ॥ १०० ॥

अर्थ-सहतमें अण्डकी जडको घिसकर पीनेसे कामला दूर होजाता है द्रोणपुष्पी (गूमा) के रसमें गोरोचन मिलाकर नेत्रोंमें लगानेसे कामला दूर होजाताहे ॥ १०० ॥

अपामार्गशिफा पीता सतक्रा कामलापहा ॥
विष्णुक्रांताशिफा तक्रपीता वा तद्विनाशकृत् ॥ १०१ ॥

अर्थ-चिरचिटेकी जडको मट्ठेके साथ सेवन करनेसे कामला दूर होजाताहै विष्णुक्रान्ता कोइली की जडको तक्र (मट्टे) के साथ सेवन करनेसे कामला दूर होजाताहै ॥ १०१ ॥

सुश्वेतपाटलामूले मधुक्षीरयुतेऽथवा ॥
धात्रीमूले सुतक्रेण पीते नश्यति कामला ॥ १०२ ॥

अर्थ–सफेद पाढलकी जडको सहत और दुधके साथ सेवन करनेसे कामला दूर होजाता है, आमलेकी जडको मट्ठेके साथ पीनेसे कामला नाशको प्राप्त होता है ॥ १०२ ॥

जालिनीफलमध्यास्थिश्यामासर्षपनस्यतः ॥ किंवा तोयेन संपिष्टकुमारीकंदनस्यतः ॥ १०३ ॥ क्षीयते कामला पित्तात्पीतनेत्राङ्गलक्षणः ॥ वन्ध्याकर्कोटिकामूलनस्यं काचस्य नाशकृत् ॥ १०४ ॥

अर्थ–तोरईकी बीजोंकी मींग, पीपल और सरसो इन तीनोंका नास लेनेसे कामला दूर होजाताहै अथवा घीकुआरको जलमें पीसकर नास लेनेसे पित्तसे उत्पन्न हुआ और जिसमें आंखका भाग पीला होगया हो ऐसा कामलारोग दूर होजाता है वांझ ककोडेकी जडका नास लेनेसे नेत्रोंका काच रोग शांत होजाता है ॥ १०३ ॥ १०४ ॥

निद्रातन्द्राकी चिकित्सा.

सैन्धवं वारिणा पिष्टं मधुकं डुल्लरीफलम् ॥
निहन्त्येतद्रसो नस्यान्निद्रां घूर्मिं च वेगतः ॥ १०५ ॥

अर्थ–सेधा नमक, मुलैठी और दुलुरीके फल इन औषधियोंको जलमें पीसकर नास देनेसे निद्रा और तन्द्रा शीघ्र ही शान्त होजातीहैं ॥ १०५ ॥

शिग्रुबीजोत्पलं नागकेशरं पिष्टमंभसा ॥
नेत्रयोर्निहितं हन्ति निद्रां वेगेन रोगिणः ॥ १०६ ॥

अर्थ–सैंजिनेके बीज, कमल और नागकेशर इन औषधियोंको जलमें पीसकर नेत्रोंमें डालनेसे रोगीकि निद्रा शीघ्र ही नाशको प्राप्तहोजातीहै ॥ १०६ ॥

अश्वलालातिलापिष्टा मधुना मरिचान्यथ ॥
हरंति लोचनस्थानि निद्रां घूर्मिसमन्विताम् ॥१०७॥

अर्थ-घोडेकी लालको तिलोंमें पीसकर और सहतमें मिरचोंको पीसकर पश्चात् दोनोंको एकत्र करके नेत्रोमें आंजनेसे तन्द्रा और निद्रा दूर होजाती है ॥१०७॥

त्रिफलासैंधवं वारिपिष्टं मधुकमिश्रितम् ॥
निद्रां निहन्ति नस्येन महतीमपि वेगतः ॥ १०८ ॥

अर्थ-त्रिफले और सेंधा नमकको जलमें पीसकर इसमें मुलैठीका चूर्ण मिलाकर नाश देनेसे निद्रानाश होतीहै ॥ १०८ ॥

तुरंगलालासहिता मनःशिला निहन्ति तन्द्रीं नयनांजनेन ॥ ताम्बूलपत्राणि हरीतकी च सुकुट्टिता नेत्रविकारहंत्री ॥ १०९ ॥

घोडेकि लालमें मैनशिलको पीसकर नेत्रोंमें आंजनेसे तन्द्राका नाश होता है, नागरवेल के पान तथा हरड इन दोनोको विधिपूर्वक घोटकर पश्चात् नेत्रोंमें आंजनेसे निद्रादिक विकार दूर होजातेहैं ॥ १०९ ॥

काकमाचीशिफा शीर्षे बद्धा निद्रापहा तथा ॥
मूलिका काकजंघाया नरस्याक्षिप्रसादिनी॥११०॥

इति श्रीश्रीकण्ठसूरिविरचिते हितोपदेशे
चतुर्थः समुद्देशः ॥ ४ ॥

मकोयकी जडको शिरमें बांधनेसे निद्रा नाशको प्राप्त होतीहै काकजंघा कि जडको जलमें पीसकर नास देनेसे नेत्र स्वच्छ होतेहैं ॥ ११० ॥

इति श्रीपरमजैनाचार्य्यश्रीकण्ठसूरिविरचिते वैद्यकसारसंग्रहे हितोपदेशे भिषग्वर-हरिशंकरात्मजशंकरलालकृतभाषाटीकायां नेत्ररोग-चिकित्सावर्णनं नाम चतुर्थः समुद्देशः ॥ ४ ॥

अथ हृदयरोगाधिकारः ।

हृदयगतरोगोंकी गणना.

वातपित्तकफोद्भूताः कासो हृच्छूलमुध्वसी ॥
क्षयरुग्गुल्महिक्काश्च रोगाः सप्तैव हृद्गताः ॥ १ ॥

अर्थ–खांसी, हृदयरोग, शूल, उध्वसीरोग, क्षयरोग, गुल्म और हिक्का यह सात रोग वात, पित्त और कफसे हृदयमें उत्पन्न होते हैं इसकारण इनको हृदय-रोग कहते हैं ॥ १ ॥

वातजकासके लक्षण.

शूलं हृत्कुक्षिशीर्षेषु स्वरभंगोऽथ कासति ॥
शुष्कमत्युच्चशब्देन वातकासस्य लक्षणम् ॥ २ ॥

अर्थ वातसे उत्पन्नहूई खांसीमें रोगीके हृदय, कोख और मस्तकमें शूल होताहैं स्वरभंग होजाय, तथा अत्यन्त ऊंचे स्वाससे सूखा खांसताहै यह लक्षण वातजखांसीके जानने ॥ २ ॥

वातजखांसीकी चिकित्सा.

शुंठी दुरालभा द्राक्षा कर्चूरं तवराजकम् ॥
वातकासं निहन्त्येषां तिलयुक्तं सचूर्णकम् ॥ ३ ॥

अर्थ–सोंठ, धमासा, दाख, कचूर, तुरंजवीन और तिल इन औषधियोंका चूर्ण सेवन करनेसे वातजखांसी दूर होजातीहै ॥ ३ ॥

शुण्ठी दुरालभैरण्डमूलं कर्कटश्रृंगिकम् ॥ कर्चूरो देवदारुश्च चूर्णमेषां समांशतः ॥ ४ ॥ उष्णेन वारिणा किंवा तैलेनालोड्य भक्षितम् ॥ वातजं श्लेष्मजं कासं नाशयत्यतिवेगतः ॥ ५ ॥

अर्थ–सोंठ, धमासा, अण्डकी जड, काकडासिंगी, कचूर, और देवदारु इन औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण बनावे इस चूर्णको गरमजल अथवा तेलमें

मिलाकर पीवे तो वायुसे उत्पन्न हुई अथवा कफसे उत्पन्नहुई खांसी दूर होजाती है ॥ ४ ॥ ५ ॥

पित्तजकासके लक्षण.

दाघो भ्रमस्तथा छर्दिः पित्तनिष्ठीवमल्पकम् ॥
पीतवर्णं शिरःशूलं पित्तकासस्य लक्षणम् ॥ ६ ॥

अर्थ–पित्तकी खांसीमें रोगीको छातीमें दाह, भ्रम और वमन होय, पित्तके साथ मिलाहुआ पीले रंगका थोडा २ कफ निकले और मस्तकमें पीडा होय यह लक्षण पित्तकी खांसीके जानने ॥ ६ ॥

पित्तजखांसीकी चिकित्सा.

पिप्पली तवराजश्च तवक्षीरं त्रयं समम् ॥
मधुसर्पिर्युतं भुक्तं पित्तकासविनाशनम् ॥ ७ ॥

अर्थ–पीपल, तुरंजबीन, वंशलोचन इन तीनों औषधियोंको समान भाग लेकर सहत अथवा घीमें मिलाकर सेवन करनेसे पित्तकी खांसी दूर होजातीहै॥७॥

मधुकं पिप्पलीमूलं दूर्वा द्राक्षा कणा समम् ॥
घृतेन मधुना भुक्तं पित्तकासविनाशकृत् ॥ ८ ॥

अर्थ–मुलैठी, पीपलामूल, दूब, दाख और पीपल इन सबको समान भाग लेकर बारीक चूर्ण करके घी अथवा सहतके साथ सेवन करनेसे पित्तज खांसी दूर होजाती है ॥ ८ ॥

मातुलुंगरसो हिंगु त्रिफला शर्करा मधु ॥
सौवर्चलसमं भुक्तं पित्तकासनिवारणम् ॥ ९ ॥

अर्थ–बिजौरे, नीबूका रस, हींग, त्रिफला, मिश्री और कालानमक इन सबको समान भाग लेकर सहतमें मिलाकर चाटनेसे पित्तकी खांसी दूर होजाती है॥९॥

कफजकासके लक्षण.

अरुचिर्भूरिनिष्ठीवं रोमांचो जडता हृदि ॥
सशब्दं च गलं ज्ञेयं श्लेष्मकासस्य लक्षणम् ॥१०॥

अर्थ–रोगीकी अन्नमें अरुचि होय, अधिकतर कफ निकले, रोमांच होआवे, छाती जकडजाय और गलेमें शब्द होय यह लक्षण कफकी खांसीके हैं ॥ १० ॥

कफकी खांसीकी चिकित्सा.

भद्रमुस्ताकणाचूर्णं समांशं मधुना सह ॥
निहन्ति भक्षितं शीघ्रं श्लेष्मकासमसंशयम् ॥ ११ ॥

अर्थ–नागरमोथा और पीपल इन दोनोंको समान भाग लेकर चूर्ण करलेवे इस चूर्णको सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे कफसे उत्पन्नहुई खांसी शीघ्रही नष्ट होजाती है ॥ ११ ॥

पथ्या कणा विश्वमुस्ता देवदारु समांशतः ॥
एतच्चूर्णं मधूपेतं श्लेष्मकासविनाशकृत् ॥ १२ ॥

अर्थ–हरड, पीपल, सोंठ, नागरमोथा और देवदारु इन औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण करलेवे। इस चूर्णको सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे कफकी खांसी दूर होजाती है ॥ १२ ॥

चित्रकः पिप्पलीमूलं पिप्पली गजपिप्पली ॥
एतच्चूर्णं समं भुक्तं मधुना श्लेष्मकासनुत् ॥ १३ ॥

अर्थ–चीता, पीपलामूल, पीपल और गजपीपल, इन औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण करके सहत मिलाकर सेवन करनेसे कफकी खांसी दूर होजातीहै १३॥

शिला व्योषाभया हिंगु विडंगं सैंधवं समैः ॥
लेहोऽयं समधुः कासहिक्काश्वासेषु शस्यते ॥ १४ ॥

अर्थ–मैनशिल, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड, हींग, वायविडंग और सेंधानमक इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर सहतमें मिलाकर चाटनेसे खांसी, हिक्का और श्वास दूर होते हैं ॥ १४ ॥

हृदयशूलकी चिकित्सा.

पीतमुष्णांभसा चूर्णं गुडूचीमरिचोद्भवम् ॥
हृच्छूलं वातशूलं च हन्ति पथ्याशिनोऽचिरात् ॥ १५ ॥

अर्थ-यदि गिलोय और मिरचोंका चूर्ण गरमजलके साथ सेवन करे तो पथ्यसे भोजन करनेवाले रोगीका हृदयशूल तथा वायुशूल शीघ्र ही दूर हो जाताहै ॥ १५ ॥

मातुलुंगरसश्चूर्णं गुडूचीमरिचोद्भवम् ॥
हृच्छूलं हंति वेगेन पीतमुष्णेन वारिणा ॥ १६ ॥

अर्थ-गिलोय और मिरचोंके चूर्णको बिजौरे नीबूके रसमें मिलाकर गरमजलके साथ सेवन करनेसे हृदयशूल तत्काल दूर होजाता है ॥ १६ ॥

सुपक्वबीजपूरस्य रसः सैन्धवमिश्रितः ॥
पीतः पथ्याशिनो हन्ति हृच्छूलमतिवेगतः ॥ १७ ॥

अर्थ-पकेहुए बिजौरे नीबूके रसमें सेंधानमक मिलाकर पीनेसे और पथ्य भोजन करनेसे हृदयशूल बहुत ही शीघ्र दूर होजाता है ॥ १७ ॥

उशीरं पिप्पलीमूलं चूर्णं कृत्वा समांशतः ॥
गोघृतेन समं पीतं हंति हृच्छूलमुल्बणम् ॥ १८ ॥

अर्थ-खस और पीपलामूल इन दोनोंको समान भाग लेकर चूर्ण करके गायके घीमें मिलाकर सेवन करनेसे हृदयशूल दूर होजाता है ॥ १८ ॥

वायुशूलकी चिकित्सा.

सुवर्चलाभया हिंगुरजमोदा च सैन्धवम् ॥
सज्जीयवोद्भवः क्षारः पयोभुक्तं च शूलहृत् ॥ १९ ॥

अर्थ-कालानमक, हरड, हींग, अजमोद, सेंधानमक, सज्जी और जवाखार इन सबका एकत्र चूर्ण करके जलके साथ सेवन करनेसे वायुशूल दूर होजाता है ॥ १९ ॥

सुवर्चलाजीरकमम्लवेतसं समं त्रयं द्व्यंशमरीच-चूर्णकम् ॥ सुपक्वपूरस्य रसेन भावितं जलेन पीतं खलु वातशूलहृत् ॥ २० ॥

अर्थ—कालानमक, जीरा और अम्लवेंत इन प्रत्येकको एकएक तोला और कालीमिरचोंका चूर्ण २ तोले लेवे इन सबको एकत्र करके अच्छे: प्रकारसे पके हुए बिजौरे नीबूके रसमें भावना देकर जलके साथ सेवन करनेसे वातशूल नष्ट होजाता है॥ २०॥

एरंडमूलतुंबुरुविडलवणसुवर्चलासहाहिंगु ॥
एतैरंबुनिपीतैर्नश्यति शूलं च गुरुगुल्मम् ॥ २१ ॥

अर्थ—अण्डकी जड, धनिया, विरियासंचर नोन, कालानमक, रेहेगमानमक और हींग इन सबका चूर्ण करके गरम जलके साथ पीनेसे वायुशूल और बढा हुआ गुल्म भी नष्ट होजाता है॥ २१॥

सौवर्चलाम्लवेतसविडलवणयुते सैन्धवातिविषे ॥
त्रिकटुकपूररसान्वितमशितं गुरुगुल्मशूलहरम्॥२२॥

अर्थ—कालानमक, अम्लवेंत, विरियासंचर नोन, सेंधा नमक, अतीस और त्रिकुटा, इन सबका चूर्ण करके बिजौरे नीबूके रसके साथ सेवन करनेसे वायुशूल और अत्यन्त बढाहुआ गुल्म दूर होता है॥ २२॥

सितैरंडशिफा हिंगु सैंधवं समचूर्णितम् ॥
तप्तेन वारिणा भुक्तं वातशूलहरं परम् ॥ २३ ॥

अर्थ—सफेद अंडकी जड, हींग और सेंधानमक इन तीनों औषधियोंका चूर्ण करके गरमजलके साथ सेवन करनेसे वायुशूल नष्ट होताहै॥ २३॥

उशीरं सैंधवं हिंगु मलमेरण्डसम्भवम् ॥
वातशूलं निहन्त्येव भुक्तं तप्तेन वारिणा ॥ २४ ॥

अर्थ—खस, सेंधानमक, हींग और अण्डकी जड इन सबका चूर्ण एकत्र करके गरम जलके साथ सेवन करनेसे वायुशूल नष्ट होताहै॥ २४॥

मन्दारमूलिकाचूर्णं भुक्तं दुग्धेन निश्चितम् ॥
वातशूलहरं देवि शूलं वा कर्णगं रवौ ॥ २५ ॥

अर्थ-रविवारके दिन आककी जडको उखाडकर चूर्ण करके दूधके साथ पीनेसे वातशूल नष्ट होताहै तथा कानका शूल भी नष्ट होताहै ॥ २९ ॥

पित्तशूलके लक्षण.

नाभिमूले खरं शूलं दाघो देहे हृदि व्यथा ॥
पित्तशूलस्य विज्ञेयं लक्षणं सुविचक्षणैः ॥ २६ ॥

अर्थ-नाभिकी जडमें तीव्र शूल होय, शरीरमें दाह होय, हृदयमें पीडा होय ये सब लक्षण होय तो वैद्य पित्तका शूल जाने ॥ २६ ॥

पित्तशूलकी चिकित्सा.

त्रायमाणा सिता द्राक्षा कूष्माण्डं च शिवारसः ॥
एतद्भक्षणतो यांति पित्तशूलान्यनेकधा ॥ २७ ॥

अर्थ-त्रायमान, मिश्री, दाख, पेठा और आमलेका रस इन औषधियोंको भक्षण करनेसे अनेक प्रकारसे उत्पन्नहुआ पित्तशूल दूर होजाता है ॥ २७ ॥

धात्रीफलोद्भवं चूर्णं भक्षितं मधुसंयुतम् ॥
पित्तशूलं तथा दाघं नाशयत्यतिवेगतः ॥ २८ ॥

अर्थ-आमलेके चूर्णको सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे पित्तशूल और पित्तसम्बन्धी दाह तत्काल नष्ट होजाती है ॥ २८ ॥

त्रायमाणा कणामूलं त्रिवृता मधुकं मधु ॥
किरमालः सिता द्राक्षा कुरंटः पित्तशूलहृत् ॥ २९ ॥

अर्थ-त्रायमान, पीपलामूल, निसोत, मुलेठी, सहत, अमलतास, मिश्री, दाख और पियावांसा इन सबको एकत्र मिलाकर सेवन करनेसे पित्तशूल नष्ट होता है ॥ २९ ॥

कटुकी निंबयष्टी च त्रिफला किरमालजम् ॥
बीजमेतैः कृतः क्वाथो निपीतो दाघशूलहृत् ॥ ३० ॥

अर्थ-कुटकी, नीमके बीज, मुलेठी, त्रिफला और अमलतास इन सबका क्वाथ बनाकर सेवन करनेसे दाह सहित पित्तशूल नष्ट होताहै ॥ ३० ॥

कफशूलके लक्षण.

लक्षणं श्लेष्मशूलस्य हृदये शूलमुल्बणम् ॥
जडत्वं सर्वगात्रस्य न निद्रा न रुचिस्तथा ॥३१॥

अर्थ—रोगीके हृदयमें अत्यन्त शूल होय, शरीरमें जडता, निद्रा और रुचिका नाश ये सब कफजशूलके लक्षण जानने ॥ ३१ ॥

कफशूलकी चिकित्सा.

चूर्णं पथ्यावचावह्निकटुरोहिणिजं समम् ॥
श्लेष्मशूलं हरत्याशु पीतं गोमूत्रसंयुतम् ॥ ३२ ॥

अर्थ—हरड, वच, चीता और कुटकी इन औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण करके गायके मूत्रके साथ पीनेसें तत्काल कफजशूल दूर होजाता है॥ ३२ ॥

बीजपूररसोपेतो गुडः श्लेष्मसमुद्भवम् ॥
हृद्रोगं नाभिशूलं च गुल्मं वा हन्ति निश्चितम्॥३३॥

अर्थ—बिजौरेनीबूके रसमें गुड मिलाकर सेवन करनेसे कफसे उत्पन्न हुआ शूल, हृदयशूल, नाभिशूल और गुल्म ये रोग निश्चय दूर होजाते है ॥ ३३ ॥

रिंगिणीदुल्लरीबिल्वबीजपूराङ्घ्रयोश्मभित ॥ गोक्षीरेणान्वितैरेतैः कृतः क्वाथोऽतिशीतलः ॥ ३४ ॥ एलाहिंगुयवक्षारसैंधवप्रतिवापतः ॥ पीतमेरंडतैलेन कटिहृद्गुदमेढ्रजम् ॥ ३५ ॥ जाठरं नाभिशूलं च पृष्ठकुक्षिगतं तथा ॥ शिरःकर्णाक्षिशूलं च नाशयत्यतिवेगतः ॥ ३६ ॥

अर्थ—कटेरी, दुलरी, बेल, बिजौरेनीबूकी जड और पाषाणभेद इन औषधियोंका दूधमें क्वाथ बनाकर ठण्डा करके पश्चात् इलायची, हींग, जवाखार और सेंधानमक इनका चूर्ण डालकर अण्डीके तेलके साथ पीनेसे कटिशूल, गुदा

शूल, लिंगशूल, उदरशूल, नाभिशूल, पृष्ठशूल, कुक्षिशूल, मस्तक और नेत्रलशू तत्काल दूर होजातेहैं (इन औषधियोंसे विरेचन होताहै) ॥ ३४॥३५॥३६ ॥

सबप्रकारके शूलरोगकी चिकित्सा.

शुण्ठीसुवर्चलाहिंगुयुतमुष्णं जलं पिबेत् ॥
क्षणेन नाशयत्येतत्सर्वशूलानि देहिनः ॥ ३७ ॥

अर्थ–सोंठ, कालानमक और हींग इनका चूर्ण करके गरमजलके साथ सेवन करनेसे मनुष्यके सब प्रकारके शूलरोग क्षणभरमें नष्ट होजाते हैं ॥ ३७ ॥

अजमोदा वचा हिंगु लवणं विडपूर्वकम् ॥
शुण्ठी सुवर्चला कृष्णा दुल्लरी रिंगणी तथा ॥ ३८ ॥

अर्थ–अजमोद, वच, हींग, विरियासंचर, नमक, सोंठ, कालानमक, पीपल, दुल्लरी, कठेरी, बिजौरेनींबूके बीज और तुम्बुरु इन सबको समान भाग लेकर काढा बनाकर पनिसे अनेक प्रकारके शूल नष्ट होतेहैं ॥ ३८ ॥

बीजपूरस्य बीजानि तुंबुरुः समभागिनः ॥
एतत्क्काथस्य पानेन यांति शूलान्यनेकधा ॥३९॥

वच, कालानमक, हींग, कूठ और इन्द्रजौ इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण बनाकर गरमजलके साथ पीनेसे सब प्रकारके शूल दूर होतेहैं ॥ ३९ ॥

वचासुवर्चलाहिंगुकुष्ठमिंद्रयवाः समम् ॥ चूर्णमु-
ष्णांभसा पीतं सर्वशूलनिकृन्तनम् ॥ ४० ॥
अजमोदावचाकुष्ठमम्लवेतससैंधवैः ॥ सर्जिक्षार-
स्तथा पथ्या त्रिकटुब्रह्मदण्डिका ॥ ४१ ॥ मुस्ता
सुवर्चला विश्वा लवणं विडपूर्वकम् ॥ पीतं तक्रा-
न्वितं चूर्णममीषां सर्वशूलहृत् ॥ ४२ ॥

अर्थ–अजमोद, वच, कूठ, अमलवेंत, सेंधानमक, सज्जीखार, हरड, सोंठ,

मिरच, पीपल, ब्रह्मदण्डी, नागरमोथा, कालानमक, सोंठ और विडलवण इन औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण बनाकर तक्र (मट्ठे) के साथ पीनेसे सब प्रकारके शूलरोग दूर होतेहैं ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

यवानी सैंधवं दारु यवक्षारः सुवर्चलः ॥ विश्वैरंडशिफा हिंगु लवणं विडपूर्वकम् ॥ ४३ ॥ एतच्चूर्णसमं श्लक्ष्णं गुडूचीपक्कपायसैः ॥ निपीतं सर्वशूलानि नाशयत्यतिवेगतः ॥ ४४ ॥

अर्थ—अजवायन, सेंधानमक, देवदारु, जवाखार, कालानमक, सोंठ, अण्डकी जड, हींग, और विडलवण इन औषधियोंको समान भाग लेकर बारीक चूर्ण करके उसमें गिलोय मिलाकर पकेहुए दूधके साथ पीनेसे सबप्रकारके शूलरोग शीघ्रही नष्ट होतेहैं ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

अम्लवेतसनिर्यासः सैंधवं शुण्ठिरामठम् ॥ सुवर्चलाजमोदा च देवदारुः समांशकम् ॥ ४५ ॥ स्थाल्यां प्रक्षिप्य तत्सर्वं वह्निं प्रज्वालयेदधः ॥ क्षारः स्यादिति संपिष्ट्वा तत्पीतं तीव्रशूलनुत् ॥ ४६ ॥

अर्थ—अमलवेंतका रस, सेंधानमक, सोंठ, हींग, कालानमक, अजमोद और देवदारु इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर लोहेकी कढाईमें डालकर नीचे अग्नि जलाकर पकावे इसप्रकार करनेसे क्षार सिद्ध होजाताहै, इस क्षारको जलके साथ पीनेसे तीव्र शूल भी नाशको प्राप्त होताहै ॥ ४५ ॥ ४६ ॥

टिंटुकं शिग्रुमूलं च मयूरः सैंधवं समम् ॥ मूलाजीर्णोद्भवं शूलं यात्येतच्चूर्णभक्षणात् ॥ ४७ ॥

अर्थ—अरलूकी जड, सहिंजनेकी जड, कपूरकचरी और सेंधानमक इन

---

१ इस योगमें दोवार जो सोंठ कहीहै इसका प्रयोजन यह है कि सोंठ दोभाग लेनी चाहिये।

औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण बनाकर सेवन करनेसे प्रथम अजीर्ण होनेसे जो शूल उत्पन्न होताहै वह शीघ्र ही नष्ट होताहै ॥ ४७ ॥

शुण्ठी सुवर्चला हिंगु मूलं पाडलजं समम् ॥
तच्चूर्णमंभसा पानाद्यान्ति शूलान्यनेकधा ॥ ४८ ॥

अर्थ—सोंठ, कालानमक, हींग और पाढकी जड इन औषधियोंका चूर्ण बनाकर जलके साथ पीनेसे अनेक प्रकारके शूलरोग दूर होते हैं ॥ ४८ ॥

अजमोदा तथा पाठा त्रिकटुः समचूर्णकम् ॥
भुक्तमुष्णांभसा पानाद्यांति शूलान्यनेकधा ॥ ४९ ॥

अर्थ—अजमोद, पाढकी जड, सोंठ, मिरच और पीपल इन औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण बनाकर गरमजलके साथ पीनेसे अनेक प्रकारके शूल-रोग दूर होतेहैं ॥ ४९ ॥

परिणामशूलकी चिकित्सा.

परिणामोद्भवं शूलं त्रिफलालोहचूर्णकम् ॥
भक्षितं मधुना सार्धं नाशयत्यतिवेगतः ॥ ५० ॥

अर्थ—त्रिफला (हरड, बहेडा, आमला) और लोहभस्मका चूर्ण बनाकर सहत मिलाकर सेवन करनेसे परिणामशूल शीघ्रही नष्ट होताहै ॥ ५० ॥

भृष्टदालीकृता मुद्गा शालिलाजाश्च सैंधवम् ॥
धान्यं जीरं जले स्विन्ना यवागूरिति कथ्यते ॥५१॥

अर्थ—भुनीहुई मूंगकी दाल और शालिधानकी खीलें इनको छगूने जलमें पकाकर तथा उसमें सेंधानमक, धनियाँ और जीरा मिलाकर सिद्ध करे। इसको यवागू कहतेहैं ॥ ५१ ॥

पाचनी क्षुत्करी शूलनाशिनी च त्रिदोषहृत् ॥
गुर्विणी क्षतवृद्धानां बालानां च हितावहा ॥५२॥

अर्थ—यह यवागू, अन्नको पचानेवाली, भूंखको बढानेवाली, शूलको नाश-

करनेवाली, त्रिदोषनाशक, गर्भवती स्त्री, व्रणरोगी, वृद्धमनुष्य और बालकको अतीव हितकारक है ॥ ९२ ॥

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः ॥
यवागूः सेविता सिद्धा दीपनी पाचनी हिता ॥ ९३ ॥

अर्थ—यदि पूर्वोक्त यवागूमें पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता और सोंठ इनका चूर्ण मिलाकर सेवन कियाजाय तो दीपन और पाचन होजाती है ॥ ९३ ॥

उध्वसीकी चिकित्सा.

कर्षार्द्धप्रमितं चूर्णं विभीतफलसंभवम् ॥
भोजनानंतरं हन्ति मधुना लीढमुध्वसी ॥ ९४ ॥

अर्थ—बहेडेकी छालका चूर्ण आधा तोला लेकर भोजनके पश्चात् सहतमें मिलाकर चाटनेसे उध्वसीनामक रोग नाशको प्राप्त होताहै ॥ ९४ ॥

क्षयरोगके लक्षण.

श्वासकासौ बलं हीनं जडतांगेऽग्निमंदता ॥ ज्वरोऽरुचिरतीसारो वांतिदाहोंघ्रिपाणिषु ॥९५॥ दौर्गंध्यं वदने पीडा शिरसः कुक्षिवेदना ॥ पूतिनिष्ठीवनं शोफः क्षयरोगस्य लक्षणम् ॥ ९६ ॥

अर्थ—जिसमें श्वास और खांसीका होना, बलकी हीनता, अंगोंमें जडता, अग्निकी मंदता, ज्वर, अरुचि, अतीसार और वमनका होना पांव और हाथोंमें दाह, मुखमें दुर्गन्धका आना, शिरमें पीडा, कोखमें वेदना, राधका थूकना और सूजन ये सब लक्षण जिसमें होयँ उसको क्षयरोग कहतेहैं ॥ ९५ ॥ ९६ ॥

क्षयरोगकी चिकित्सा.

कणाद्राक्षासितालेहक्षयहन्मधुतैलवान् ॥
मधुसर्पिर्युतो वाश्वगन्धाकृष्णासितोद्भवः ॥ ९७ ॥

अर्थ—पीपल, दाख और मिश्री इनका चूर्ण बनाकर सहत और तेलमें

मिलाकर चाटनेसे क्षयरोग दूर होताहै अथवा असगन्ध,पीपल और मिश्री इनका चूर्ण बनाकर सहत तथा घी मिलाकर चाटनेसे क्षयरोग दूर होता है ॥ ५७ ॥

शर्करामधुसंयुक्तं नवनीतं लिहन्क्षयी ॥
क्षीराशी लभते पुष्टिं तत्तुल्ये चाज्यमाक्षिके ॥५८॥

अर्थ—मिश्री और सहतमें मक्खन मिलाकर सेवन करनेसे और ऊपरसे दूध पीनेसे क्षयरोगी पुष्ट होताहै । अथवा घी और सहत मिलाकर सेवन करनेसे उपर्युक्त गुण होताहै ॥ ५८ ॥

शर्करा पिप्पली द्राक्षा तिलयुक्तं समं त्रयम् ॥
श्वासं कासं तथा छर्दिं क्षयरोगं च हन्ति वै ॥५९॥

अर्थ—मिश्री, पीपल और दाख इन तीनोंको समान भाग लेकर तिलोंके साथ सेवन करनेसे श्वास, खांसी, वमन तथा क्षयरोग निश्चय नष्ट होजाते हैं ॥ ५९ ॥

लवंगं पिप्पली शुण्ठी वाजिगन्धासितासितैः ॥
हन्ति श्वासं तथा कासं क्षयरोगं च चूर्णकम्॥६०॥

अर्थ—लौंग, पीपल, सोंठ, असगन्ध, और मिश्री इन औषधियोंका चूर्ण बनाकर सेवन करनेसे श्वास, खांसी, तथा क्षयरोग दूर होजाते हैं ॥६०॥

तवराजः कणा द्राक्षा खर्जूरं मधुकं त्रुटिः ॥ लवंगं पत्रकं नागकेशरं च समांशतः ॥ ६१ ॥ मधुना भक्षितं चूर्णमेतेषां हन्ति निश्चितम् ॥ भ्रमं दाघं शिरःपीडा क्षयरोगं तथोल्बणम् ॥ ६२ ॥

अर्थ—तुरंजबीन, पीपल, दाख, खजूर, मुलेठी, इलायची, लौंग, तमालपत्र और नागकेशर इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण बनावे इस चूर्णको सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे भ्रम, दाह, शिरकी पीडा तथा अत्यन्त उल्बण क्षयरोग निश्चय दूर होता है ॥ ६१ ॥ ६२ ॥

तवराजकणाद्राक्षास्तिलाः सर्वं समांशतः ॥
भक्षितं मधुना हन्ति क्षयरोगमपि ध्रुवम् ॥ ६३ ॥

अर्थ–तुरंजवीन, पीपल और दाख इन तीनों औषधियोंको समान भाग लेकर तिलोंके साथ सेवन करनेसे श्वास, खांसी, वमन और क्षयरोग नष्ट होजाताहै६३

तवराजकणावाजिगन्धा मधुघृतान्विताः ॥
भक्षिता हन्ति दुर्वारं क्षयरोगमसंशयम् ॥ ६४ ॥

अर्थ--तुरंजवीन, पीपल और असगन्धको सहत तथा घीमें मिलाकर सेवन करनेसे अत्यन्त दुःसाध्य क्षयरोग भी निश्चय नष्ट होजाता है ॥ ६४ ॥

विडंगं पिप्पलीमूलमुशीरं नागकेशरम् ॥ लवंगः पद्मकं पत्रं त्रिफला च कटुत्रयम् ॥ ६५ ॥ रास्नाश्वगंधिका दारु स्नुही च ब्रह्मदंडिका ॥ द्विभागशर्करायुक्तं चूर्णमेषां हि भक्षितम् ॥ ६६ ॥ श्वासं कासं भ्रमं छर्दिं हृद्रोगं विषमज्वरम् ॥ क्षयरोगं तथा गुल्मं नाशयत्यतिवेगतः ॥ ६७ ॥

अर्थ–वायविडंग, पीपलामूल, खस, नागकेशर, लौंग, पद्माख, तमालपत्र, त्रिफला, त्रिकुटा, रास्ना, असगन्ध, देवदारु, थूहरकी जड और ब्रह्मदण्डी इन सब औषधियोंको एकएक तोला लेकर तथा इन सबसे दुगुनी मिश्री लेवे इन सबका चूर्ण बनाकर सेवन करनेसे श्वास, खांसी, भ्रम, वमन, हृदयरोग, विषमज्वर, क्षयरोग और गुल्मरोग ये सब शीघ्र ही नष्ट होजाते हैं ॥ ६५–६७ ॥

शुण्ठी दुरालभा द्राक्षा कणा कर्कटशृंगिका ॥
शतपुष्पा शवाजीरं वन्हिर्मधुगुडान्वितम् ॥ ६८ ॥
भक्षितं क्षयरोगघ्नं आटरूषरसेन वा ॥ गव्येन नवनीतेन पाचितं तत्फलोद्भवम् ॥ ६९ ॥ तेनैव

सर्पिषा चूर्णं भक्षितं हन्ति निश्चितम् ॥ क्षयरोगं तथा कासं श्वासं शोणितमारुतम् ॥ ७० ॥

अर्थ-सोंठ, धमासा, दाख, पीपल, काकडाशिंगी, सौंफ, सोया, जीरा और चीता इन सबका चूर्ण बनाकर सहत और गुडमें मिलाकर सेवन करनेसे अथवा अडूसेके रसके साथ सेवन करनेसे क्षयरोग नष्ट होजाताहै गायके मक्खनमें अडूसेके फलको पकावे जब पककर घी होजाय तब उसमें उपर्युक्त चूर्ण मिलाकर सेवन करनेसे भी क्षयरोग खांसी श्वास और वातरक्त निश्चय नष्ट होजाते हैं॥ ६८-७० ॥

क्षयकासके लक्षण.

उरस्तंभं सपीडं च पीतं नीष्ठीवनं घनम् ॥ ज्वरः कंपस्तृषा पीडा कुक्षौ दुर्बलताऽरुचिः ॥ ७१ ॥ सघर्घरं गलं भेदो वैवर्ण्यं बलहीनता ॥ भुक्ताजीर्णं ज्वरश्चेति क्षयकासस्य लक्षणम् ॥ ७२ ॥ ॥

अर्थ-छाती जकडजाय तथा उसमें पीडाहोय, थूक पीला और गाढा निकले, ज्वर आवे, कंप होय, तृषा होय, कोखमें पीडा होय, शरीर कृश होय, अरुचि होय, गलेमें घरघर शब्द होय, दस्त होय, शरीरका रंग बदल जाय, बलहीनता, खाया हुआ अन्न पचे नही और ज्वर होय ये लक्षण क्षयकी खांसीके जानने ॥ ७१ ॥ ७२ ॥

क्षयजखासीकी चिकित्सा

पाठा कणा निशा वह्निर्मधुरी च रसांजनम् ॥ मंजिष्ठाया रजो भुक्तं क्षयकासनिवारणम् ॥ ७३ ॥

अर्थ-पाढ, पीपल, हल्दी, चीता, सौंफ, रसौत और मंजीठ इनका चूर्ण बनाकर सेवन करनेसे क्षयकी खांसी नष्ट होजाती है ॥ ७३ ॥

गुल्मरोगके लक्षण

अरुचिर्वांतशीर्षी च रोधो मूत्रपुरीषयोः ॥ उत्फुल्ल-

मुदरं शूलं नाभौ कुक्षिशिरोऽथवा ॥ ७४ ॥ सर्वगु-
ल्मेषु सामान्यं निदानं कथितं बुधैः ॥ वातपित्ता-
दिभेदेन कथ्यंते ते तु हेतुभिः ॥ ७५ ॥

अर्थ—गुल्मरोगमें वायु प्रधान है, गुल्मरोगीके अरुचि होय, मलमूत्र रुकरुककर आवे, पेटमें अफरआवे, नाभिमें शूल होय, कोख और शिरमें पीडा होय, सर्व प्रकारके गुल्मरोगके ये सामान्य लक्षण हैं ऐसा विद्वानोंने कहा है अब पृथक् २ कारणोंसे जो वात, पित्त, कफ इत्यादिके कोपसे वातगुल्म पित्तगुल्म इत्यादि उत्पन्न होते हैं उनको कहते हैं ॥ ७४ ॥ ७५ ॥

वातगुल्मके लक्षण.

उत्फुल्लमुदरं शूलं पीडा वा मस्तकेऽसकृत् ॥
उदुंबरफलाकारो वातगुल्मः प्रजायते ॥ ७६ ॥

अर्थ—वायुगुल्म गूलरके फलके आकार होताहै तथा उसमें पेटका फूलना, पीडाका होना और वारंवार माथेमें पीडा होती है ॥ ७६ ॥

वातगुल्मकी चिकित्सा.

मरिचं पिप्पली शुंठी कटुकं हेम वह्निजः ॥ सुव-
र्चला वचा क्षारः प्रत्येकं कर्षमात्रकम् ॥७७॥ पला-
नि षोडशाज्यस्य सुपक्कं मृदुवह्निना ॥ वातगुल्मं
कृमीन्हन्ति भुक्तं श्वासमसंशयम् ॥ ७८ ॥

अर्थ—सोंठ, मिरच, पीपल, कुटकी, हीमज, चीता, काला नमक वच और जवाखार इन प्रत्येक औषधि एकएक तोला लेवे और घी चौसठ तोले लेवे इन औषधियोंका कल्क बनाकर घीमें डालकर मंदमंद अग्नि से पकावे इस घृतको सेवन करनेसे वातगुल्म, कृमि और श्वास रोग निश्चय नष्ट होजाता है॥७७॥७८॥

बीजपूररसो हिंगु सैंधवं विडपूर्वकम् ॥
लवणं दाडिमं भुक्तं शिवया वातगुल्महृत् ॥ ७९ ॥

अर्थ-बिजौरे, नीबूके रसमें हींग, सेंधा नमक, बिडलवण, अनार और हरड इन औषधियोंका कल्क बनाकर सेवन करनेसे वायुगुल्म दूर होताहै ॥ ७९ ॥

तुंबुरुः सैन्धवं हिंगु पथ्या पुष्करमूलिका ॥
सुवर्चलाऽशितं वातगुल्महृत्क्षारवारिणा ॥ ८० ॥

अर्थ-तुम्बुरूके बीज, सेंधानमक, हींग, हरड, पोहकरमूल और काला-नमक इन सबको एकत्र पीसकर जवाखारके जलके साथ सेवन करनेसे वातगुल्म दूर होता है ॥ ८० ॥

विडंगत्रिफलाव्योषचव्यधान्याग्निकल्कितम् ॥
घृतं क्षीरेण संसिद्धं पानात्पवनगुल्महृत् ॥ ८१ ॥

अर्थ-वायविडंग, त्रिफला, सोंठ, मिरच, पीपल, चव्य, धनियां और चीता इन सब औषधियोंका कल्क बनाकर उसमें दूध डालकर घृतको पकावे जब केवल घृतही बाकी रहजाय तब उतारकर छान लेवे इसमेंसे प्रतिदिन दो तोले प्रमाण सेवन करे तो वातगुल्म दूर होजाताहै ॥ ८१ ॥

घृत पकानेकी विधि ।

स्नेहादष्टगुणं क्षीरं क्षीरादंभश्चतुर्गुणम् ॥
घृतशेषं च कर्तव्यं घृतपाके त्वयं विधिः ॥ ८२ ॥

अर्थ-घीसे दूध आठगुना और दूधसे जल चौगुना लेवे जब पकतेपकते केवल घी ही बाकी रहजाय तब उतार लेवे यह घृतपाककी विधि है ॥ ८२ ॥

पित्तगुल्मके लक्षण.

स्वेदः श्वासो भ्रमो वक्रं कटुकं च जलान्वितम् ॥
तृषादाघ इति ज्ञेयं पित्तगुल्मस्य लक्षणम् ॥ ८३ ॥

अर्थ-रोगीको पसीना आवे, श्वास होय, भ्रम होय, मुख कडवा होजाय और पानी भरआवे, तृषा लगे, और दाह होय तो पितगुल्मके लक्षण जानने ॥ ८३ ॥

पित्तगुल्मकी चिकित्सा.

भेषजस्य विभीतस्य शिवायाः समचूर्णकम् ॥
पित्तगुल्मं हरत्याशु भुक्तं शर्करया सह ॥ ८४ ॥

अर्थ–सोंठ, बहेडा और आमलोंका चूर्ण समान भाग लेकर मिश्री मिलाकर सेवन करनेसे पित्तगुल्म तत्काल नष्ट होताहै ॥ ८४ ॥

कफगुल्मके लक्षण.

अंतर्दाहो बहिः शीतमास्यं स्निग्धं जलान्वितम् ॥
श्वासो रुचिरिति ज्ञेयं श्लेष्मगुल्मस्य लक्षणम् ॥ ८५॥

अर्थ–शरीरके भीतर दाह होय और ऊपरसे शीत लगे, मुख चिकना होय तथा पानीभर आवे, श्वास होय और अरुचि होय तो कफजगुलमके लक्षण जानने ॥ ८५ ॥

कफजगुल्मकी चिकित्सा.

वचाविश्वाकणामूलं क्षाराग्नीनां पलंपलम् ॥
द्विषट्पलं घृतं पक्त्वा भक्षितं श्लेष्मगुल्मनुत्॥८६॥

अर्थ–वच, सोंठ, पीपलामूल, जवाखार और चीता यह प्रत्येक औषधि चारचार तोले लेवे इन सब औषधियोंका कल्क बनाकर उसमें ४८ तोले घी मिलाकर पकावे इस घृतको सेवन करनेसे कफजगुलम नष्ट होताहै ॥ ८६ ॥

त्रिदोषगुल्मके लक्षण.

अन्तर्दोषोऽतिमंदाग्निः कृशतांगगताः शिराः ॥
कृष्णास्त्रिदोषगुल्मस्य चिह्नमेतदसंशयम् ॥ ८७ ॥

अर्थ–शरीरके भीतर वातादिदोषोंका प्रकोप होय, जठराग्नि अत्यन्त मंद होजाय, शरीर कृश होजाय और शरीरकी नसें काली होजायँ ये लक्षण त्रिदोषगुलमके जानने ॥ ८७ ॥

हिक्कारोगकी चिकित्सा.

मातुलुंगरसैर्लाजासैन्धवैः पाचितं घृतम् ॥

हृद्दोषदायिनी हिक्का तस्मिन्भुक्ते निवर्त्तते ॥८८॥

अर्थ-विजौरेनीबूका रस, धानोंकी खीलें और सेंधानमक इनके कल्कके द्वारा घीको पकाकर सेवन करनेसे हृदयको दुःख देनेवाली हिक्का शीघ्र ही नष्ट होतीहै ॥ ८८ ॥

श्वासावरोधनी हिक्का शमं यात्यतिवेगतः ॥
चुलुकैर्वा जले पीते धृत्वा श्वासं निवर्त्तते ॥८९॥

अर्थ-श्वासको रोककर एक चुल्लू जल पीनेसे श्वासको रोकनेवाली हिक्का शीघ्र ही नष्ट होजातीहै ॥ ८९ ॥

मधुकं मधुसंयुक्तं पिप्पलीशर्करान्वितम् ॥
नागरं गुडसंयुक्तं हिक्काघ्नं नावनत्रयम् ॥ ९० ॥

अर्थ-सहत और मुलैठी, मिश्री और पीपल अथवा गुड और सोंफ इन तीनोंमेंसे एक किसीका नास देनेसे हिक्कारोग नष्ट होताहै ॥ ९० ॥

स्तन्येन मक्षिकाविष्टा नस्यं वालक्तकांबुना ॥
योज्यं हिक्कानिरासाय स्तन्यं वा चन्दनान्वितम् ॥९१

अर्थ-स्त्रीके दूधमें मक्खीकी विष्टा अथवा लाखका रस अथवा स्त्रीका दूध और चन्दन इन तीनोंमेंसे किसी एक प्रयोगको सुंघानेसे हिक्कारोग नष्ट होताहै ॥ ९१ ॥

नेपाल्या गोविषान्या वा कुष्ठात्सर्जरसस्य वा ॥
धूमं कुशस्य वा साज्यं पिबेद्धिक्कोपशांतये ॥९२॥

अर्थ-मैनशिल और गोशिंगी अथवा कूठ या राल अथवा घी और डाभका धुआँ पीनेसे हिक्कारोग शान्त होजाता है ॥ ९२ ॥

अजाया लिंडिकाचूर्णं कर्षैकं तोयपाचितम् ॥
पीतं दिनत्रयं यावद्वातहिक्कोपशांतये ॥ ९३ ॥

अर्थ-एक तोला बकरीका विष्टा लेकर सोहलह तोले जलमें औटावे जब

दो तोले जल शेष रहजाय तव पीवे इसप्रकार तीन दिन करनेसे वायुजनित हिक्कारोग शान्त होता है ॥ ९३ ॥

कृष्णामलकशुण्ठीनां चूर्णं मधुसिताघृतम् ॥
मुहुर्मुहुः प्रयोक्तव्यं हिक्काश्वासनिवारणम् ॥९४॥

अर्थ—पीपल, आमला और सोंठका चूर्ण, सहत, घी तथा मिश्रीके साथ वारंवार सेवन करनेसे हिक्का तथा श्वासरोग नष्ट होता है ॥ ९४ ॥

हृदयरोगकी चिकित्सा

भल्लातं पिप्पलीमूलं क्वाथोऽयं हन्ति पानतः ॥
हृद्रोगं गुडसंयुक्तो बीजपूररसोथवा ॥ ९५ ॥

अर्थ—भिलावाँ और पीपलामूलके क्वाथमें गुड मिलाकर पीनेसे हृदयरोग नाश होता है अथवा बिजौरेनीबूके रसमें गुड मिलाकर पीनेसे भी हृदयरोग दूर होजाता है ॥ ९५ ॥

लवणांबुयुतं तैलं हृद्रोगे वातिके पिबेत् ॥
सिद्धं वा मूत्रविड्गुल्मशूलानाहनिवारणम् ॥ ९६ ॥

अर्थ—अथवा तेलमें सेंधानमक और जल मिलाकर पकावे इस तेलको पीनेसे वायुजनित हृदयरोगका अवरोध और मूत्रदोष मलविकार गुल्म, शूल और आनाह नष्ट होजाता है ॥ ९६ ॥

पंचादशाभयाकल्कं सौवर्चलपलद्वयम् ॥
घृतप्रस्थं जले सिद्धं हृद्रोगश्वासगुल्महृत् ॥ ९७ ॥

अर्थ—पन्द्रह हरडोंका कल्क करके उसमें आठ तोले कालानमक मिलाकर पश्चात् चौंसठ तोले घीमें आठ गुना जल डालकर घृतको यथा विधिसे पकावे यह घृत हृदयरोग, श्वास और गुल्मको नष्ट करता है ॥ ९७ ॥

पिप्पली बीजपूरं च नवनीतयुतं द्वयम् ॥
हृच्छूलं विनिहन्त्येव हृद्रोगं चातिदारुणम् ॥ ९८ ॥

अर्थ—पीपलका चूर्ण और बिजौरेनीबूका रस ये दोनों मक्खनमें मिलाकर सेवन करनेसे हृदयशूल तथा अत्यन्त दुस्तर हृदयरोग नष्ट होताहै ॥ ९८ ॥

शुंठी सुवर्चला हिंगु दाडिमं साम्लवेतसम् ॥
चूर्णमुष्णांभसा पेयं श्वासहृद्रोगशान्तये ॥ ९९ ॥
इति श्रीश्रीकण्ठसूरिविरचिते हितोपदेशे
पञ्चम समुद्देशः ॥ ५ ॥

अर्थ—सोंठ, कालानमक हींग, हाडिम और अम्लवेतस इन औषधियोंका चूर्ण बनाकर गरम जलके साथ सेवन करनेसे श्वास और हृदयरोग दूर होता है ॥ ९९ ॥

इति श्रीपरमजैनाचार्य्यश्रीकंण्ठसूरिविरचिते हितोपदेशे वैद्यकसारसंग्रहे
भिषग्वरहरिशङ्करात्मजशङ्करलालकृतभाषाटीकायां हृदयरोग-
चिकित्सा वर्णनं नाम पंचमः समुद्देशः ॥ ५ ॥

अथोदररोगाधिकारः ।

उदररोगके नाम.

छर्दिर्जलोदरं श्वासं शूलं प्लीहाहिजम्बुका ॥
उदरस्था ह्यमीरोगाः प्राणिप्राणापहारिणः ॥ १ ॥

अर्थ—वमन, जलोदर, श्वास, शूल प्लीहा और अहिजम्बुक ये रोग मनुष्योंके प्राणोंको हरनेवाले हैं और उदरमें होतेहैं ॥ १ ॥

वातजन्य वमनके लक्षण.

ईषदुष्णा सफेना च सशूलाथ पुनःपुनः ॥
छर्दिर्भवति लक्ष्मैतद्वातच्छर्दिः प्रकीर्तिता ॥ २ ॥

अर्थ—जो वमन किंचित् गरम और झागोंवाला होय तथा जिसमें वारंवार शूल होय और वारंवार वमनका वेग होता होय तो वायुका वमन जानना ॥२॥

वातजन्य वमनकी चिकित्सा.

कृत्वा विरेचनं पश्चान्मधुना सह भक्षितम् ॥
पथ्याचूर्णं कृतं हन्ति वातच्छर्दिमसंशयम् ॥ ३ ॥

अर्थ–प्रथम वमन रोगीको विरेचन करावे पश्चात् सहतके साथ हरडके चूर्ण देवे इसप्रकार करनेसे वातसे उत्पन्न वमन निश्चय नष्ट होजाताहै ॥ ३ ॥

सुवर्चला विडंगानि सैन्धवं कटुकत्रयम् ॥
वातच्छर्दिहरं चूर्णं भक्षितं तद्विनाशनम् ॥ ४ ॥

अर्थ–कालानमक, वायविडंग, सेंधानमक, सोंठ, पीपल और मिरच इन औषधियोंके चूर्णको सेवन करे तो वातसे उत्पन्न हुआ वमन दूर होताहै ॥ ४ ॥

सैन्धवं सर्पिषा पीतं वातच्छर्दिविनाशनम् ।
किंवा यवानिकाचूर्णं भक्षितं तद्विनाशनम् ॥ ५ ॥

अर्थ–घीके साथ सेंधानमकको पीनेसे वायुका वमन दूर होता है अथवा अजवायनको सेवन करनेसे भी वायुका वमन दूर होता है ॥ ५ ॥

पित्तवमनके लक्षण.

सदाहा लोहिता पीता हरिता साऽथवाभवेत् ॥
छर्दिरित्युच्यते लक्ष्म पित्तच्छर्दिरसंशयम् ॥ ६ ॥

अर्थ–जो वमन दाह युक्त, लाल, पीला अथवा हरा होय तो वह पित्तका वमन जानना ॥ ६ ॥

पित्तजवमनकी चिकित्सा.

पित्तच्छर्दिर्व्रजे दूर्वातंदुलोदकपानतः ॥
धात्रीरसेन वा पीतं शिवामूलं च हंति ताम् ॥ ७ ॥

अर्थ–दूबको चावलोंके जलमें पीसकर पीनेसे पित्तका वमन दूर होताहै अथवा आमलोंके रसमें आमलेकी जडको पीसकर पीनेसे पित्तका वमन दूर होताहै ॥ ७ ॥

विडंगत्रिफला शुंठी चूर्णमेषां समांशतः ॥
मधुना भक्षितं हंति पित्तच्छर्दिमसंशयम् ॥ ८ ॥

अर्थ—वायविडंग, त्रिफला और सोंठ इन औषधियोंका चूर्ण समान भाग लेकर सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे पित्तका वमन निःसंदेह नष्ट होताहै ॥ ८ ॥

कफजवमनके लक्षण.

स्निग्धा घना विशुद्धा च मधुरा साथवा भवेत् ॥
छर्दिरित्युच्यते लक्ष्म कफच्छर्दिरसंशयम् ॥ ९ ॥

अर्थ—जो वमन चिकना, गाढा, सुफेद और मधुर होय तो कफका जानना ॥ ९ ॥

कफजवमनकी चिकित्सा.

जातीपत्ररसं कृष्णा मरिचं शर्करा समम् ॥
एतानि भक्षणाद्घ्नंति कफच्छर्दिं चिरोद्भवाम् ॥ १० ॥

अर्थ—चमेलीके पत्तोंका रस, पीपल, मिरच और मिश्री इन सबको समान भाग लेकर पीसकर सेवन करनेसे बहुत दिनोंसे उत्पन्न हुआ कफका वमन दूर होजाताहै ॥ १० ॥

बीजपूररसो लाजा हरिद्रा पिप्पली मधु ॥
हरन्त्येतानि युक्तानि वान्तिं कफसमुद्भवाम् ॥ ११ ॥

अर्थ—बिजौरे नीबूका रस, खीलें, हलदी, पीपल और सहत इन सबको समान भाग लेकर एकत्र मिलाकर सेवन करनेसे कफसे उत्पन्न हुआ वमन नष्ट होताहै ॥ ११ ॥

वमनकी सामान्य चिकित्सा.

नागकेशरमालास्थिलवंगैलाकणामधु ॥
कपित्थं चूर्णमेतेषां भक्षितं वमनापहम् ॥ १२ ॥

अर्थ—नागकेशर, इमली, लौंगा, इलायची, पीपल, सहत और कैथका गूदा इन औषधियोंका चूर्ण करके सेवन करनेसे वमन बंद होजातीहै ॥ १२ ॥

कुलीरगर्भपानीयं पीतं स्वच्छं हिमोपमम् ॥
वमनं धारयत्याशु यथा शीतं हुताशनः ॥ १३ ॥

अर्थ—काकडाशिंगीको जलमें औटाकर उस जलको छानलेवे जब अत्यन्त शीतल होजाय तब सेवन करनेसे वमन शीघ्र ही शान्त होजाताहै जिसप्रकार जलसे अग्नि शान्त होजाता है ॥ १३ ॥

कपित्थं मरिचं बिल्वं शिला लाजा कणा समम् ॥
एलारसेन भुक्तानि वमनं वारयन्ति च ॥ १४ ॥

अर्थ—कैथका गुदा, मिरच, बेल, शिलाजीत, खीलें और पीपल इन सबको समान भाग लेकर इलायचीके जलके साथ सेवन करनेसे वमन बंद होजाता है ॥ १४ ॥

वातोदरके लक्षण.

हस्तयोः पादयोर्वक्त्रे शोफः शूलं च गर्हितम् ॥
लक्ष्म वातोदरं ज्ञेयं शिराः कृष्णाः कलेवरे ॥१५॥

अर्थ—वातोदररोगके लक्षण इसप्रकार हैं कि, रोगीके हाथ पैर और मुख सूजजाताहै अत्यन्त पीडा और शूल होताहै और शरीरके ऊपरकी नसें काली पडजाती हैं ॥ १५ ॥

पित्तोदरके लक्षण.

स्वेदो दाघो भ्रमो मंदो ज्वरः कृष्णाः शिरास्तृषा ॥
नीलः पीतो मलश्चिह्नमिदं पित्तोदरे भवेत् ॥ १६ ॥

अर्थ—पसीना आवे, दाह होय, भ्रम हो, मंद ज्वर हो, नसें काली पडजायँ तृषा लगे और मल काला तथा पीला हो जाय तो ये सब लक्षण पित्तसे उत्पन्न हुए उदर रोगीके जानने ॥ १६ ॥

कफोदरके लक्षण.

कासः श्वासोऽरुचिर्निद्राऽज्वरः स्वेदोतिपांडुराः ॥
शिराः श्लेष्मोदरे चिह्नमिश्रं स्यात्सन्निपातजे ॥१७॥

अर्थ–खांसी होय, श्वास होय, अरुचि होय, निद्रा आवे, ज्वर, आवे, पसीना आवे और शरीरकी नसें सफेद पडजायँ तो ये सब लक्षण कफज उदररोगके जानने और सन्निपातके उदररोगमें मिश्रित लक्षण होते हैं ॥ १७ ॥

उदररोगमें पथ्य.

अम्बुपानं दिवास्वापमहितं गुरुभोजनम् ॥
व्यायामं मधुरान्नं च जठरी परिवर्जयेत् ॥ १८ ॥

अर्थ–उदररोगीको बहुत जलका पीना, दिनमें सोना, अहितकारक तथा भारी अन्नका सेवन करना, कसरत करना और मधुरपदार्थोंका सेवन करना ये सब त्यागदेने चाहिये ॥ १८ ॥

उदररोगकी चिकित्सा.

गवाक्षीशंखिनीदन्तीनीलीतिक्तकसंयुतम् ॥
सर्वोदरविनाशाय गोमूत्रपानमाचरेत् ॥ १९ ॥

अर्थ–इंद्रायन, शंखाहुली, दन्तीकी जड, नीलकी जड और चिरायता इन सबका चूर्ण करके गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे सब प्रकारके उदर रोग दूर होतेहैं ॥ १९ ॥

क्षारो वचानलव्योषनीलीलवणपंचकम् ॥
चूर्णितं सर्पिषा पेयं सर्वगुल्मोदरापहम् ॥ २० ॥

अर्थ–जवाखार, वच, चीता, सोंठ, मिरच, पीपल, नीलकी जड, सेंधानमक, कालानमक, काचलवण, विडलवण और समुद्रलवण इन सबका चूर्ण करके घीके साथ सेवन करनेसे सब प्रकारके उदररोग नाश होतेहैं ॥ २० ॥

शिग्रुमूलं रसो वह्निः सैन्धवं ब्रह्मवृक्षकः ॥
क्षारोभक्षणतोऽमीषां याति सर्वोदरं शमम् ॥ २१ ॥

अर्थ–सहिंजनेकी जडका रस, चीता, सेंधानमक, ढाककी जडकी छाल और जवाखार इन औषधियोंको सेवन करनेसे सब प्रकारके उदररोग नष्ट होतेहैं॥ २१ ॥

गोमूत्रं मधु पथ्या च छल्ली रोहेडवृक्षजा ॥
एतैरुष्णांभसा पीतैर्याति सर्वं जलोदरम् ॥ २२ ॥

अर्थ—गायका मूत्र, सहत, हरड और रोहिडेकी छाल इन सबको गरमजलके साथ पीनेसे सब प्रकारका जलोदररोग दूर होताहै ॥ २२ ॥

सर्ज्जिक्षारो यवक्षारः सैन्धवं दधि गोभवम् ॥
एतच्चतुष्टयं भुक्तं हन्ति दुष्टं जलोदरम् ॥ २३ ॥

अर्थ—सज्जीखार, जवाखार, सेंधानमक और गायका दही इन सबको एकत्र मिलाकर सेवन करनेसे दुष्ट जलोदररोग नष्ट होताहै ॥ २३ ॥

पथ्या वा सैन्धवं कृष्णा पीता हन्ति जलोदरम् ॥
कुटजांघ्रियुता किंवा कटुरोहिणीमूलयुक् ॥ २४ ॥

अर्थ—हरड, सेंधानमक और पीपलके साथ इन्द्रजौकी जड अथवा कुटकीकी जड मिलाकर चर्ण करके गरम जलके साथ सेवन करनेसे जलोदररोग नष्ट होताहै ॥ २४ ॥

तिलाश्चैरंडतैलेन पथ्या तत्समसैन्धवम् ॥
कणा गोमूत्रपीतानि नाशयन्ति जलोदरम् ॥२५॥

अर्थ—तिल, हरड, सेंधा नमक, और पीपल इन सबको समान भाग लेकर गायके मूत्रमें पीसकर अण्डीके तेलमें मिलाकर पीनेसे जलोदररोग नष्ट होताहै॥२५॥

पथ्या पुनर्नवा दारु गुडूची गुग्गुलुः समम् ॥
घ्नन्ति गोमूत्रपीतानि पांडुरोगं जलोदरम् ॥ २६ ॥

अर्थ—हरड, पुनर्नवा, देवदारु, गिलोय और गूगल इन सबको समान भाग लेकर गायके मूत्रके साथ सेवन करनेसे पांडुरोग तथा जलोदररोग नष्ट होताहै ॥ २६ ॥

नीली सुवर्चलं वह्निः सैन्धवं विडपूर्वकम् ॥
लवणं जलधेस्तस्य सज्जीक्षारः कटुत्रयम् ॥ २७ ॥

एतच्चूर्णं समः श्लक्ष्णपीतं गोसर्पिषा सह ॥
हन्ति सर्वोदरं श्वासं गुल्मं शूलं सुदारुणम् ॥ २८ ॥

अर्थ-नीलकी जड, काला नमक, चीता, सेंधानमक, विडलवण, समुद्र लवण, सज्जीखार, सोंठ, मिरच और पीपल इन सबको समान भाग लेकर बारीक चूर्ण करके गायके घीके साथ सेवन करनेसे सब प्रकारके उदररोग श्वास, गुल्म और अत्यन्त कठिन शूल नष्ट होतेहैं ॥ २७ ॥ २८ ॥

सप्ताहं माहिषं मूत्रं तत्पयो वांबुवर्जितम् ॥
पीतमौष्ट्रं पयो मासं श्वयथूदरनाशनम् ॥ २९ ॥

अर्थ-सात दिनतक भैंसका मूत्र पीनेसे अथवा जलरहित भैंसका दूध पीनेसे अथवा एक मासतक ऊंटनीका दूध पीनेसे सूजनयुक्त उदररोग नष्ट होताहै ॥ २९ ॥

सेव्या जठरिणा कृष्णा स्नुहिक्षीरेण भाविता ॥
पयो वा चव्यदंत्यग्निविडंगव्योपकल्कितम् ॥ ३० ॥

अर्थ-उदर रोगीको थूहरके दूधमें भावनादी हुई पीपल सेवन करनेसे अथवा चव्य, दन्तीकी जड, चीता, वायविडंग, सोंठ, मिरच और पीपल इन औषधियोंका कल्क बनाकर दूधके साथ सेवन करनेसे उदररोग दूर होताहै ॥ ३० ॥

श्वांस तथा खांसीकी चिकित्सा.

दुल्लरी सैन्धवं मांसी लवणं च सुवर्चला ॥
त्रिकटु ब्रह्मदण्डी च त्रिफलैरंडमूलिका ॥ ३१ ॥
विडादिलवणं सर्वं समांशं श्लक्ष्णचूर्णितम् ॥
पीतमुष्णाम्भसा कासमूर्ध्वश्वासं च वारयेत् ॥ ३२ ॥

अर्थ-दुल्लरी, सेंधानमक, जटामांसी, कालानमक, सोंठ, मिरच, पीपल, ब्रह्मदंडी, त्रिफला, अण्डकी जड और विडलवण इन सबको समान भाग लेकर

बारीक चूर्ण करे इस चूर्णको गरमजलके साथ सेवन करनेसे खांसी और ऊर्ध्वश्वास नष्ट होते है॥ ३१ ॥ ३२ ॥

शुंठीदारुकणाचूर्णं पीतमुष्णांभसा समम् ॥
उर्ध्वश्वासहरं किंवा गोपयः पीतभार्ङ्गिका ॥ ३३ ॥

अर्थ–सोंठ, देवदारु और पीपल इन सबको समान भाग लेकर गरमजलके साथ सेवन करनेसे अथवा गायके दूधमें भारंगीका चूर्ण मिलाकर पीनेसे ऊर्ध्वश्वास नष्ट होताहै ॥ ३३ ॥

चूर्णमुष्णांभसा पीतं शुंठीभारंगकोद्भवम् ॥
उर्ध्वश्वासहरं किंवा शुंठीपीप्पलिचूर्णकम् ॥३४॥

अर्थ–सोंठ और भारंगीका चूर्ण गरमजलके साथ सेवन करनेसे ऊर्ध्व श्वास दूर होताहै अथवा सोंठ और पीपलका चूर्ण भी यही गुण करताहै ॥ ३४ ॥

स्वरसः शृंगवेरस्य माक्षिकेण समन्वितः ॥
पाययेच्छ्वासकासघ्नं प्रतिश्यायकफापहम् ॥ ३५ ॥

अर्थ–अदरखके रसको सहतमें मिलाकर पान करनेसे श्वास, खांसी प्रतिश्याय और कफ नष्ट होताहै ॥ ३५ ॥

गुडूची गुग्गुलुर्दारु विदुला च हरीतकी ॥
गोमूत्रेण सहैतेषां पानं श्वासनिवर्त्तनम् ॥ ३६ ॥

अर्थ–गिलोय, गूगल, देवदारु, विदुला (समुद्र फल) और हरड इन औषधियोंके चूर्णको गायके मूत्रके साथ सेवन करनेसे श्वास दूर होताहै ॥३६॥

शिवाद्राक्षाकणाचूर्णं समांशं तैलसंयुतम् ॥
भक्षितं दारुणं श्वासं निवर्त्तयति वेगतः ॥ ३७ ॥

अर्थ–आमला, दाख और पीपल इनको समान भाग लेकर तेलमें मिलाक करनेसे महादारुण श्वास भी तत्काल नष्ट होताहै ॥ ३७ ॥

प्लीहाकी चिकित्सा.

वज्रीक्षीरेण संभिन्नं कणाचूर्णं त्रिसप्तकम् ॥
भक्षितं नाशयेत्प्लीहां मधुरान्नाशिनो चिरात्॥३८॥

अर्थ–थूहरके दूधमें पीपलके चूर्णको भावना देकर इक्कीस दिन तक सेवन करनेसे तथा हलका और मधुर भोजन करनेसे प्लीहा नष्ट होती है ॥ ३८ ॥

यस्याभिधानमुच्चार्य दारयित्वैन्द्रवारुणीम् ॥
मूलमुत्क्षिप्यते दूरं तस्य प्लीहा विनश्यति ॥ ३९ ॥

अर्थ–जिसका नाम उच्चारण करके इन्द्रायनकी जडको चीरकर फेंकदिया जाय उसकी तत्काल प्लीहा दूर होजाती है ॥ ३९ ॥

चिरस्य बाणपुंखाया मूलिकादंतचर्विता ॥
गिलिता नाशयेत्प्लीहा यवागू भोजने ध्रुवम् ॥ ४० ॥

अर्थ–सरफोंकेकी जडको वारंवार दातोंसे चवाकर उसके रसको पान करनेसे प्लीहा नष्ट होजाती है इसके ऊपर यवागूका भोजन करना चाहिये ॥४०॥

लवणेनार्कपत्राणि वह्निनांतरधूमितम् ॥
दग्धानि मधुलीढानि प्लीहा नश्यति दारुण॥॥ ४१ ॥

अर्थ–आकके पत्तोंको लाकर उनपर सेंधानमकको लपेटकर पश्चात् इसप्रकार अग्निमें लगावे कि उसका धुआँ बाहर न निकले फिर उसको सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे अत्यन्त दारुण प्लीहा शीघ्रही नष्ट होजाती है ॥ ४१ ॥

विडंगं त्रिफलाव्योषं चव्यपाठाग्निकल्कितम् ॥
घृतं क्षीरेण संसिद्धं गुल्मप्लीहोदरापहम् ॥ ४२ ॥

अर्थ–वायविडंग, त्रिफला, सोंठ मिरच, पीपल, चव्य, पाढ और चीता इन ओषधियोंका कल्क बनाकर उसमें घी और आठगुना दूध तथा चौगुना पानी डालकर घीको पकावे इस घीको सेवन करनेसे गुल्म, प्लीहा और उदररोग नष्ट होता है ॥ ४२ ॥

पातव्यो युक्तितः क्षारः क्षीरेणोदधिशुक्तिजः ॥
पयसा च प्रयोक्तव्याः पिप्पल्यः प्लीहशांतये ॥ ४३ ॥

अर्थ–समुद्रकी सीपका खार बनाकर दूधके साथ विधिपूर्वक पान करनेसे प्लीहा नष्ट होती है अथवा पीपलको दूधके साथ सेवन करनेसे प्लीहा नष्ट होती है ॥ ४३ ॥

सहस्रं पिप्पलीनां च स्नुहीक्षीरेण भावितम् ॥
जठराणां निवृत्त्यर्थं क्षीराशी वा शिलाजिता ॥ ४४ ॥

अर्थ–हजार पीपलोंको थूहरके दूधमें भावना देकर सेवन करनेसे सब प्रकारके उदररोग नष्ट होते हैं अथवा शिलाजीतको दूधके साथ सेवन करनेसे उदर रोग नष्ट होता है ॥ ४४ ॥

अतीसारोऽरुचिश्चेति विज्ञेयं कृमिलक्षणम् ॥ ४५ ॥

अर्थ–ज्वर हो शरीरका वर्ण बदलजाय, पेटमें शूल, भ्रम, वमन, मुखमें जलभर आवे, अतीसार होय और अन्नमें अरुचि होय तो कृमि रोगके लक्षण जानने ॥ ४५ ॥

कृमिरोगकी चिकित्सा.

पलाशबीजमापिष्य मधुना लेह्यमाचरेत् ॥
अध ऊर्ध्वं गताञ्जन्तून्पातयत्युदरोद्भवान् ॥ ४६ ॥

अर्थ–ढाकके बीजोंको पीसकर सहतमें मिलाकर चाटनेसे पेटके नीचे तथा ऊपर (मलाशय तथा पक्वाशयमें) रहनेवाले कृमि नष्ट होजाते हैं। वायविडंग और सेंधा नमकके चूर्णको सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे कृमि नष्ट होतेहैं ॥ ४६ ॥

विडंगं सैन्धवं चूर्णं कृमिहृन्मधुनाशितम् ॥
चूर्णं वा निम्बपत्राणां जन्तुहृन्मधुभक्षितम् ॥४७॥

अर्थ–नीमके पत्तोंके चूर्णको सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे कृमि नष्ट होतेहैं ॥ ४७ ॥

त्रिफला बहुपर्णी च शिग्रु मुस्ता समांशतः ॥
क्वाथः कणाविडंगाभ्यां युक्तः पीतोथ जंतुहृत् ॥४८॥

अर्थ-हरड, बहेडा, आमला, मूसाकर्णी, सहिंजनेकी छाल और नागरमोथा इन सबको समान भाग लेकर क्वाथ बनाकर उसमें पीपल तथा वायविडंगका चूर्ण मिलाकर सेवन करनेसे कृमिरोग नष्ट होताहै ॥ ४८ ॥

शालिपिष्टं कणां सिंधुं विडंगं चाखुकर्णिकाम् ॥
सुपक्त्वा पोलिका जंतून्पातयेन्मधुभक्षिता ॥४९॥

अर्थ-चावलोंका चूर्ण, पीपल, सेंधा नमक, वायविडंग और मूसाकर्णी इन सबको एकत्र बारीक पीसकर रोटी बनावे पश्चात् उसको अच्छे प्रकार सेककर सहतके साथ सेवन करनेसे अनेक प्रकारके कृमि निकल जातेहैं ॥ ४९ ॥

जंतुहृद्गोजलापीतं चूर्णं कुष्ठविडंगयोः ॥
नींबारग्वधयोर्वापि विडंगं मधुमिश्रितम् ॥ ५० ॥

अर्थ-कूठ और वायविडंगके चूर्णको गायके मूत्रके साथ सेवन करनेसे कृमिरोग नष्ट होताहै । अथवा नीम और अमलतासके चूर्णको गायके मूत्रके साथ सेवन करनेसे कृमिरोग नष्ट होताहै वा सहत और वायविडंगका चूर्ण सेवन करनेसे कृमिरोग नष्ट होताहै ॥ ५० ॥

पृष्ठ कटि नाभि और कुक्षिशूलकी चिकित्सा.

स्थालीमध्यगतं दुग्धं वह्निनांतरधूमितम् ॥
शृंगमैणं गवाज्येन निपीतं पृष्ठशूलहृत् ॥ ५१ ॥

अर्थ-कांई दूध डालकर उसमें हरिणके शींगको इसप्रकार पकावे कि जिससे उसका धुआँ बाहर न निकले फिर इस शींगका चूर्ण करके गायके घीके साथ पीनेसे पीठका शूल दूर होताहै ॥ ५१ ॥

पीतमुष्णांबुना कुक्षिपृष्ठशूलविनाशनम् ॥
शुण्ठी सुवर्चला हिंगुरेतच्चूर्णं समांशतः ॥ ५२ ॥

अर्थ-सोंठ, काला नमक और हींग इनको समान भाग लेकर चूर्ण करके गरम जलके साथ सेवन करनेसे कोख तथा पीठका शूल दूर होताहै ॥ ९२ ॥

शुण्ठी सुवर्चला हिंगुमूलं पाटलजं समम् ॥
एतत्क्वाथस्य पानेन कटिशूलं शमं व्रजेत् ॥ ९३ ॥

अर्थ-सोंठ, काला नमक, हींग और पाढकी जड इन सबको समान भाग लेकर क्वाथ बनाकर सेवन करनेसे कमरका शूल नष्ट होताहै ॥ ९३ ॥

क्षीरेण प्रस्तरी पीता कटिगृध्रविनाशिनी ॥
शाखोटकशिफा चाशुक्षीरपीता निहन्ति तत् ॥९४॥

अर्थ-दूधके साथ गन्धपथरी (गोलोमी) को सेवन करनेसे कमरका शूल नष्ट होताहै, सिहोडेकी दूधके साथ सेवन करनेसे कमरका शूल नष्ट होताहै ॥ ९४ ॥

कुरंटमूलिकाक्षीरं कटिगृध्रविनाशनम् ॥
जालिनी गोजलापीता द्रुतं तद्विनिहन्ति वा ९५॥

अर्थ-कटसरैयाकी जडको दूधके साथ पीनेसे कटिशूल दूर होताहै अथवा कडवी तोरईको गायके मूत्रके साथ सेवन करनेसे कटिशूल नष्ट होताहै ॥ ९५ ॥

वचासुवर्चलाहिंगुपाकलेंद्रयवा अमी ॥
वांतिशूलहराः किंवा गुडः पूररसान्वितः ॥ ९६ ॥

अर्थ-बच, काला नमक, हींग, कूठ और इन्द्रजौ यह औषधियें वमन तथा शूलको नष्ट करतीहै। अथवा इन औषधियोंको गुडके साथ सेवन करनेसे भी यही गुण होताहै ॥ ९६ ॥

नालगुल्मकी चिकित्सा.

वन्ध्याककोंटिकामूलं रवौ लात्वा-दिनत्रयम् ॥
शीतेन वारिणा पीतं नालगुल्मं प्रशाम्यति ॥९७॥

अर्थ-वांछककोडेको रविवारके दिन लाकर तीन दिन तक शीतलजलके साथ सेवन करनेसे नालगुल्म नष्ट होता है ॥ ९७ ॥

एरंडमूलपुष्पाणां पक्वानामथ सर्पिषा ॥
भक्षणान्नालगुल्मस्य प्रशमो जायते ध्रुवम् ॥५८॥

अर्थ–अण्डकी पकीहुई जड तथा पक्का फूला कर उसको बारीक पीसकर घीके साथ सेवन करनेसे नालगुल्म निश्चय नष्ट होता है ॥ ५८ ॥

भल्लातस्य प्रदानेन किंवा शीतेन वारिणा ॥
धारापाताच्छमं याति नालगुल्ममसंशयम् ॥५९॥

अर्थ–भिलावेको सेवन करनेसे अथवा शीतलजलकी धार देनेसे निश्चय नालगुल्म शान्त होजाता है ॥ ५९ ॥

मूत्रेंन्द्रियमें होनेवाले रोग.

प्रमेहो मूत्रकृच्छ्रं वा नृरोगो मूत्रशर्करा ॥
मूत्ररोधोष्णवाताश्च रोगाः षण्मेहनोद्भवाः ॥६०॥

अर्थ–प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र उपदंश, मूत्रशर्करा (पथरी) मूत्ररोध और उष्ण-वात ये रोग मूत्रेन्द्रियमें उत्पन्न होते हैं ॥ ६० ॥

वातप्रमेहके लक्षण.

सफेनं लोहितं स्निग्धं पांडुरं चांबुसन्निभम् ॥
शुक्रे श्लेष्महते मूत्रं प्रमेहे वातजे भवेत् ॥ ६१ ॥

अर्थ–वातके प्रमेहमें वीर्य कफसे दूषित होजाता है और मूत्र झागोंवाला, लाल, स्निग्ध, सफेद और जलकी समान होता है ॥ ६१ ॥

पित्तप्रमेहके लक्षण.

नीलं पीतं भवेन्मूत्रं पेयाभं वासमिश्रितम् ॥
इदं पित्तप्रमेहस्य चिह्नमूचुर्विचक्षणाः ॥ ६२ ॥

अर्थ–जिसके मूत्रका रंग नीला, पीला तथा कांजीकी समान होय और उसमेंसे दुर्गन्धि आवे तो चतुर वैद्य उसको पित्तप्रमेह जाने ॥ ६२ ॥

कफप्रमेहके लक्षण.

मधुवद्घृतवद्वाथ मूत्रं स्याद्वाससोपमम् ॥
श्लेष्मप्रमेहजं लक्ष्म वर्णयन्ति विपश्चितः ॥ ६३ ॥

अर्थ–जिसका मूत्र सहत अथवा घीकी समान या वस्त्रकी समान होय तो उसके कफका प्रमेह जानना ॥ ६३ ॥

प्रमेहकी चिकित्सा.

निम्बपत्रामलं मुस्ता गुडूची देवडंगरी ॥
क्वाथ एषां मधूपेतः पीतः पित्तप्रमेहजित् ॥ ६४ ॥

अर्थ–नीमके पत्ते, आमले, नागरमोथा, गिलोय और वन्दाल इन औषधियोंके क्वाथमें सहत डालकर पीनेसे पित्तजप्रमेह दूर होता है ॥ ६४ ॥

अगुरूशीरपंकजलोध्रश्रीखण्डसंभवाः ॥
क्वाथो मधुयुतः पीतः प्रमेहं हन्ति पित्तजम् ॥६५॥

अर्थ–अगर, खस, कमल, लोध और सफेद चन्दन इन औषधियोंका क्वाथ सहत डालकर पीनेसे पित्तजप्रमेह दूर होता है ॥ ६५ ॥

निशाद्वयं विडंगानि पथ्या शुण्ठी समांशतः ॥
श्लेष्मप्रमेहनाशः स्यादेतत्क्वाथस्य पानतः ॥६६॥

अर्थ–हल्दी, दारुहल्दी, वायविडंग हरड और सोंठ इन सबको समान भाग लेकर क्वाथ बनाकर पीनेसे कफज प्रमेह दूर होता है ॥ ६६ ॥

श्रीखण्डं दारुखण्डं च पथ्यागुरु समांशतः ॥
क्वाथ एषां मधूपेतः पीतः श्लेष्मप्रमेहहृत् ॥६७॥

अर्थ–सफेदचन्दन, देवदारु, हरड और अगर इन औषधियोंको समान भाग लेकर क्वाथ बनाकर सहत डालकर पान करनेसे कफजप्रमेह दूर होताहै ॥ ६७ ॥

मुस्ताद्वयं निशा पाठा गुडूची देवडंगरी ॥ खदिरः
कुष्ठमेतानि संपिष्य त्रिफलांभसा ॥६८॥ एतद्रसो-

मधूपेतः पीतोनेकप्रमेहहृत् ॥ त्रिफला वा मधूपेता भुक्तानेकप्रमेहजित् ॥ ६९ ॥

अर्थ—नागरमोथा, भद्रमोथा, हल्दी, पाढ, गिलोय, बन्दाल, खैर और कूठ इन सबको त्रिफलेके जलमें पीसकर उसका रस निकालकर सहत डालकर पीनेसे अनेक प्रकारके प्रमेह नाश होते हैं अथवा केवल त्रिफलेको सहतके साथ सेवन करनेसे अनेक प्रकारके प्रमेह दूर होते है ॥ ६८ ॥ ६९ ॥

अरणिर्मधुपीता वा प्रमेहं पीतया सह ॥
मधुपीतोश्मभेदो वा प्रमेहं हन्ति दारुणम् ॥ ७० ॥

अर्थ—अथवा सहतके साथ अरणीके रसको पीनेसे पीडायुक्त प्रमेह दूर होता है अथवा सहतके साथ पाषाणभेदको सेवन करनेसे दारुण भी प्रमेह दूर होता है ॥ ७० ॥

गुडूच्याः स्वरसः पेयो मधुना सर्वमेहहृत् ॥ निशापथ्यायुतो धात्र्या रसो वा माक्षिकान्वितः ॥ प्रायेण वातप्रमेहोऽसाध्यश्चातो न वर्णितः ॥ ७१ ॥

अर्थ—सहतके साथ गिलोयका रस पीनेसे सब प्रकारके प्रमेह दूर होते हैं हल्दी और हरडको आमलोंके रसके साथ अथवा सहतके साथ पान करनेसे सब प्रकारके प्रमेह दूर होते हैं बहुधा वात प्रमेह असाध्य है इस कारण उसकी चिकित्सा यहां नहीं लिखी ॥ ७१ ॥

वातजमूत्रकृच्छ्रके लक्षण.

वातशीर्षेन्द्रिये शूलं मूत्रं स्वल्पं पुनःपुनः ॥
वातोत्थमूत्रकृच्छ्रस्य लक्षणं कथितं बुधैः ॥ ७२ ॥

अर्थ—बस्ती तथा लिंगमें शूल होय और मूत्र वारंवार थोडा २ आवे यह वातजनित मूत्रकृच्छ्रके लक्षण जानने ॥ ७२ ॥

पित्तजमूत्रकृच्छ्रके लक्षण.

रक्तपीतं भवेन्मूत्रं पीडा दाहश्च शेफसि ॥

पित्तोत्थमूत्रकृच्छ्रस्य लक्षणं कथितं बुधैः ॥७३॥

अर्थ–जिसमें मूत्रका रंग लाल, पीला होय तथा मूत्रेन्द्रिय में शूल और दाह होय उसके पित्त जनित मूत्रकृच्छ्र जानना ॥ ७३ ॥

वातशीर्षेन्द्रिये पीडा शोफो मूत्रं च पिच्छिलम् ॥
श्लेष्मले मूत्रकृच्छ्रे स्याच्चिह्नं मिश्रं त्रिदोषजे॥७४॥

अर्थ–कफके मूत्रकृच्छ्रमें वस्ति तथा मूत्रेन्द्रियमें शूल होय, सूजन होय और मूत्रचिकना होता है त्रिदोषके मूत्रकृच्छ्रमें मिश्रित लक्षण होतेहैं ॥ ७४ ॥

मूत्रकृच्छ्रकी चिकित्सा.

दुरालभाश्मभित्पथ्या व्याघ्री शुंठी च धान्यकम् ॥
व्याधिघातफलोद्भूतसारमेतैः समांशतः ॥ ७५ ॥
कृतः क्वाथः सितापीतो मूत्रकृच्छ्रनिबर्हणः ॥ दाहं
शूलं निहन्त्येव यथाघं जिनचिन्तनम् ॥ ७६ ॥

अर्थ–धमासा, पाषाणभेद, हरड, कटेरी, सौंठ, धनिया और अमलतासका गूदा इन सबको समान भाग लेकर क्वाथ बनाकर मिश्रीडालकर पीनेसे दाह और शूलसहित मूत्रकृच्छ्र दूर होताहै जिसप्रकार जिनदेवका चिन्तवन करनेसे पापोंका नाश होताहै ॥ ७५ ॥ ७६ ॥

पिप्पल्येलाशिलाभेदशिलाजित्तंदुलांभसा ॥
पीतैरेतैः शमं याति मूत्रकृच्छ्रमसंशयम् ॥ ७७ ॥

अर्थ-पीपल, इलायची, पाषाणभेद और शिलाजीत इन सबका चूर्ण करके चांवलोंके जलके साथ सेवन करनेसे मूत्रकृच्छ्र निश्चय शांत होजाताहै ॥ ७७ ॥

पाषाणभेदो मधुयष्टिरेला कृष्णासितैरंडशिफाटरूषः।
मालाश्वदंष्ट्रा च सितासमेतैः क्वाथो हरेद्दुसह मूत्र-
कृच्छ्रम् ॥ ७८ ॥

अर्थ- पाषाणभेद, मुलैठी, इलायची, पीपल, सफेद अण्डकी जड, अडूसा, माल और गोखुरू इन सबको समान भाग लेकर काथ बनाकर मिश्री डालकर-पीनेसे अत्यन्त दु:साध्यभी मूत्रकृच्छ्र नष्ट होजाताहै ॥ ७८ ॥

गोक्षीरेण गुडः पीतो मूत्रकृच्छ्रविनाशकृत् ॥
एला दध्यंभसा पीता मूत्रकृच्छ्रहरी मता ॥ ७९ ॥

अर्थ-गायके दूधमें गुड डालकर पीनेसे मूत्रकृच्छ्र दूर होताहै दहीके पानीके साथ इलायचीके पीनेसे मूत्रकृच्छ्र दूर होताहै ॥ ७९ ॥

यवक्षारः पले द्वे च सितायाः शीतवारिणा ॥
सर्वं कर्षं च तत्पीतं निःशेषं मूत्रकृच्छ्रहृत् ॥ ८० ॥

अर्थ-जवाखार ८ तोले और मिश्री १६ तोले दोनोंका एकत्र चूर्ण करके एक तोला प्रमाण शीतल जलके साथ सेवन करनेसे मूत्रकृच्छ्र जडसे नष्ट होजाताहै ॥ ८० ॥

यवक्षारो वचा हिंगुस्तेषां चूर्णं समांशतः ॥
भक्षितं वेगतो हन्ति मूत्रकृच्छ्रमसंशयम् ॥ ८१ ॥

अर्थ-जवाखार वच और हींग इन औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण करके सेवन करनेसे मूत्रकृच्छ्र शीघ्र ही नष्ट होजाताहै ॥ ८१ ॥

नररोगकी चिकित्सा

पथ्यारसांजने पिष्ट्वा वारिणा तेन लेपतः ॥
नृरोगः क्षीयते किंवा नृकपालस्य लेपतः ॥ ८२ ॥

अर्थ-हरड तथा रसोंतको बारीक पीसकर लेप करनेसे नररोग नष्ट होताहै अथवा मनुष्यके कपालकी हाडका लेप करनेसे भी नररोग (उपदंश) नष्ट होताहै ॥ ८२ ॥

बुब्बुलं दाडिमी छल्ली चूर्णं शुष्कमनेन वा ॥
उद्धलने तु विहिते नृरोगो याति सत्वरम् ॥ ८३ ॥

अर्थ—बबूलकी तथा दाडिमकी सूखी छाल लेकर चूर्ण करके फिर उस चूर्ण के द्वारा उद्धूलन करनेसे नररोग नष्ट होताहै ॥ ८३ ॥

घुंटपूगीफलं घृष्ट्वा वारिणा तेन लेपतः ॥
नररोगः शमं याति किंवा कारीषभस्मना ॥ ८४ ॥

अर्थ—घुंटजातिकी सुपारीको जलमें घिसकर लेप करनेसे नररोग शान्त होताहै आथवा आरने उपलोंकी राखका उद्धूलन करनेसे भी नररोग नष्ट होता है ॥ ८४ ॥

प्रक्षिप्य त्रिफलां स्थाल्यां मध्येऽग्नौ क्षेपितो भवेत् ॥
क्षारस्योद्धूलनाच्छांतिं नररोगा व्रजन्त्यहो ॥ ८५ ॥

अर्थ—त्रिफलेको कढाईमें डालकर बीचमें अग्नि रखकर जलावे पश्चात् इस-राखके द्वारा उद्धलन करनेसे नररोग शान्त होताहै ॥ ८५ ॥

रसांजनं शिरीषेण पथ्यया वा समन्वितम् ॥
सक्षौद्रं लेपने योग्यं सर्वलिंगगदापहम् ॥ ८६ ॥

अर्थ—रसौतको सिरसके साथ अथवा हरडके साथ पीसकर सहत मिलाकर लेप करनेसे सब प्रकारके लिङ्गरोग नष्ट होते हैं ॥ ८६ ॥

जातीपत्रं निशा दंती विशाला मधुयष्टिका ॥
पक्वमेभिर्युतं तैलं तत्तैलं नररोगहृत् ॥ ८७ ॥

अर्थ—चमेलीके पत्ते, हल्दी, दन्तीकी जड, इन्द्रायण और मुलैठी इन औष-धियोंके द्वारा तेल पकाकर लेप करनेसं नररोग नष्ट होता है ॥ ८७ ॥

इंद्रवारुणिकामूलं बीजपूरदलान्यथ ॥
सिन्दूर चूर्णयोगाच्च नररोगो विनश्यति ॥ ८८ ॥

अर्थ—इन्द्रायणकी जड, बिजौरेनींबूके पत्ते और सिन्दूर इनका चूर्ण करके लेप करनेसे नररोग नष्ट होता है ॥ ८८ ॥

अथवोदुंबरक्काथजलेनाक्षाल्य लेपतः ॥
तस्य घृष्टत्वचो वेगान्नररोगः प्रशाम्यति ॥ ८९ ॥

अर्थ--अथवा गूलरके काथसे लिंगको धोनेसे या गूलरकी छालको जलमें पीसकर लेपकरनेसे नररोग नष्ट होताहै ॥ ८९ ॥

दाडिमीपत्रचूर्णेन भृशमुद्धूलने कृते ॥
नरव्याधिर्व्रजत्येव संभोगसुखनाशनः ॥ ९० ॥

अर्थ--अनारके पत्तोंको चूर्ण करके वारंवार बुरकानेसे संभोगके सुखको नष्ट करनेवाला नररोग नष्ट होता है ॥ ९० ॥

पथरीकी चिकित्सा.

शीतेन वारिणा घृष्टा बीजपूरस्य मूलिका ॥
पीता पाचयते वेगान्मेहनान्मूत्रशर्कराम् ॥ ९१ ॥

अर्थ--बिजौरे नीबूकी जडको ठण्डे पानीमें घिसकर पीनेसे मूत्रेन्द्रियमें उत्पन्न हुई पथरी पककर निकलजातीहै ॥ ९१ ॥

गोमूत्रेण भृशं घृष्टा समूलं लघुटुलिवका ॥
सा पातयति वेगेन निपीता मूत्रशर्कराम् ॥ ९२ ॥

अर्थ--जडसहित छोटी टुलिवका लेकर गायके मूत्रमें खूब घिसकर पीनेसे मूत्रशर्करा (पथरी) शीघ्र नष्ट होतीहै ॥ ९२ ॥

सुरासुवर्चलामिश्रा किंवा मधुपयोन्विता ॥
विभूतिस्तिलनालानां पीताश्मव्याधिनाशिनी ९३

अर्थ--मदिरामें कालानमक डालकर अथवा सहत और दूधमें तिलकी लकडियोंकी राख डालकर पीनेसे पथरीरोग दूर होताहै ॥ ९३ ॥

कर्कोटीमूलिता पीता दशाहं पयसा सह ॥
भित्त्वा वै शर्करां शीघ्रं शमयत्येव मेहनात् ॥९४॥

अर्थ--ककोडेकी जडको दूधके साथ दश दिन तक पीनेसे मूत्रेन्द्रियकी पथरी तत्काल टूटकर बहुत शीघ्र निकलजातीहै ॥ ९४ ॥

ग्रीष्मे समुद्धृतं मूलं मालत्या रक्षितं पशोः ॥

दुग्धं पीतं हरेन्मूत्ररोधं चैव सशर्करम् ॥ ९५ ॥

अर्थ–ग्रीष्मऋतुमें मालतीकी जडको लाकर यत्नपूर्वक रखदेवे पश्चात् उसको दूधके साथ पीनेसे मूत्ररोध दूर होता है ॥ ९५ ॥

देवदार्वभयामुस्तामूर्वाणां मधुकस्य च ॥
पिबेच्चाभिः समं कल्पं मूत्रदोषनिवारणम् ॥ ९६ ॥

अर्थ–देवदारु, हरड, नागरमोथा, मूर्वा, मुलैठी इन ओषधियोंको समान भाग लेकर कल्क बनाकर जलके साथ पीनेसे मूत्रदोष दूर होताहै ॥ ९६ ॥

शतावरीकाशकुशश्वदंष्ट्राविदारिशालीक्षुकसेरुकाणाम् ॥ क्वाथं सुशीतं मधुशर्कराभ्यां युक्तं पिबेच्छाम्यति मूत्रकृच्छ्रम् ॥ ९७ ॥

अर्थ–शतावर, कास, डाभ, गोखुरू, विदारीकंद, शालिचावल, ईख और कसेरुकी जड इन सबका काथ बनाकर शीतल करके सहत और मिश्री डालकर पीनेसे मूत्रकृच्छ्र दूर होता है ॥ ९७ ॥

श्वदंष्ट्राफलचूर्णं तु शिशोर्दद्यान्मधुप्लुतम् ॥
मूत्रकृच्छापहं क्षीरं मातुस्तन्मूलसाधितम् ॥ ९८ ॥

अर्थ–गोखुरुओंके बीजोंका चूर्ण बनाकर सहतमें मिलाकर चाटनेसे अथवा गोखुरुओंको माताके दूधमें औटाकर पिलानेसे बालकोंका मूत्रकृच्छ्र दूर होता है ॥ ९८ ॥

शर्करा सयवक्षारा सर्वकृच्छ्रप्रभेदिनी ॥
क्वाथश्च शिग्रुमूलोत्थः कवोष्णोश्मरिपातकृत् ॥ ९९ ॥

अर्थ–जवाखारके साथ मिश्री मिलाकर सेवन करनेसे सब प्रकारके मूत्रकृच्छ्र दूर होतेहैं सहिंजनेकी जडका क्वाथ बनाकर कुछ गरम पीनेसे पथरी नष्ट होती है ॥ ९९ ॥

मूत्ररोधकी चिकित्सा.

एला दुरालभैरंडपथ्या पाषाणभित्सममू ॥ गोक्षुरः
कर्कटीबीजं तथा बीजं कुरंटकम् ॥ १०० ॥
एतत्क्राथस्य पानेन मूत्ररोधो निवर्त्तते ॥ पीतो
दारुनिशाक्काथः समधुः मूत्ररोधहृत् ॥ १०१ ॥

अर्थ–इलायची, धमासा, अण्डकी जड, हरड, पाषाणभेद, गोखरु, ककडीके बीज और कटसरैयाके बीज इन सबको समभाग लेकर क्वाथ बनाकर पीनेसे मूत्ररोध दूर होताहै। दारु हल्दीके क्वाथमें सहत डालकर पीनेसे मूत्ररोध दूर होताहै ॥ १०० ॥ १०१ ॥

त्रिफला कर्कटीबीजं सैन्धवं समभागतः ॥
चूर्णमुष्णांभसा पीतं रुद्धं मूत्रं प्रवर्त्तते ॥ १०२ ॥

अर्थ–त्रिफला, ककडीके बीज और सेंधानमक इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण करके गरमजलके साथ पीनेसे रुकाहुआ मूत्र खुलकर आताहै ॥ १०२ ॥

क्षीरेण मधुना पीता विभूतिस्तिलनालजा ॥
मूत्ररोहं तथा दाघं निवर्त्तयति वेगतः ॥ १०३ ॥

अर्थ–तिलकी लकडीकी राखको दूध और सहतके साथ पीनेसे मूत्ररोध और दाह तत्काल नष्ट होजातीहै ॥ १०३ ॥

शर्कराजापयःपीताशोकवृक्षस्य मूलिका ॥
मूत्ररोधं तथा दाहं निवर्त्तयति वेगतः ॥ १०४ ॥

अर्थ–अशोककी जडकी छाल बकरीके दूधके साथ मिश्री डालकर पीनेसे मूत्ररोध तथा मूत्रदाह शीघ्र दूर होजातीहै ॥ १०४ ॥

तैलपक्वोऽब्जिनीकंदः पीतो गोतक्रसंयुतः ॥
निहन्ति दुःसहं दाघं मूत्ररोधमसंशयम् ॥ १०५ ॥

अर्थ—कमलकंदको तेलमें पकाकर गायके मट्ठेके साथ पीनेसे दाह तथा मूत्र रोध शीघ्र ही दूर होजाताहै ॥ १०५ ॥

वारिणापिष्य बीजानि कर्कट्याः सितया सह ॥
भुक्त्वा निशमयंत्युग्रं मूत्ररोधं सवेदनम् ॥ १०६ ॥

अर्थ—ककडीके बीजोंको जलमें पीसकर मिश्री डालकर पीनेसे अत्यन्त वेदनायुक्त मूत्ररोध दूर होता है ॥ १०६ ॥

एलाश्मभेदकशिलाजतुपिप्पलीनां चूर्णानि तंदुल-जलैर्लुलितानि पीत्वा ॥ यद्वा गुडेन सहितानि विलोडयमानान्यासन्नमृत्युरपि जीवति मूत्र-कृच्छ्री ॥ १०७ ॥

इलायची, पाषाणभेद, शिलाजीत और पीपल इन सब औषधियोंका चूर्ण चावलोंके जलके साथ पीनेसे अथवा गुड मिलाकर पीनेसे मृत्युको प्राप्तहुआ मूत्रकृच्छ्ररोगी भी जीवित होताहै ॥ १०७ ॥

उष्णवातकी चिकित्सा.

सांबरं जलमध्यस्थमृत्तिकालेपमात्रतः ॥
उष्णवातः शमं याति यथाघं नेमिचिन्तनात् १०८॥

अर्थ—जहां निरंतर पानी भरा रहता होय ऐसे तालावकी मट्टी लाकर उसमें कपडेको सानकर मूत्रेन्द्रियके ऊपर लपेटनेसे जिसप्रकार नेमीश्वर भगवान्‌का चिन्तवन करनेसे पाप नाश होजाताहै उसीप्रकार उष्णवात भी नाश होताहै ॥ १०८ ॥

तापयित्वेष्टिकामस्य उर्द्धं मूत्रे कृते भवेत् ॥
बाष्पं तेनेंद्रियस्वेदादुष्णवातो विनश्यति ॥१०९॥

इति श्रीश्रीकण्ठसूरिविरचिते हितोपदेशे षष्ठः समुद्देशः ॥ ६ ॥

अर्थ—ईंटको अग्निमें तपाकर उसके ऊपर पेशाब करे उसकी निकलती हुई वाफ मूत्रेन्द्रियमें लगनेसे उष्णवात शांत होताहै ॥ १०९ ॥

इति श्रीपरमजैनाचार्य्यश्रीकण्ठसूरिविरचिते हितोपदेशे वैद्यकसारसंग्रहे भिषग्वरहरिशंकरात्मजशंकरलालकृतभाषाटीकायामुदरमूत्रेन्द्रियरोगचिकित्सावर्णनं नाम षष्ठः समुद्देशः ॥ ६ ॥

अथ कुरण्डार्शोतिसाररोगाद्यधिकारः ।

कुरंड चिकित्सा.

त्रिफला टिंटुका दन्ती त्रिकटुर्नीलिका वृषा ॥
भुक्तमेरण्डतैलेन चूर्णमेषां कुरण्डहृत् ॥ १ ॥

अर्थ—हरड, बहेडा, आमला, अरुलु, दन्तीकी जड, सोंठ, मिरच पीपल नीलकी जड और अडूसा इन सबका चूर्ण बनाकर उसमें अण्डीका तेल डालकर पीनेसे अण्डवृद्धि दूर होतीहै ॥ १ ॥

गोमयस्य रसोन्मिश्रं कांजिकेनातिमर्दितम् ॥
कुष्ठं जीरं प्रलेपेन कुरंडं हंति दुर्वहम् ॥ २ ॥

अर्थ—गोबरका रस निकालकर कांजी मिलाकर उसमें कूट और जीरा डालकर घोटे पश्चात् लेप करनेसे अत्यन्त दुस्तर भी अण्डवृद्धि दूर होजाती है ॥२॥

गोधूममूलिकाचूर्णं मेषीदुग्धेन मर्दितम् ॥
उष्णेन तेन लिप्तो वा कुरंडो नश्यति ध्रुवम् ॥३॥

अर्थ—गेंहूंकी जडका चूर्ण मेडके दूधमें पीस कर कुछेक गरम करके लेप करनेसे अवश्य अण्डवृद्धि दूर होतीहै ॥ ३ ॥

पलानि दश तैलस्य हिंगुसैन्धवजीरकम् ॥
प्रत्येकं च पलं पक्कमेतल्लेपोंडवृद्धिहृत् ॥ ४ ॥

अर्थ–४० तोले तेल लेकर उसमें चार तोले हींग, ४ तोले सेंधानमक और ४तोले जीरा डालकर पकावे पश्चात् लेप करनेसे अण्डवृद्धि दूर होतीहै ॥ ४ ॥

श्वेतैरंडशिफामूलं टिंटुका त्रिफला वचा ॥
कांजिकापिष्टमेतस्य लेपोयं मुष्कशूलहृत् ॥ ५ ॥

अर्थ–सफेद अण्डकी जड, अरलुली जड, हरड, बहेडा आमला और वच इन सबको कांजीमें पीसकर लेप करनेसे अण्डकोशोंकी पीडा दूर होतीहै ॥५॥

कुरंडमपचीं पित्तग्रंथिं च हरति क्रमात् ॥
मधुमिश्रसितैरंडतैलं पीतं च मात्रया ॥ ६ ॥

अर्थ–सफेद अण्डके तेलमें सहत मिलाकर पीनेसे अण्डवृद्धि, अपची और ग्रंथि ये सब दूर होजाते हैं ॥ ६ ॥

विडंगं मधुकं व्योषं सैन्धवं देवदारु च ॥
तैलमेभिः शृतं पश्य प्रयुक्तमपचीं जयेत् ॥ ७ ॥

अर्थ–वायविडंग, मुलैठी, सोंठ, मिरच, पीपल, सेंधा नमक और देवदारु इन सब औषधियोंके द्वारा तेलको पकावे पश्चात् इस तेलका लेप करनेसे अपची दूर होतीहै ॥ ७ ॥

पथ्याचूर्णैः सितैरंडतैलं पक्वं निवारयेत् ॥
कंपं वृषणवृद्धिं च पीतं गोमूत्रसंयुतम् ॥ ८ ॥

अर्थ–हरडके चूर्णको सफेद अण्डीके तेलमें पकाकर गायके मूत्रके साथ पीनेसे कंप और अण्डवृद्धि दूर होती है ॥ ८ ॥

मर्दयित्वार्कपत्रैस्तु तापितं चारुसैन्धवम् ॥
तेन लिप्तं शमं याति कुरंडं न पुनर्भवेत् ॥ ९ ॥

अर्थ–आकके पत्तोंको शुद्ध सेंधे नमकमें पीसकर गरम करके लेप करनेसे अण्डवृद्धि शांत होतीहै और फिर कभी नहीं होती ॥ ९ ॥

सैन्धवे सर्पिषा पक्के क्षिप्त्वा उग्रां च धारयेत् ॥

सप्ताहमेतयोर्लेपात्कुरंडो गच्छति ध्रुवम् ॥ १० ॥

अर्थ-सेंधानमकको धीमें पकाकर और उसमें वचका चूर्ण डालकर सात दिन तक लेप करनेसे अण्डवृद्धि रोग शांत होता है ॥ १० ॥

आखुकर्णीश्वरीमूलं मूलमेरण्डमम्भसा ॥
संपिष्य लेपतः शूलं कुरंडं हन्ति वेगतः ॥ ११ ॥

अर्थ-मूसाकर्णी, शिवलिंगीकी जड और अण्डकी जड इन तीनोंको जलमें पीसकर लेप करनेसे शूलसहित अण्डवृद्धि रोग नष्ट होताहै ॥ ११ ॥

आटरूषशिखा दारु रास्ना विश्वाग्निमूलिका ॥
पटोली सैन्धवं कुष्ठमेतल्लेपोंडवृद्धिहृत् ॥ १२ ॥

अर्थ-अडूसेकी जड, देवदारु, रास्ना, सोंठ, चीतेकी जड, परवल, सेंधानमक और कूठ इन ओषधियोंका लेप करनेसे अण्डवृद्धि रोग नाश होताहै ॥ १२ ॥

विशालायाः शिफाचूर्णमेरंडतैलमर्दितम् ॥
गव्याज्यपयसा पीतं कुरंडं हन्ति दारुणम् ॥ १३ ॥

अर्थ-इन्द्रायणकी जडका चूर्ण करके अण्डीके तेलमें मिलाकर गायके घी तथा दूधके साथ पीनेसे अत्यन्त दुस्तर अण्डवृद्धि रोग नष्ट होताहै ॥ १३ ॥

त्रिफलाचूर्णकं प्रातः पीतं गोमूत्रसंयुतम् ॥
कफवातोद्भवं हन्ति श्वयथुं वृषणोद्भवम् ॥ १४ ॥

अर्थ-प्रातःकाल त्रिफलेके चूर्णको गायके मूत्रके साथ पीनेसे कफ तथा वायुसे उत्पन्न हुवा वृषणसूजन भी दूर होताहै ॥ १४ ॥

सुपिष्टैरंडतैलेन कासीसं सैन्धवं समम् ॥
लिप्त्वा तेनांबराबद्धं कुरंडः क्षीयते क्रमात् ॥ १५ ॥

अर्थ-कसीस और सेंधानमक लेकर खूब बारीक पीसकर अण्डके ऊपर लेप करके ऊपरसे वस्त्र बांध देवे तो धीरे धीरे अण्डवृद्धि रोग दूर होजाता है ॥ १५ ॥

अर्शोरोगके लक्षण.

शूलं दाहोतिविष्टंभो वाते पित्ते कफे क्रमात् ॥
सरक्तश्च मलो ज्ञेयं सर्वेष्वर्शःसु लक्षणम् ॥ १६ ॥

अर्थ–अर्शरोगमें वायु बलवान् होयतो रोगीकी गुदामें शूल अथवा दाह होताहै, जो पित्त बलवान् होय तो दाह होताहै और कफ बलवान् होय तो दस्त खुलकर नहीं आताहै और सब प्रकारके अर्शमें मलके साथ रुधिर गिरताहै ये बवासीरके लक्षण जानने ॥ १६ ॥

अर्शोरोगकी चिकित्सा.

हन्त्यश्वमारकासीसविडंगैलाग्निसैन्धवैः ॥
सार्कक्षीरैः शृतं तैलमभ्यंगात्पायुकीलकान् ॥ १७ ॥

अर्थ–कनेरकी जड, हीराकसीस, वायविडंग, इलायची, चीता, सेंधा नमक और आकका दूध इन औषधियोंके द्वारा तेलको पकाकर लेप करनेसे गुदामें उत्पन्न हुए अर्शके अंकुर दूर होजाते हैं ॥ १७ ॥

मागधी मरिचं शुण्ठी वह्निः सूरणकन्दकम् ॥
एकद्विचतुरष्टौ च षोडशः क्रमतो युतैः ॥ १८ ॥
भागैः सद्गुटिका कार्य्या गुडेनाक्षप्रमाणिका ॥
भक्षिता प्रसभं हन्ति गुदजातानसंशयम् ॥ १९ ॥

अर्थ–पीपल १ तोला, मिरच २ तोले, सोंठ ४ तोले, चीता ८ तोले और जिमीकंद १६ तोले इस प्रकार सबको लेकर एकत्र पीसे और पश्चात् गुडमें मिलाकर बहेडेके फलकी समान गोली बनावे इन गोलिओंको सेवन करनेसे अर्शरोग अवश्य नष्ट होजाता है॥ १८-१९ ॥

सूरणं मुशली तक्रं कुटजस्य त्वचा युतम् ॥
अर्शांसि हन्ति पानेन यथा बिल्वस्य भक्षणम् ॥ २० ॥

अर्थ–जिमीकंद, मुसली और कुडेकी छालका चूर्ण इनको एकत्र पीसकर

छाछके साथ पीनेसे अर्शरोग नष्ट होजाताहै उसीप्रकार बेलगिरीको पीसकर तक्रके साथ पीनेसे भी बवासीर दूर होजातीहै ॥ २० ॥

निंबेंद्रवारुणीदेवदालीबीजगुडैः कृता ॥
वर्तिर्गुदे च निक्षिप्ता ह्यर्शांसि हन्ति मूलतः ॥ २१ ॥

अर्थ-नीमकी निबोली, इन्द्रायनके बीज और बन्दालके बीज इनको पीसकर गुडमें मिलाकर बत्ती बनाकर गुदामें रखनेसे अर्शोरोग जडसे नष्ट होजाताहै ॥ २१ ॥

अम्लकांजिकसंपिष्टा सबीजं कटुदुग्धिका ॥
सगुडा हन्ति लेपेन ह्यर्शांस्यामूलतो ध्रुवम् ॥२२॥

अर्थ-बीजयुक्त कडवी तोंबीको खट्टी कांजीमें पीसकर लेप करनेसे अर्शोरोग निश्चय नष्ट होजाताहै ॥ २२ ॥

पलाशभस्मतोयेन त्रिगुणेन तु गोघृतम् ॥
पक्वं कटुत्रयोपेतं भुक्तमर्शोविनाशकृत् ॥ २३ ॥

अर्थ-ढाककी राखका जल ३ भाग और गायका घी १ भाग लेकर उसमें सोंठ, मिरच और पीपल डालकर पकावे । इस घृतको सेवन करनेसे अर्शोरोग नष्ट होजाताहै ॥ २३ ॥

नवनीतान्वितान्कृष्णाँस्तिलान्भुक्त्वा निवारयेत्॥
अर्शांसि मासमात्रेण यथा सूरणभक्षणात् ॥ २४ ॥

अर्थ-नैनीघीमें काले तिलोंको मिलाकर एक मास पर्य्यन्त सेवन करनेसे अथवा जिमीकंदको सेवन करनेसे अर्शोरोग नष्ट होजाताहै ॥ २४ ॥

शृङ्गस्यांकुरकानां च धूमतोऽपानमार्गकः ॥
धूपितो दिनसप्तकंचेदर्शांसि हन्ति वेगतः ॥ २५॥

अर्थ-सींगके अंकुरोंका सात दिन तक गुदामें धुआँ देनेसे बवासीरके मस्से नष्ट होजाते हैं ॥ २५ ॥

मूसलीमूलचूर्णं वा गोमूत्रेण नरः पिबेत् ॥
तक्राशी तस्य नश्यंत्यर्शांसि मासेन निश्चितम् २६॥

अर्थ–मूसलीकी जडका चूर्ण गायके मूत्रके साथ पीनेसे और उसके ऊपर छाछके साथ भोजन करनेसे एक मासमें अर्शोरोग निश्चय नष्ट होजाताहै ॥२६॥

गव्यं दुग्धं सुधाकाण्डं कटुका निम्बपल्लवाः ॥
करंजो बस्तमूत्रेण लेपनं श्रेष्ठमर्शसाम् ॥ २७ ॥

अर्थ–गायका दूध, थूहरकी लकडी, कुटकी, नीमके पत्ते और करंजकी छाल इन सबको बकरीके मूत्रमें पीसकर लेप करनेसे अर्शोरोग निश्चय नष्ट होजाताहै ॥ २७ ॥

लवणेनारनालेन पिष्टा निम्बस्य पल्लवाः ॥
गुदव्याधिहरा भुक्ता करंजो गोजलान्वितः ॥ २८॥

अर्थ–नीमके पत्ते और सेंधा नमकको कांजीमें पीसकर सेवन करनेसे अथवा गायके मूत्रमें करंजको पीसकर सेवन करनेसे अर्शकी व्याधि नष्ट होजातीहै ॥ २८ ॥

कुक्कुटस्य बिलोद्भूतमृत्तिकाशौचतोऽथवा ॥
नारंगमूलिका बद्धा कटावर्शोविनाशनी ॥ २९ ॥

अर्थ–नारंगीकी जडको कमरमें बांधनेसे अर्शोरोग नष्ट होताहै । मुर्गेके स्थानकी मट्टी अथवा विष्ठाका लेप करनेसे बवासीर दूर होतीहै ॥ २९ ॥

शिरीषबीजकुष्ठाह्वक्षारपिप्पलिसैंधवैः ॥ लांगली-
मूलगोमूत्रसज्जिकादन्तचित्रकैः ॥ ३० ॥ गोमूत्र-
दक्षविड्ङ्गजानिशाकृष्णाभिरुत्तमम् ॥ लेपत्रयमिदं
योज्यं शीघ्रमर्शोविनाशनम् ॥ ३१ ॥

अर्थ–सिरसके बीज, कूठ, जवाखार, पीपल और सेंधा नमक इन औषधियोंका चूर्ण गोमूत्रमें मिलाकर लेप करनेसे अथवा कलिहारीकी जड, सज्जीखार,

दन्तीकी जड और चीता इन औषधियोंको गोमूत्रमें पीसकर लेप करनेसे अथवा मुर्गेकी विष्ठा, चौटलीकी जड, हल्दी और पीपल इन औषधियोंको गोमूत्रमें पीसकर लेप करनेसे तत्काल ही अर्शोरोग नष्ट होजाताहै ॥ ३० ॥ ३१ ॥

सपद्मकेशरं क्षौद्रं नवनीतं नवं लिहन् ॥
सिताकेशरयुक्तं वा शोणितार्शी सुखी भवेत् ॥३२॥

अर्थ—कमलकेशर, नैनीघी, सहत, मिश्री और नागकेशर इन औषधियोंको चाटनेसे खूनी बवासीर दूर होतीहै ॥ ३२ ॥

मृल्लिप्तं शोणितं कन्दं पक्त्वाग्नौ पुटपाकवत् ॥
भक्षयेत्तैललवणं दुर्नामविनिवृत्तये ॥ ३३ ॥

अर्थ—रताल्कंद (याजमीकंद) परमट्टीका लेप करके पुटपाककी विधिसे पकावे पश्चात् उसमें तेल और सेंधानमक मिलाकर सेवन करनेसे अर्शोरोग नष्ट होताहे ॥ ३३ ॥

वातातीसारके लक्षण.

शूलं शब्दो गुदे गात्रे शैथिल्यं गात्रवेदना ॥
अल्पोऽल्पश्च मलो ज्ञेयो वातातीसारलक्षणम् ॥३४॥

अर्थ—रोगीकी गुदामें शूल होय तथा दस्त होते समय शब्द होय, शरीरमें शिथिलता तथा पीडा होय और मल थोडाथोडा उतरे ये लक्षण वातातिसारके जानने ॥ ३४ ॥

वातातिसारकी चिकित्सा.

पथ्या दारु वचा शुण्ठी मुस्ता चातिविषामृता ॥
क्वाथ एषां हरेत्पीतो वातातीसारमुल्बणम् ॥३५॥

अर्थ—देवदारु, हरड, वच, सोंठ, नागरमोथा, अतीस और गिलोय इन औषधियोंका काथ बनाकर पीनेसे अत्यन्त वेगयुक्त वातातीसार भी नष्ट होजाता है ॥ ३५ ॥

वचा पाठा कणामूलं चव्यकः कटुरोहिणी ॥ अभ-
येन्द्रयवाः शुण्ठी श्लक्ष्णपिष्टानि कारयेत् ॥ ३६ ॥
एतानि घ्नन्ति पीतानि वातातीसारमुल्बणम् ॥
अत्युग्रमामशूलं च रोगिणः पथ्यभोजिनः ॥३७॥

अर्थ--वच, पाढ, पीपलामूल, चव्य, कुटकी, हरड, इन्द्रजौ और सोंठ इन औषधियोंका बारीक चूर्ण करके जलके साथ पीनेसे और पथ्य भोजन करनेसे अत्यन्त वेगवाला वातातिसार तथा अतिभयंकर आमशूल दूर होताहै ॥३६॥३७॥

हेमजातिविषा मुस्ता दारु विश्वा सवातजम् ॥
अतीसारमथैतेषां क्वाथः पीतो निहन्ति च ॥ ३८॥

अर्थ--हिमज, अतीस, नागरमोथा, देवदारु और सोंठ इन औषधियोंका क्काथ बनाकर पीनेसे वातातिसार नष्ट होता है ॥ ३८ ॥

सुवर्चला वचा हिंगु हेमजातिविषा समम् ॥
वातातिसारहृद्भुक्तं सकटुत्रयमंभसा ॥ ३९ ॥

अर्थ--कालानमक, वच, हींग, हिमज, अतीस, सोंठ, मिरच और पीपल इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण करके जलके साथ पीनेसे वातातिसार नष्ट होताहै ॥ ३९ ॥

पित्तातिसारके लक्षण.

अंतर्दाहो मलः पीतो नीलो वातितृषारुचिः ॥
भ्रमोतीवेति विज्ञेयं पित्तातीसारलक्षणम् ॥ ४० ॥

अर्थ--जो अतिसाररोगीके भीतर दाह होय, मल पीला और नीला होय तृषा अत्यन्त होय और अरुचि तथा भ्रम होय ये पित्तातिसारके लक्षण जानने ॥ ४० ॥

पित्तातिसारकी चिकित्सा.

शुण्ठी सुवर्चला हिंगु अभयेन्द्रयवा वचा ॥
पित्तातिसारहृत्क्वाथो निपीतो मधुना सह ॥ ४१ ॥

अर्थ-सोंठ, कालानमक, हींग, हरड, इन्द्रजौ और वच इनको समान भाग लेकर क्वाथ बनाकर सहत मिलाकर पान करनेसे पित्तातिसार दूर होताहै ॥४१॥

मधुयष्टिः सिता लोध्रमुत्पलं समभागतः ॥
मधुरेण समं पीतं रक्तपित्तातिसारहृत् ॥ ४२ ॥

अर्थ-मुलेठी, मिश्री, लोध और कमल इन सबको समान भाग लेकर क्वाथ बनाकर सहत मिलाकर पान करनेसे रक्तपित्तातिसार दूर होताहै ॥ ४२ ॥

जंबूचूतफलस्यास्थि द्राक्षा पथ्या च पिप्पली ॥
खर्जूरशाल्मलीबिल्वीबोध्युदुम्बरवल्कलम् ॥ ४३ ॥
एतच्चूर्णं समं श्लक्ष्णं मधुना सह भक्षितम् ॥
रक्तपित्तोद्भवं हन्यादतिसारमथोल्बणम् ॥ ४४ ॥

अर्थ-जामुन और आमकी गुठली, दाख, हरड, पीपल, खजूर, सेमल, बेलगिरी, पीपल और गूलरकी छाल इन सबका एकत्र चूर्ण करके सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे अतीव उल्बण रक्त और पित्तोत्पन्न अतिसार दूर होताहै॥४३॥४४॥

शल्लकीबदरीजंबूचारुचूतार्जुनत्वचः ॥
पीताः क्षीरेण मध्वाढ्याः पृथक्शोणितवारणाः॥४५॥

अर्थ-सालई, बेरी, जामुन, पीपल, आम और अर्जुन इनमेंसे किसी एककी छालको लेकर बारीक पीसकर दूध और सहत मिलाकर पान करनेसे रक्तातिसार दूर होता है॥ ४५ ॥

कल्कं कृष्णतिलोद्भूतं शर्कराचूर्णमिश्रितम् ॥
आज्येन पयसा पीतं सद्योरक्तं नियच्छति ॥ ४६ ॥

अर्थ-तिलोंके कल्कमें मिश्री मिलाकर घृत और दूधके साथ पान करनेसे तत्काल रुधिरका अतिसार दूर होता है ॥ ४६ ॥

कफातिसारके लक्षण.

दुर्गंधः शीतलः पांडुः पिच्छलो मंदवेदनः ॥

मलः स्यादिति विज्ञेयं श्लेष्मातीसारलक्षणम्॥४७॥

अर्थ–कफातिसारमें दुर्गंधित, शीतल, सफेद और चिकना ऐसा मल आताहै तथा रोगीको थोडी थोडी पीडा होतीहै ॥ ४७ ॥

कफातिसारकी चिकित्सा.

अभयातिविषा विश्वा वचा सिंधुः सुवर्चलः ॥
चूर्णमुष्णांभसा पीतमिदं श्लेष्मातिसारहृत् ॥ ४८ ॥

अर्थ–हरड, अतीस, सोंठ, वच, सेंधानमक और कालानमक इन औषधियोंका चूर्ण गरमजलके साथ सेवन करनेसे कफातिसार दूर होताहै ॥ ४८ ॥

पाठा पथ्या वचा कुष्ठं चित्रकः कटुरोहिणी ॥
चूर्णमुष्णांभसा पीतं श्लेष्मातीसारनाशनम् ॥४९ ॥

अर्थ– हरड, पाढ, वच, कूठ, चीता और कुटकी इन औषधियोंका चूर्ण गरमजलके साथ सेवन करनेसे कफातिसार दूर होताहै ॥ ४९ ॥

अभयातिविषा हिंगु सौवर्चलकटुत्रयम् ॥
एतच्चूर्णं सुतप्तांभः पीतं श्लेष्मातिसारहृत् ॥ ५० ॥

अर्थ–हरड, अतीस, हींग, कालानमक, सोंठ, मिरच और पीपल इन औषधियोंका चूर्ण गरमजलके साथ सेवन करनेसे कफातिसार दूर होताहै॥५०॥

किंवा कुष्ठं वचा पाठा चित्रकः कटुरोहिणी ॥
चूर्णमुष्णांभसा पीतं श्लेष्मातीसारनाशनम् ॥ ५१ ॥

अर्थ–अथवा कूठ, वच, पाढ, चीता और कुटकी इन औषधियोंका चूर्ण गरमजलके साथ सेवन करनेसे कफातिसर नष्ट होताहै ॥ ५१ ॥

रोहिण्यतिविषापाठावचाकुष्ठसमुद्भवः ॥
क्वाथः पीतो निहन्त्येव श्लेष्मातीसारमुल्बणम् ॥ ५२ ॥

अर्थ–कुटकी, अतीस, पाढ, वच और कूठ इन औषधियोंका क्वाथ बनाकर पीनेसे कफातिसार नष्ट होताहै ॥ ५२ ॥

अतिसारकी सामान्य चिकित्सा.

शाल्मलीशुष्कनिर्यासो यवानी धातकी शिफा ॥
शुण्ठी पीतानि तक्रेण घ्नन्त्यतीसारमुल्बणम् ॥ ९३ ॥

अर्थ–सेमलका गूदा, अजवायन, धायकी जड और सोंठ इन औषधियोंका चूर्ण मट्ठेके साथ पीनेसे उल्बण अतिसार दूर होताहै ॥ ९३ ॥

मुस्ता चेन्द्रयवो वह्निः कटुकी च कटुत्रयम् ॥
किरातकमिति द्वौद्वौ भागावेषां च षोडश ॥ ९४ ॥
भागाः कुटजकल्कस्य चूर्णं तंदुलवारिणा ॥ पीतं
शोफमतीसारं ग्रहणीं हन्ति सज्वराम् ॥ ९५ ॥

अर्थ–नागरमोथा, इन्द्रजौ, चीता, कुटकी, सोंठ, मिरच, पीपल और चिरायता इन प्रत्येकको दोदो भाग लेवै और इन्द्रजौ सोलह भाग लेवै इन सबका चूर्ण करके चावलोंके जलके साथ पीनेसे, सूजन, अतिसार, संग्रहणी और ज्वर दूर होताहै ॥ ९४ ॥ ९५ ॥

रिङ्गणीधातकीमूलं दाडिमीकुटजत्वचः ॥
लोध्रं च हन्त्यतीसारं पीतं तन्दुलवारिणा ॥ ९६ ॥

अर्थ–कटेरीकी जड, धायकी जड, दाडिमकी छाल, कुडेकी छाल और लोध इन औषधियोंको चावलोंके जलके साथ सेवन करनेसे अतिसार दूर होताहै ॥ ९६ ॥

किरातं कुटकी मुस्ता शुण्ठी च मरिचं कणा ॥
एकैकांशमितं सर्वं द्वावग्नेः कुटजत्वचः ॥ ९७ ॥
दशभागा गुडस्यांभःपीतं शोफं च कामलम् ॥
ग्रहणीं पांडुरोगं च हन्त्यतीसारमुल्बणम् ॥ ९८ ॥

अर्थ–चिरायता, कुटकी, नागरमोथा, सोंठ, मिरच और पीपल इन सबको समान भाग लेवे और चीता, तथा कुडेकी छाल दोदो भाग लेवे, दश भाग गुड

लेवे पश्चात् सबको एकत्रकरके जलके साथ पीनेसे, सूजन, कामला, संग्रहणी, पाण्डुरोग और अतिसार ये सब दूर होजाते हैं ॥ ५७ ॥ ५८ ॥

सज्जीकुटजकल्कं च द्वयोश्चूर्णं समांशतः ॥
घृतेन भक्षितं शीघ्रं हन्त्यतीसारमुल्बणम् ॥५९ ॥

अर्थ–सज्जीखार और इन्द्रजौ इन दोनोंको समान भाग लेकर चूर्ण करके घीके साथ सेवन करनेसे अतिसाररोग तत्काल दूर होजाता है ॥ ५९ ॥

बिल्वाब्दधातकीपाठाशुण्ठीमोचरसाः समाः ॥
पीता रुंधंत्यतीसारं गुडतक्रेण दुर्जयम् ॥ ६० ॥

अर्थ–बेल, नागरमोथा, धायके फूल, पाढ, सोंठ और मोचरस इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण करके गुड और छाछके साथ पीनेसे कष्टसाध्य भी अतिसार दूर होजाताहै ॥ ६० ॥

यवानी धातकीपुष्पमार्द्रकं शाल्मलीरसः ॥
मथितेन समं भुक्तं दध्नातीसारनाशनम् ॥ ६१ ॥

अर्थ–अजवायन, धायके फूल, अदरख और सेमलका रस इन सबका कल्क बनाकर दही या मट्ठेके साथ पीनेसे अतिसाररोग दूर होताहै ॥ ६१ ॥

अंकोलमूलं कर्षं वा पिष्ट्वा तंदुलवारिणा ॥
तत्पीतं ग्रहणीं हन्ति सर्वातीसारनाशनम् ॥ ६२॥

अर्थ–अथवा अंकोलकी जड एक तोला लेकर चावलोंके जलमें पीसकर पीनेसे संग्रहणी तथा सब प्रकारके अतिसार रोग दूर होतेहैं ॥ ६२ ॥

संग्रहणीके सामान्यलक्षण.

भ्रमस्तृषारुचिश्छर्दिर्मुखं च विरसं श्रुतिः ॥ सनादा
चेति सामान्यं ग्रहणीलक्षणं भवेत् ॥ ६३ ॥
मुहुर्मुंचीत गृह्णाति विमुंचति मुहुर्मुहुः ॥ ग्रहणी
चेति विज्ञेया वातपित्तादिदोषतः ॥ ६४ ॥

अर्थ-संग्रहणीरोगमें भ्रम होय, तृषा होय, अरुचि होय, वमन होय, मुखमें नीरसता और कानोंमें शब्द होताहै इसप्रकार संग्रहणी रोगके सामान्य लक्षण जानने तथा जिसमें वात, पित्तादि दोषोंके कारणोंसे वारंवार दस्त होय उसको संग्रहणी रोग कहतेहैं ॥ ६३ ॥ ६४ ॥

वातजसंग्रहणीके लक्षण.

हस्तयोः पादयोः कंपस्तालुकंपः शिरोऽव्यथा ॥
श्वासो मूर्च्छा गुदे कुक्षौ जठरे चातिवेदनाः॥६५॥
मलः श्यामः सफेनश्च जायते च पुनः पुनः ॥
वातोत्थग्रहणीचिह्नमिदमूचुर्विचक्षणाः ॥ ६६ ॥

अर्थ-हाथ, पांव और तालुमें कम्प होय, शिरमें पीडा होय, श्वास होय, मूर्च्छा होय, गुदा कोख और पेटमें अत्यन्त पीडा होय, दस्त काला और झागयुक्त होय और वारंवार आवे ये सब लक्षण वातजनित संग्रहणीके जानने ॥६५॥६६॥

वातसंग्रहणीकी चिकित्सा.

रामठातिविषापाठावचेन्द्रयवचूर्णकम् ॥
वारिपीतं निहन्त्येव ग्रहणीं वातसंभवाम् ॥ ६७ ॥

अर्थ- हींग, अतीस, पाढ, वच और इन्द्रजौ इन औषधियोंका चूर्ण जलके साथ सेवन करनेसे वातजसंग्रहणी नष्ट होतीहै ॥ ६७ ॥

रिङ्गणी दुल्लरी कृष्णा काकोलींद्रयवा वचा ॥
कर्चूरं सैन्धवं पाठा काचोऽब्धिविडपूर्वकम् ॥६८॥
लवणं चित्रकं चूर्णमेषां सौवर्चलान्वितम् ॥ आ-
ध्मानं वातजां हन्ति ग्रहणीं वारिणाशितम् ॥ ६९ ॥

अर्थ-कटेरी, दुल्लरी, पीपल, काकोली, इन्द्रजौ, वच, कचूर, सेंधानमक, पाढ, कचियानमक, समुद्र नमक, विडनमक, चीता और कालानमक इन सब औषधियोंका चूर्ण बनाकर जलके साथ सेवन करनेसे अफरा और वातज संग्रहणी दूर होतीहै ॥ ६८ ॥ ६९ ॥

शालिपर्णीवचाशुण्ठीबिल्वधान्यकचूर्णितम् ॥
पीतमुष्णांभसा हन्ति ग्रहणीं वातसंभवाम् ॥ ७० ॥

अर्थ–शालिपर्णी, वच, सोंठ, वेलगिरी और धनिया इन सब औषधोंका चूर्ण गरमजलके साथ सेवन करनेसे वातज संग्रहणी नष्ट होतीहै ॥ ७० ॥

पित्तजसंग्रणीके लक्षण.

नीलः पीतोऽथ दुर्गन्धो मलः पीडा गुदे हृदि ॥
दाघो हृदि तृषा चिह्नं पित्तग्रहणिकोद्भवम् ॥ ७१ ॥

अर्थ–पित्तजसंग्रहणीमें मल नीला और पीला तथा दुर्गन्धित होय एवं हृदयमें पीडा होय, छातीमें दाह होय, अत्यन्त तृषालगे तो पित्तज संग्रहणीके लक्षण जानने ॥ ७१ ॥

पित्तजसंग्रणीकी चिकित्सा.

कटुकेंद्रयवापाठाः कटुकत्वग्रसांजनम् ॥ धात-
क्यतिविषा शुण्ठी मुस्ता पिष्टा सुवारिणा ॥ ७२ ॥
विष्टंभमरुचिं रक्तं दाघं च गुदवेदनाम् ॥ पित्तोत्थ-
ग्रहणीं हन्ति मधुना सह भक्षिता ॥ ७३ ॥

अर्थ–कुटकी, इन्द्रजौ, पाठ, कुडेकी छाल, रसौत, धायके फल, अतीस सोंठ और नागरमोथा इन सबको जलमें पीसकर सहत मिलाकर सेवन करनेसे विष्टम्भ, अरुचि, रक्त, दाह और गुदाकी पीडा युक्त पित्तज संग्रहणी दूर होती है ॥ ७२ ॥ ७३ ॥

कुटजोतिविषा शुण्ठी मधुकं धातकीफलम् ॥ शाल्म-
लीशुष्कनिर्यासः कणा मुस्ता समांशतः ॥ ७४ ॥
सुश्लक्ष्णं चूर्णमेतेषां मधुना सह भक्षितम् ॥
हन्त्यामरक्तपित्तोत्थां ग्रहणीमतिवेगतः ॥ ७५ ॥

अर्थ–इन्द्रजौ, अतीस, सोंठ, मुलैठी, धायके फल, सेमलका सूखा गोंद

(मोचरस), पीपल और नागरमोथा इन सबको समान भाग लेकर बारीक चूर्ण करके सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे आम और रक्त सहित पित्तज संग्रहणी नष्ट होतीहै ॥ ७४ ॥ ७५ ॥

कफजसंग्रहणीके लक्षण.

श्वासोरुचिर्जलं वक्रे रोमांचोतिगुरूदरम् ॥
श्लेष्मग्रहणिकाचिह्नं मिश्रं तत्स्यात्रिदोषजम् ॥७६॥

अर्थ-कफज संग्रहणीमें श्वास होय, अन्नमें अरुचि होय, मुखमें पानी आवे, रोमांच हो आवे और पेट भारी होय ये लक्षण कफज संग्रहणीके जानने और जो वातादि तीनों दोष मिश्रित होय तो त्रिदोषज संग्रहणीके लक्षण जानने ॥ ७६ ॥

कफजसंग्रहणीकी चिकित्सा.

अभयातिविषा शुंठी वचा मुस्ता कणाशिफा ॥
विडादिलवणं वह्निः कुष्ठं दारु समांशतः ॥ ७७ ॥
सुश्लक्ष्णं चूर्णमेतेषां भक्षितं तप्तवारिणा ॥ श्लेष्मजां
ग्रहणीं हन्ति रक्तामाभ्यां सहाचिरात् ॥ ७८॥

अर्थ-हरड, अतीस, सोंठ, वच, नागरमोथा, पीपलामूल, विडलवण, चीता, कूठ और देवदारु इन सबको समान भाग लेकर बारीक चूर्ण करके गरमजलके साथ सेवन करनेसे रक्त और आमसहित कफज संग्रहणी शीघ्र ही दूर होजातीहै ॥ ७७ ॥ ७८ ॥

कणामूलं कणाजीरं चव्यं शुंठी च चूर्णकम् ॥
पीतमुष्णांभसा हंति ग्रहणीं श्लेष्मसंभवाम् ॥ ७९ ॥

अर्थ-पीपलामूल, पीपल, जीरा, चव्य और सोंठ इन सबका चूर्ण गरम जलके साथ सेवन करनेसे कफज संग्रहणी नष्ट होतीहै ॥ ७९ ॥

पथ्या शुण्ठी कणा वह्निश्चूर्णमेषां समांशतः ॥
तक्रपीतं ध्रुवं हंति ग्रहणीं श्लेष्मसंभवाम् ॥ ८० ॥

अर्थ-हरड, सोंठ, पीपल और चीता इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण बनाकर मट्ठेके साथ सेवन करनेसे कफज संग्रहणी शीघ्र ही नष्ट होजातीहै॥८०॥

शाल्मलीशुष्कनिर्यासो हिंगु पथ्या समं त्रयम् ॥
तक्रपीतं निहन्त्याशु ग्रहणी श्लेष्मसंभवाम् ॥ ८१ ॥

अर्थ-सेमलका सूखा गोंद, हींग और हरड इन तीनों औषधियोंको समान भाग लेकर मट्ठेके साथ सेवन करनेसे कफज संग्रहणी नष्ट होतीहै ॥ ८१ ॥

पादरोगवर्णन.

श्लीपदं रिंगिणीवात ऊरुस्तम्भो विचर्चिका ।
तुर्वलं चेति पादस्था रुजोंघ्रिगतिनाशनाः ॥८२॥

अर्थ-श्लीपद, रांघन, ऊरुस्तम्भ, विचर्चिका और तुर्वल ये पैरके रोग पाँवकी गतिको नष्ट करतेहैं ॥ ८२ ॥

श्लीपदकी चिकित्सा.

शतमूली शिफातैलं तैलमेरंडसम्भवम् ।
द्वयमेतत्प्रलेपेन श्लीपदं हन्ति कोमलम् ॥ ८३ ॥

अर्थ-शतावरका तेल तथा अण्डीका तेल इन दोनोंको मिलाकर लेप करनेसे कोमल श्लीपदरोग नाश होताहै ॥ ८३ ॥

धत्तूरैरंडनिर्गुण्डीवर्षाभूशिग्रुसर्षपैः ।
प्रलेपः श्लीपदं हन्ति चिरोत्थमतिदारुणम् ॥८४॥

अर्थ-धतूरा, अण्ड, निर्गुण्डी, पुनर्नवा, सहिंजन और सरसों इन सबका लेप करनेसे बहुतकालसे उत्पन्न हुआ दारुण भी श्लीपद नष्ट होताहै ॥ ८४ ॥

रांघनकि चिकित्सा.

बहुकालीननिम्बस्य मूलं शीतेन वारिणा ।
निर्घृष्टं रिंगिणीवातं पीतं हन्ति प्रलेपतः ॥ ८५ ॥

अर्थ-बहुत पुरानी नीमकी जडको शीतलजलमें घिसकर पीनेसे तथा लेप करनेसे रांगनवात दूर होताहै ॥ ८५ ॥

तगरस्य शिफा शुंठ्या मरिचेनार्द्रकान्विता ।
रिंगिण्या वारिणा पिष्टा पीता हन्ति रुजं ततः ॥८६॥

अर्थ-तगरकी जड, सोंठ, मिरच और अदरख इन सबको जलमें पीसकर पीनेसे रांघनकी पीडा दूर होतीहै ॥ ८६ ॥

बाहलाकी चिकित्सा.

वरुणांकोलमूलानां पिष्टमत्र प्रलेपतः ।
बालो विनश्यति क्षिप्रं कटुतिक्ताशनेषु सः ॥८७॥

अर्थ-वरुण तथा अंकोलकी जडको पीसकर लेप करनेसे और कटु तथा तिक्त भोजन करनेसे बाहला नष्ट होताहै ॥ ८७ ॥

ऊरुस्तम्भकी चिकित्सा.

भल्लातपिप्पलीमूलपिप्पलीकथितं जलम् ।
ऊरुस्तम्भं हरत्याशु पीतं पथ्याशिनोऽनिशम्॥८८॥

अर्थ-भिलावाँ, पीपलामूल और पीपल इनका क्काथ बनाकर सदैव पीवे और पथ्यसे रहे तो ऊरुस्तम्भ शीघ्र नष्ट होताहै ॥ ८८ ॥

पिप्पली पिप्पलीमूलं भल्लातकफलानि च ।
कल्के मधुयुते पीते ऊरुस्तम्भाद्विमुच्यते ॥ ८९ ॥

अर्थ-पीपल, पीपलामूल और भिलावाँ इन औषधियोंका कल्क बनाकर सहत डालकर सेवन करनेसे ऊरुस्तम्भरोग दूर होताहै ॥ ८९ ॥

मधुना सर्पिषा चैव वल्मीकस्य मृदा युतैः ।
कृतं विलेपनं शीघ्रमूरुस्तंभनिवारणम् ॥ ९० ॥

अर्थ-सहत और घी तथा बाँबईकी मट्टी इन सबको एकत्र करके लेप करनेसे ऊरुस्तम्भरोग दूर होताहै ॥ ९० ॥

वृद्धिर्महौषधं दारु चूर्णमेषां समांशतः ।
पीतमुष्णाम्भसा शीघ्रमूरुस्तम्भनिवारणम् ॥९१॥

अर्थ–वृद्धि यद्यपि इस नामकी वनस्पति हिमालयमें उत्पन्न होतीहै, तथापि कितनेक वैद्य यहांपर ऐसा पाठ कहतेहैं कि वृद्धि इस शब्दसे औषधिक्रमसे वृद्धि देनी चाहिये सोंठ, देवदारु इन तीनों औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण बनाकर गरमजलके साथ सेवन करनेसे ऊरुस्तम्भरोग दूर होताहै ॥ ९१ ॥

विचर्चिकारोगकी चिकित्सा.

त्रिकटुः सैंधवं दूर्वा तालकं समभागतः ।
गोमूत्रेण समं पिष्टं हन्ति लेपाद्विचर्चिकाम् ॥९२॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, सेंधानमक, दूब और हरताल इन सबको समान भाग लेकर गायके मूत्रमें मिलाकर लेप करनेसे विचर्चिकारोग दूर होताहै ॥ ९२ ॥

यवक्षारः शिलातालं सिन्दूरं शखगंधकौ ।
कासीसं तैलमर्कांशुतप्तं हन्ति विचर्चिकाम् ॥९३॥

अर्थ–जवाखार, मैनशिल, हरताल, सिन्दूर, शंख, गन्धक और हीराकसीस इन सबका चूर्ण तेलमें मिलाकर धूपसे पकावे इस तेलको मलनेसे विचर्चिकारोग नष्ट होताहै ॥ ९३ ॥

अत्यम्लतक्रं गोमूत्रं सैन्धवं क्वथितं त्रयम् ।
चिरकालोद्भवां हन्ति लेपनाद्वा विचर्चिकाम् ॥९४॥

अर्थ–अत्यन्त खट्टा मठ्ठा, गोमूत्र और सेंधानमक इन तीनोंको पकाकर लेप करनेसे बहुत कालकी विचर्चिका भी नष्ट होजातीहै ॥ ९४ ॥

शिलातालनिशाकुष्ठं लांगलीवह्निचूर्णकम् ॥
गोमूत्रेण समं भागं हन्ति लेपाद्विचर्चिकाम्॥९५॥

अर्थ–मैनशिल, हरताल, हल्दी, कूठ, कलिहारी और चीता इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण करके गोमूत्रमें मिलाकर लेप करनेसे विचर्चिका रोग नष्ट होताहै ॥ ९५ ॥

सर्पिश्छागीपयोमिश्रं सप्तभिर्लेपमात्रतः ॥
शतावरीशिफाफेनलेपो वह्निप्रतापहृत् ॥ ९६ ॥

अर्थ—बकरीके दूधमें घी मिलाकर सात दफे लेप करनेसे अग्निके जले हुएकी दाह दूर होतीहै शतावरके झागोंका लेप करनेसे अग्निसे जलेहुएकी दाह दूर होतीहै ॥ ९६ ॥

सैंधवं मारिचोशीरं सर्पिर्मधु गुडः पुरः ॥
गैरिकं स्फुटितौ पादौ लिप्तौ वै पङ्कजोपमौ ॥ ९७ ॥

अर्थ—सेंधानमक, मिरच, खस, घी, सहत, गुड, गुग्गुल और गेरू इन सबको मिलाकर मरहम बनाकर बिवाईपर लगानेसे बिवाई दूर होकर पैर कमलकी समान होजातेहैं ॥ ९७ ॥

मदनान्वितसामुद्रलवणं महिषीभवम् ॥
मृक्षणं तापितं लेपात्पादौ स्यातां कजोपमौ ॥ ९८ ॥

इति श्रीश्रीकण्ठसूरिविरचिते हितोपदेशे
सप्तमः समुद्देशः ॥ ७ ॥

अर्थ—मैनफल, सेंधानमक और भैंसका मक्खन इन तीनोंको गरम करके पैरके ऊपर लेप करनेसे चरण कमलकी समान होजातेहैं ॥ ९८ ॥

इति श्रीपरमजैनाचार्यश्रीकण्ठसूरिविरचिते हितोपदेशे वैद्यकसारसंग्रहे भिषग्वर-हरिशङ्करात्मजशङ्करलालकृतभाषाटीकायां कुरण्डार्शोतिसारग्रहणी-पादरोगचिकित्सावर्णनं नाम सप्तमः समुद्देशः ॥ ७ ॥

अथ लूताभगन्दराद्यधिकारः ।

लूतारोगके लक्षण.

वातपित्तादिदोषेण चतुर्धोत्पद्यते तनौ ॥
लुनाति सर्वगात्राणि तेन लूता प्रकीर्तिता ॥ १ ॥

अर्थ—वात, पित्त और कफ इन तीन दोषोंसे शरीरमें चार प्रकारका लूता रोग उत्पन्न होताहै यह समस्त अंगोंको काटडालती है इस कारण इसको लूता कहतेहैं ॥ १ ॥

लूतारोगकी चिकित्सा.

अगस्तिपत्रनिर्यासलेपो लूताविषापहः ॥
गोजिह्वामूलिकासर्पिर्लेपो वा तद्विनाशनः ॥ २ ॥

अर्थ—अगस्तियाके पत्तोंके रसका लेप करनेसे लूताका विष दूर होताहै अथवा गोजियाकी जडके रसका तथा घीका लेप करनेसे भी लूताका विष दूर होताहै ॥ २ ॥

वातजलूताके लक्षण.

श्वेताख्या दक्षिणे हस्ते वामे कृष्णकरी तथा ॥
कपिला नासिकामध्ये पीता चिबुकनाशिनी ॥३॥
त्रिमंडला दक्षिणांगे वामे वामांगभेदिनी ॥
दक्षस्कंधगता लूता विषा वामे विषापहा ॥ ४ ॥
ताम्रवर्णा कृकाटिस्थेत्येवं वातसमुद्भवा ॥
आभिर्दष्टस्य चिह्नानि भवन्त्येतानि देहिनः ॥५॥
हिक्कापस्मारदुःस्वप्नं तालुशोषोंगकंपनम् ॥
कषायत्वं च दंतानां निद्रानाशोद्भमो भृशम् ॥ ६ ॥

अर्थ—दहिने हाथकी लूताको श्वेता कहतेहैं, बायें हाथकी लूताको कृष्णकरी कहतेहैं, नासिकाकी लूताको कपिला कहतेहैं और ठोडीको नाश करनेवाली लूताको पीता कहतेहैं, दक्षिण अंगमें होनेवालीको त्रिमंडला और बायें अंगमें होनेवालीको वामांगभेदिनी कहतेहैं, दक्षिण स्कन्धमें होनेवालीको विषा और बांये-स्कन्धमें होनेवालीको विषापहा कहतेहैं कृकाटास्थिमें स्थित जो लूता है उसको ताम्रवर्णा कहतेहैं इस प्रकार वातसे उत्पन्नहुई लूता जाननी इन लूताओंमें दूषित

हुए मनुष्यके ये लक्षण होतेहैं—उसको हिचकी आवै, अपस्मार हो, दुष्टस्वप्न देखे, तालुमें शोष, शरीरमें कंप, दांत कषैले होजायँ, निद्रा नहीं आवै और रोमांच हो आवै ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

वातजल्लूताकी चिकित्सा.

उत्पलं चन्दनं कुष्ठं जीवंती शुंठि पाटलैः ॥
बालबिल्वं च निर्गुण्डी मदनो ब्रह्मदण्डिका ॥ ७ ॥
मदनो वेतसश्चैव तगरो वरुणत्वचः ॥ तरणाल्लेप-
नाच्चैषां लूतादष्टं विनश्यति ॥ ८ ॥

अर्थ—कमल, चन्दन, कूठ, जीवन्ती, सोंठ, पाढल कचे बेलका गूदा, निर्गुण्डी, मेनफल, ब्रह्मदण्डी, मैनफल, बेंत, तगर और वरुणावृक्षकी छाल इन सबको जलमें पीसकर लेप करनेसे लूताका विष दूर होता है ॥ ७ ॥ ८ ॥

पित्तजल्लूताके लक्षण.

कसनाकरमध्यस्था वामे रक्तवती करे ॥ वीरक्षेत्र-
गवा दक्षे वामांगे मेचकाभिधा ॥ ९ ॥ कर्कटी
दक्षपार्श्वेषु पिंगला पृष्ठतो मता ॥ एता पित्तोद्भ-
वा लूता आभिर्दष्टस्य लक्षणम् ॥ ज्वरश्चित्तभ्रमो
दाघस्तप्तगात्राणि बाह्यतः ॥ १० ॥

अर्थ—दहिने हाथके मध्यमें कसनानामकी लूता जाननी, बायें हाथकी लूताको रक्तवती कहतेहैं, दहिने अङ्गमें वीरक्षेत्रगवा और वाम अङ्गमें मेचका नामकी लूता होती है दक्षिण पार्श्वकी लूताको कर्कठी और पीठकी लूताको पिंगला कहते हैं ये सब लूता पित्तसे उत्पन्न हुई जाननी। इस लूतारोगमें ज्वर, पित्तभ्रम, दाह तथा बाहरसे शरीरमें उष्णता होतीहै ॥ ९ ॥ १० ॥

पित्तजलताकी चिकित्सा.

उत्पलं चन्दनं मुस्ता लांगली त्रुटिरेणु च ॥ ११ ॥

बालकं मधु नागस्य वल्कलं कुसुमान्वितम् ॥
एतत्तरणलेपाभ्यां पित्तलूता प्रशाम्यति ॥ १२ ॥

अर्थ—चन्दन, कमल, नागरमोथा, कलिहारीकी जड, इलायची, रेणुका, सुगन्धवाला, मुलैठी, नागकेशर और नागकेशरके वृक्षकी छाल इन सबको पीसकर घीसनेसे अथवा लेप करनेसे पित्तजनित लूता नष्ट होती है ॥ ११ ॥ १२ ॥

कफजलूताके लक्षण.

दक्षकर्णस्थिता रक्ता वामस्था पांशुवर्णिका ॥
असिता वामकक्षायां दक्षिणायां सिता स्थिता ॥१३॥

अर्थ—दक्षिण कानमें लाल लूता होतीहै, बायें कानमें धूलके रंगकी लूता होतीहै, बायें काखमें काली और दक्षिण काखमें सफेद लूता होतीहै ॥ १३ ॥

दक्षकुक्षिस्थिता श्यामा वामा लूता श्रितोदरे ॥
वरदानाभिदेशस्था जिह्वायां जलदाम्बुके ॥१४॥

अर्थ—दक्षिण कोखमें श्यामा और उदरमें वामा होतीहैं, नाभिमें वरदा और जिह्वामें जलदा अथवा अम्बुका नामकी लूता होतीहै॥ १४ ॥

कासः श्वासस्तथा कंपो गलगंडोपजिह्वके ॥
निद्रालस्यं प्रमेहश्च श्लेष्मलूताविचेष्टितम् ॥१५॥

अर्थ—खांसी, स्वास, कंप, गलगंड, उपजिह्विका, निद्रा, आलस्य और प्रमेह ये सब कफजलूताके लक्षण हैं॥ १५ ॥

कफजलूताकी चिकित्सा.

वरुणः सारिवा सेलुः नागपुष्पं सुवल्कलम् ॥
चित्रकं पाटला पाठा विभीतो वंशवल्कलम् ॥१६॥
श्लेष्मलूतादिदष्टस्य हितान्येतानि रोगिणः ॥
भोजनानि कषायाणि तिक्तानि कटुकानि च ॥
वर्जयेच्छीतवीर्याणि तीक्ष्णवीर्याणि दापयेत्॥१७॥

अर्थ—वरुणा, सारिवा, बेल, नागकेशर, दालचीनी, चीता, पाढल, पाढ, बहेडा और बांसकी छाल ये औषधियें कफजलूताके रोगीको हितकारी है कफकी लूतामें कषैले, कडवे, चरपरे और शीतवीर्य पदार्थोंको त्यागदेवे और तीक्ष्णवीर्य पदार्थोंका भोजन करे ॥ १६ ॥ १७ ॥

सर्वप्रकारकी लूताकी चिकित्सा.

पारावतमलो वंशवल्कलं तालकः शिला ॥ १८ ॥
हिंगुः कुक्कुटविष्ठा च कर्णिकारेणुसंयुता ॥
मदनेनान्वितैर्लेपः सर्वलूताविषापहः ॥ १९ ॥

अर्थ—कबूतरकी विष्ठा, बांसकी छाल, हरताल, मैनशिल, हींग, मुरगेकी विष्ठा, कर्णिका, रेणुका और मैनफल इन सबका लेप करनेसे सब प्रकारकी लूताका विष नष्ट होता है ॥ १८ ॥ १९ ॥

चन्दनं पद्मकं कुष्ठं टिंडूरी वेत्रपाटला ॥
निर्गुण्डी सारिवा सेलुर्लूता विषहरोगणः ॥ २० ॥

अर्थ—चन्दन, पद्माख, कूठ, बेंत, पाढल, निर्गुण्डी, शारिवा और बेल इन सब औषधियोंका समुदाय लूताके विषको दूर करता है ॥ २० ॥

कपित्थं पाटला सेलुः शिरीषो द्विपुनर्नवा ॥
द्विनिशा च वचा चैव सर्वलूतानिवारणः ॥ २१ ॥

अर्थ—कैथ, पाढल, बेल, सिरस दोनों पुनर्नवे,हल्दी, दारुहल्दी और वच ये सब औषधियें सब प्रकारकी लूताओंको हरनेवाली हैं तथा बहुत रक्तकी बहने-वाली लूता तथा विस्फोटकको नाश करनेवाली है ॥ २१ ॥

महाशोणितलूतानां विस्फोटानां च नाशकृत् ॥
चक्रांका वारिणा पीता निहन्ति च विषद्वयम् ॥ २२ ॥

अर्थ—गिलोयको जलमें पीसकर पान करनेसे स्थावर तथा जंगम दोनों प्रकारके विष दूर होतेहैं ॥ २२ ॥

अखाध्यलूताके लक्षण.

भ्रुवोर्मध्ये गले हस्ते स्तने गंडे च मूर्द्धनि ॥
हृदि पृष्ठे च लूतानां मर्मस्थानानि लक्षयेत् ॥ २३ ॥

अर्थ–दोनों भौंके बीचमें, गलेमें, हाथमें, स्तनोंमें, गालके ऊपर, मस्तकके ऊपर, छाती और पीठमें लूताओंके मर्मस्थान हैं ॥ २३ ॥

एषु स्थानेषु ये दष्टा न ते जीवन्ति मानवाः ॥
सन्निपातोद्भवा लूताः कथ्यन्ते नामपूर्वकम् ॥ २४ ॥

अर्थ–जिस मनुष्यके पूर्वोक्त स्थानोंमें लूता काटतीहैं वह मनुष्य नहीं जीताहै । अब सन्निपातसे उत्पन्न हुई लूताओंके नाम कहते हैं ॥ २४ ॥

मालांगुली शिरोदेशे ललाटे तालुकर्णिका ॥
कालकर्णी भ्रुवोर्मध्ये जिह्वायां जलदा स्थिता ॥२५॥

अर्थ–मस्तकमें मालांगुली, कपालमें तालुकर्णिका, दोनों भौंके बीचमें कर्णिका, जिह्वामें जलदा ॥ २५ ॥

मणिपत्नी च तालुस्था हिक्कायां तप्तवर्णिका ॥
वैदेही च गले ज्ञेया हृदये वह्निकर्णिका ॥ २६ ॥

अर्थ–तालुमें मणिपत्नी, हिक्कामें तप्तवर्णिका, गलेमें वैदेही और हृदयमें वह्नि-कर्णिका नामकी लूता जाननी ॥ २६ ॥

एताः साधयितुं शक्या न मंत्रैर्नापि भेषजैः ॥
भ्रमं दाघं ज्वरं श्वासं मूर्च्छां गुल्मं च कंपनम् ॥२७॥
क्षयरोगं च शूलं च देहे कुर्वन्ति देहिनः ॥
पक्वजंबूफलाकारा दंशाः स्रवंति शोणितम् ॥२८॥
दंतोष्ठाः श्यामला यस्य नासौ जीवति मानवः ॥
पांडुरत्वं च पीतत्वं वक्रे दाघो महाज्वरः ॥ २९ ॥

करांघ्री शिथिलौ यस्य ग्रीवाभंगो विचेष्टनम् ॥
एतच्च शंभुदेवोक्तमाकलय्य मयोदितम् ॥ ३० ॥

अर्थ–पूर्वोक्त स्थानोंकी लूताका दंश मंत्र और औषधसे भी आरोग्य नहीं होताहै सन्निपातकी लूतासे काटेहुए मनुष्यके शरीरमें भ्रम, दाह, ज्वर, श्वास. मूर्च्छा, गुल्म, कंप ॥ २७ ॥ क्षयरोग और शूलरोग उत्पन्न होताहै । जो लूता-का विष पककर जामुनके फलकी समान होगया होय, उसमेंसे रक्त निकलने लगा होय तथा रोगीके दाँत और होठ काले पडगये होयँ वह मनुष्य नहीं जीताहै । तथा जिसका शरीर सफेद तथा पीला पडजाय, मुखमें दाह होय, घोर ज्वर होय ॥ २८ ॥ २९ ॥ हाथ पैर शिथिल होजायँ, गर्दन टेढी होगई होय और चेष्टारहित होजाय वह रोगी भी नहीं जीताहै । इस महादेवजीके लूताविषयक सब कथनको प्राप्तकर मैंने वर्णन किया ॥ ३० ॥

भगन्दररोगके लक्षण.

वृषणासनयोर्मध्ये प्रदेशो भग उच्यते ॥
तमेव दारयत्यस्माद्भगंदर इति स्मृतः ॥ ३१ ॥

अर्थ–वृषण (अण्डकोष) और गुदाके बीचके स्थानको भग कहतेहैं उस स्थानका इसमें विदारण होताहै इसकारण इस रोगको भगन्दर कहते है ॥ ३१ ॥

भगन्दरकी चिकित्सा.

मालती वटपत्राणि गुडूची विश्वभेषजम् ॥
सैन्धवं तक्रपिष्टानि लेपो हन्ति भगन्दरम् ॥ ३२ ॥

अर्थ–मालतीके पत्ते, वडके पत्ते, गिलोय, सोंठ और सेंधानमक इन सबको मट्ठेमें पीसकर लेप करनेसे भगंदररोग दूर होताहै ॥ ३२ ॥

दंतवह्निनिशालेपो भगन्दरविनाशकृत् ॥
त्रिफला वारिणा पिष्टा गुग्गुलुर्वा प्रयत्नतः ॥ ३३ ॥

अर्थ–हाथीके दांतका चूरा, चीता और हल्दी इनका लेप करनेसे भगन्दर रोग दूर होताहै । अथवा त्रिफला गूगलको विधिपूर्वक जलमें पीसकर लेप करनेसे भगन्दररोग दूर होताहै ॥ ३३ ॥

शुनोस्थिसूत्रताचूर्णं तक्रं रासभशोणितम् ॥
एतल्लेपाच्छमं याति कुपितोपि भगन्दरः ॥ ३४ ॥

अर्थ-कुत्तेकी हड्डी और केचुआके चूर्ण, मठा और गधेका रुधिर इन सबको एकत्र मिलाकर लेप करनेसे भगन्दररोग दूर होताहै ॥ ३४ ॥

त्रिफला वारिणा घृष्टा मार्जारास्थिविलेपतः ॥
जलौकापहृते रक्ते याति भिन्नो भगन्दरः ॥ ३५ ॥

अर्थ-भगन्दरके ऊपर जोंक लगाकर रुधिर निकाले पश्चात् जब भगन्दर फट जाय तब उसके ऊपर त्रिफला और बिलावकी हड्डीको जलमें पीसकर लेप करनेसे भगन्दररोग दूर होताहै ॥ ३५ ॥

पृष्ठयानांगनायुद्धं व्यायामो गुरुसेवनम् ॥
रूढे व्रणे प्रयत्नेन त्यजेत्संवत्सरं नरः ॥ ३६ ॥

अर्थ-जिस मनुष्यके भगन्दर उत्पन्न होकर आरोग्य होगया होय उसको एक वर्ष पर्य्यन्त घोडे इत्यादिकी सवारी, मैथुन, कसरत और भारी पदार्थोंका सेवन न करना चाहिये ॥ ३६ ॥

ज्वालागर्दभरोग.

ज्वालागर्दभरोगके सामान्य लक्षण.

गौरपिंगलकृष्णास्यसौम्यदृक्कलहप्रियाः ॥
पृष्ठे शीर्षे हृदि घ्राणे जंघायां च स्थिताः क्रमात् ॥ ३७ ॥

अर्थ-ज्वालागर्दभरोगमें रोगीके जहांजहां पीडा होय वहांवहां अत्यन्त पीले रंगके मंडल होजायँ तथा उनमें दाह होय उसको गर्दभ कहतेहैं जो गर्दभ पीठपर होय उसको गौर कहतेहैं, शिरमें होय तो पिंगल, छातीमें होय तो कृष्णास्य, नासिकामें होय तो सौम्यदृक और जंघाओंमें होय तो उसको कलहप्रिय कहतेहैं ॥ ३७ ॥

विजयः कुंभकर्णश्च कपिलः प्रियदर्शनः ॥

हस्तयोरासने कुक्षौ पार्श्वयोर्गर्दभाः श्रिताः ॥३८॥

अर्थ–दोनों हाथोंमें होय तो विजय, गुदामें कुम्भकर्ण, कोखमें कपिल और दोनों पार्श्वोंमें प्रियदर्शन ये नाम गर्दभके क्रमगत जानने ॥ ३८ ॥

ज्वालगर्दभरोगस्य सर्वसामान्यलक्षणम् ॥
सुपीतं मंडलं दाघस्तत्र तत्रार्दिते भवेत् ॥ ३९ ॥

अर्थ–मण्डलमें पीलापन और जलन ये ज्वालागर्दभरोगके सामान्य लक्षण हैं ॥ ३९ ॥

ज्वालागर्दभकी चिकित्सा.

गर्दभांडो वचा कुष्ठं गर्दभस्य च शोणितम् ॥
एषां लेपः प्रयोक्तव्यो देशे तद्विषशान्तये ॥ ४० ॥

अर्थ–जिस स्थानमें गर्दभके मंडल होयँ उस स्थानमें विषकी शांतिके लिये पारस पीपलकी छाल, वच, कूठ और गधेका रुधिर इन सबको एकत्र मिलाकर लेप करे ॥ ४० ॥

नीली पटोलमूलानि जलपिष्टानि लेपतः ॥
हरन्ति घृतयुक्तानि ज्वालागर्दभवेदनाम् ॥ ४१ ॥

अर्थ–नील और पटोलकी जडको जलमें पीसकर घीमें मिलाकर लेप करनेसे ज्वालागर्दभकी पीडा दूर होती है ॥ ४१ ॥

विस्फोटककी चिकित्सा.

रक्तचन्दनकर्पासमूलिकात्रिफलामृताः ॥
खदिरो वारिपिष्टानि विस्फोटान्हन्ति लेपतः ॥४२॥

अर्थ–लालचन्दन, कपासकी जड, त्रिफला, गिलोय और खैर इन सबको जलमें पीसकर लेप करनेसे विस्फोटक दूर होताहै ॥ ४२ ॥

मूलबीजान्विता पिष्टा कांजिकेन प्रलेपतः ॥
हलिनी देवदाली च दुग्धिका स्फोटनाशिनी ॥४३॥

अर्थ—मूलीके बीज, कलिहारीकी जड, बन्दाल और दुद्धी इन सबको कांजीमें पीसकर लेप करनेसे विस्फोटक दूर होता है ॥ ४३ ॥

करंजतरुबीजानि यवानीतिलसर्पिषा ॥
एरंडफलयुक्तानि दंतिनी स्फोटनाशिनी ॥ ४४ ॥

अर्थ—करंजके बीज, अजवायन, तिल, घी, अण्डी और दन्ती इन सबको बारीक पीसकर मरहम बनाकर लगानेसे फोडा नष्ट होताहै ॥ ४४ ॥

कटुतैलान्वितैर्लेपात्सर्पकंचुकभस्मना ॥
रयः शाम्यति गंडस्य प्रकोपात्स्फुटति ध्रुवम्॥४५॥

अर्थ—सांपकी कैंचलीकी भस्म बनाकर सरसोंके तेलमें मिलाकर लेप करनेसे कच्चा फोडा तो बैठजाताहै और पक्का फोडा फूटजाता है ॥ ४५ ॥

गोबररोगकी चिकित्सा

कुष्ठोशीरसमं वारि पिष्टं तेनांगलेपतः ॥
निपीते खदिरक्काथे सदाघो याति गोवरः ॥ ४६ ॥

अर्थ—कूठ और खस दोनोंको समान भाग लेकर जलमें पीसकर शरीरमें लेप करनेसे तथा खैरका क्काथ बनाकर पीनेसे दाहसहित गोबररोग दूर होताहै ४६॥

शीतलाकी चिकित्सा.

उपसर्गे प्रवृत्ते वा निशा बिंबीफलान्विता ॥
निराकरोति संयुक्ता पिष्टा पीता च वारिणा॥४७॥

अर्थ—हल्दी और कन्दूरी इनको एकत्र जलमें पीसकर जलके साथ सेवन करनेसे शीतलारोग दूर होता है ॥ ४७ ॥

शीतलादोषसंतापे जाते मधुविमिश्रितम् ॥
निवृत्तिं कुरुते क्षिप्रं पीतं पर्युषितं जलम् ॥ ४८ ॥

अर्थ—शीतलारोगमें यदि शरीरमें दाह होय तो बासी जलमें सहत मिलाकर पीनेसे तत्काल शांत होजाताहै ॥ ४८ ॥

आदाय सेलुपत्राणि शीतलासंख्यकानि वै ॥
छिन्नेरातुरनाम्ना च यान्ति शीतलिका शमम्॥४९॥

अर्थ-जितनी शीतला हों उतने बेलके पत्तोंको लेकर वारंवार रोगीका नाम लेलेकर तोडे तो शीतलारोग दूर होताहै ॥ ४९ ॥

शोथरोगका निदान ।

वातजशोथके लक्षण.

ससंकोचं सरोमांचं कृष्णं खरमथारुणम् ॥
शरीरं वातशोफस्य लक्षणं परिकीर्तितम् ॥ ५० ॥

अर्थ-वातकी सूजनमें शरीर सकुचजाय, रोमांच हो आवे, सूजनका रंग काला और लाल होय और स्पर्शसे खरखरा हो ये सब वातशोफके लक्षण कहे है ॥ ५० ॥

दाघस्तृष्णा ज्वरो मन्दो भ्रमः स्वेदश्च ताम्रता ॥
रोमांचो वपुषि ज्ञेयं पित्तशोफस्य लक्षणम् ॥५१॥

अर्थ-जिसके शरीरमें दाह होय, तृषा लगे, ज्वर आवे, भ्रम होय, पसीना आवे, सूजनका रंग लाल होय और रोमांच होआवे तो इसके पित्तजनित शोथके लक्षण जानने ॥ ५१ ॥

काठिन्यं पांडुता कंडू रोमांचो वह्निमन्दता ॥
निद्राछर्दिर्गुरुत्वं च श्लेष्मशोफस्य लक्षणम्॥५२॥

अर्थ-जो सूजन कठिन और सफेद हो खुजली होय, रोमांच होआवे, अग्नि मंद होजाय, निद्रा अधिक आवे, वमन होय और सूजन भारी होय तो कफ-जनित शोथके लक्षण जानने ॥ ५२ ॥

त्रिदोषे तानि सर्वाणि शोफः सर्वांगको भवेत् ॥
एकद्विदोषजः साध्यो न साध्यः सन्निपातजः॥५३॥

अर्थ-त्रिदोषजनित शोथमें पूर्वोक्त तीनों दोषोंके लक्षण मिलतेहैं और सूजन

सब शरीरमें होताहै एक दोष और दो दोषोंसे उत्पन्न हुए शोथ साध्य हैं परन्तु सन्निपातसे उत्पन्न हुए शोथ असाध्य हैं ॥ ९३ ॥

मुखतो जायते शोफः स्त्रीणां पुंसां च पादतः ॥
असाध्यौ द्वाविमौ ज्ञेयौ तयोः पुण्यं निवर्तकम् ॥ ९४ ॥

अर्थ–जो पुरुषके प्रथम मुखपर सूजन होकर पैरकी और नीचे उतरे और स्त्रीके प्रथम पैरपर सूजन होकर फिर ऊपरको चढे तो ये दोनों सूजन असाध्य जानने इस प्रकारके शोथसे पीडित रोगी पुण्यके योगसे ही बचसकताहै ॥ ९४ ॥

शोथरोगकी चिकित्सा.

त्रिफलापटुकृष्णानां त्रिपचैकांशकल्किता ॥
गुटिकाः शोफगुल्मार्शोभगंदरवधे मताः ॥ ९५ ॥

अर्थ–त्रिफला, सेंधानमक, और पीपल इनको क्रमानुसार तीन पांच और एक भाग लेकर बारीक पीसकर गोली बनावे यह गोली, सूजन, गुल्म अर्श और भगन्दरको नाश करनेवाली हैं ॥ ९५ ॥

त्रिफलाक्काथपानं तु महिषीसर्पिषा सह ॥
हन्ति शोफं प्रमेहं च नाडीव्रणभगंदरान् ॥ ९६ ॥

अर्थ–भैंसके घीके साथ त्रिफलेका क्काथ बनाकर पीनेसे सूजन, प्रमेह, नाडी, व्रण और भगन्दर रोग नष्ट होताहै ॥ ९६ ॥

शुण्ठीहरीतकीदेवदारुचूर्णं समांशतः ॥
पीतमुष्णांभसा शोफं निवर्त्तयति वेगतः ॥ ९७ ॥

अर्थ–सोंठ, हरड और देवदारु इनको समान भाग लेकर चूर्ण बनाकर गरम जलके साथ सेवन करनेसे शोथरोग शीघ्र नष्ट होता है ॥ ९७ ॥

विडंगातिविषाविश्वाकणेन्द्रयवदारु च ॥
एतच्चूर्णं समं तप्ततोयं पीतं च शोफहृत् ॥ ९८ ॥

अर्थ–वायविडंग, अतीस, सोंठ, पीपल, इन्द्रजौ और देवदारु इन सब

औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण करके गरमजलके साथ सेवन करनेसे शोथ रोग दूर होताहै ॥ ५८ ॥

त्रिकटु लोहचूर्णं च द्वयमेतत्समांशकम् ॥
पीतमुष्णांभसा हन्ति शोफरोगमसंवरम् ॥ ५९ ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल तीनों एक भाग तथा लोहचूर्ण एक भाग इन सबका चूर्ण करके गरमजलके साथ सेवन करनेसे शोथरोग नष्ट होताहै ॥५९॥

न्यग्रोधोदुंबराश्वत्थप्लक्षवेतसवल्कलैः ॥
सर्पिःपक्वं प्रलेपः स्याच्छोफनिर्वापणः परः ॥६०॥

अर्थ–बड, गूलर, पाखर, पीपल और बेंत इन वृक्षोंकी छालका कल्क बनाकर घीमें पकावे इस घीका लेप करनेसे शोथ रोग दूर होताहै ॥ ६० ॥

एरंडोतिविषादार्वीमरिचेंद्रयवाः समम् ॥
सदारुचूर्णमुष्णांभोनिपीतं शोफहन्मतम् ॥ ६१ ॥

अर्थ–अण्डकी जड, अतीस, दारुहलदी, मिरच, इन्द्रजौ और देवदारु इन औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण करके गरमजलके साथ पीनेसे शोथ रोग दूर होताहै ॥ ६१ ॥

गुडविश्वाबलाव्याघ्रीश्वदंष्ट्राभिः शृतं पयः ॥
श्वयथुज्वरविण्मूत्रविबंधादीन्छमं नयेत् ॥ ६२ ॥

अर्थ–गुड, सोंठ, खिरैंटी, कटेरी और गोखरु इन औषधियोंको दूधमें औटाकर पीनेसे सूजन, ज्वर और मल तथा मूत्रका विबन्ध दूर होताहै ॥ ६२ ॥

यवस्वर्जिकयोः क्षारो विश्वा च मरिचं कणा ॥
त्रिफलाक्काथसंपीतमेतच्चूर्णं हि शोफहृत ॥ ६३ ॥

अर्थ–जवाखार, सज्जीखार, सोंठ, मिरच और पीपल इन औषधियोंका चूर्ण बनाकर त्रिफलेके काथके साथ पीनेसे शोथरोग दूर होताहै ॥ ६३ ॥

दारुसंकुपुरं विश्वा वृषा कृष्णा कुरंटकः ॥
रिङ्गिणीचूर्णमेतेषां दुग्धपीतं च शोफहृत् ॥ ६४ ॥

अर्थ–देवदारु, मंकु (मिरचि) गूगल, सोंठ, अडूसा, पीपल, कटसरैया और कटेरी इन औषधियोंका चूर्ण करके गरम दूधके साथ सेवन करनेसे शोथ रोग दूर होताहै ॥ ६४ ॥

गुडूचीन्द्रयवाः सर्पिः पटोली च वचा समम् ॥
क्वाथः सर्वांगजं शोफं पांडुरोगं निहन्ति वै ॥ ६५ ॥

अर्थ–गिलोय, इन्द्रजौ, घी, पटोलपत्र और वच इन सबको समान भाग लेकर क्काथ बनाकर पीनेसे समस्त अङ्गका सूजन तथा पांडुरोग दूर होताहै ६५॥

कुटजार्ककरञ्जानां चन्द्रलैरण्डनिम्बजैः ॥
पत्रैर्युक्तं जलं तप्तं तत्स्वेदोऽनेकशोफहृत् ॥ ६६ ॥

अर्थ–इन्द्रजौ, आक, करंज, चांदवेल, अण्ड, और नीम इन सबके पत्ते जलमें पीसकर अग्निके द्वारा स्वेद देनेसे सब प्रकारका सूजन दूर होताहै ॥ ६६ ॥

क्षीरं शोफहरं दारुवर्षाभूनागरैः शृतम् ॥
पयो वा चित्रकव्योषवृषादारुप्रसाधितम् ॥ ६७ ॥

अर्थ–देवदारु, पुनर्नवा और सोंठमें शुद्ध कियाहुआ दूध अथवा चीता सोंठ, मिरच, पीपल, अडूसा और देवदारु इनके द्वारा पकाया हुआ दूध सूजन को दूर करता है ॥ ६७ ॥

अजमोदा कणा विश्वा मरिचं दारु चित्रकम् ॥
विडंगं पिप्पलीमूलं सितपुष्पी च सैंधवम् ॥ ६८ ॥
एकैकांशमितं सर्वं पञ्चभागा हरीतकी ॥
वृद्धिर्दशांशका जीर्णो गुडः स्याज्जिनभागतः ॥ ६९ ॥
मोदकः क्रियतेऽमीभिर्भुक्त्वांते यो जलं पिबेत् ॥
उष्णं तस्य विनश्यन्ति सशोफा भ्रममारुताः ॥ ७० ॥

अर्थ–अजमोद, पीपल, सोंठ, काली मिरच, देवदारु, चीता, वायविडंग, पीपलामूल, सफेद कोपल और सेंधा नमक इन सबको एकएक भाग लेवे और

हरड पांच भाग लेवे, वृद्धिनामक वनस्पति दश भाग लेवे और पुराना गुड चौबीस भाग लेवे इन सबको एकत्र मिलाकर मोदक बनावे इन मोदकोंको सेवन करनेसे और गरम जल पीनेसे सूजन, भ्रम और वायुरोग नष्ट होताहै ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥

भिलावेके सूजनकी चिकित्सा.

शिरीषो मेघनादश्च नवनीतसमन्वितः ॥
भल्लातसंभवः शोफं हन्ति लेपेन देहिनाम्॥७१॥

अर्थ—सिरसके पत्ते और चौलाई इन दोनोंको मक्खनमें पीसकर लेप करनेसे भिलावेसे उत्पन्नहुई सूजन दूर होतीहै ॥ ७१ ॥

माहिषं म्रक्षणं दुग्धं सुपिष्टं तिलसंयुतम् ॥
शोफं हन्ति प्रलेपेन भल्लातकभवं क्षणात्॥७२॥

इति श्रीश्रीकण्ठसूरिविरचिते हितोपदेशे-
ऽष्टमः समुद्देशः ॥ ८ ॥

अर्थ—भैंसका मक्खन, दूध और तिल इन सबको विधिपूर्वक पीसकर लेप करनेसे भिलावेंकी सूजन तत्काल उतरजातीहै ॥ ७२ ॥

इति श्रीपरमजैनाचार्य्यश्रीकण्ठसूरिविरचिते हितोपदेशे वैद्यकसारसंग्रहे भिषग्वरहरिशङ्करात्मजशङ्करलालकृतभाषाटीकायां लूताभगन्दर-ज्वालागर्दभस्फोटगोवरशीतलाशोफरोगचिकित्सा-वर्णनं नामाष्टमः समुद्देशः ॥ ८ ॥

अथ कुष्ठरोगवातरोगाधिकारः ।

सूर्यदेवस्तुतिः ।

एनांसि रोगा वपुषस्तमांसि यद्दर्शनाद्दूरत एव यान्ति ॥
वन्दे तमेकं जगतामधीशं तेजोमयं सूरमदूरविश्वम्॥१॥

अर्थ-जिनके दर्शन करनेसे शरीरके समस्त रोग पाप और अन्धकार दूरसे ही भागजातेहैं तथा विश्वमें जिनसे कोई दूर नहीं रहसकता ऐसे जगत्में एक अधीश्वर तेजोमय सूर्य्यनारायणको प्रणाम करताहूँ । कुष्ठरोगके आरम्भमें इस प्रकारके मंगलाचरणके करनेका यह प्रयोजन है कि, इसमें सूर्य्यकी आराधना करनी मुख्य उपाय है ॥ १ ॥

छः प्रकारके मुख्यकोढके नाम तथा लक्षण।

उदुम्बरस्तथा श्वित्रं विपादि गजचर्म च ॥
मंडलं चेति कुष्ठानि षष्ठं चर्मदलं भवेत् ॥ २ ॥

अर्थ-उदुम्बर, श्वित्र, विपादी, गजचर्म, मंडल और चर्मदल इसप्रकार छः कुष्ठ मुख्य जानने ॥ २ ॥

तत्कुष्ठं कर्कशं कुष्ठं गजचर्मेति कीर्तितम् ॥
वसारक्तं स्रवत्यंगादन्यथा वदनं भवेत् ॥ ३ ॥
उदुंबरफलाकारा ग्रंथयः स्युरुदुंबरे ॥ पांडुरं
श्वित्रमित्युक्तं विपादी शीर्णपादतः ॥ ४ ॥

अर्थ-जिस मनुष्यके शरीरमें उत्पन्न हुआ कोढ स्पर्शमें खरखरा होय उस कोढको गजचर्म कहतेहैं, उदुम्बर कुष्ठमें गूलरके फलकी समान चकत्ते होतेहैं तथा उसमें चर्बी और रुधिर बहताहै रोगीके मुखका वर्ण भी बदल जाताहै। सफेद कुष्ठको श्वित्र कहतेहैं, जिस कुष्ठमें पाँव फटजातेहैं उसको विपादी कहतेहैं ॥ ३ ॥ ४ ॥

ईषद्रक्तैः स्थिरैः स्निग्धैस्तिलकैर्मंडलं मतम् ॥
कर्णयोः करयोः सादाद्भवेच्चर्मदलाभिधम् ॥ ५ ॥

अर्थ-जिस कुष्ठमें काले तिलकी समान चिकने, कठिन और किंचित् रुधिर निकलता होय उसको मंडल कुष्ठ कहतेहैं और जिसमें दोनो कान दोनों हाथ क्षीण होजायँ उसको चर्मदल कहतेहैं ॥ ५ ॥

कुष्ठकी उत्पत्तिका कारण तथा नाम.

वातपित्तादिदोषेण तथा पापवशेन च ॥
भवन्ति तान्यनेकानि दुःखभोगाय देहिनाम् ॥६॥

अर्थ—वात, पित्त इत्यादि दोषोंसे तथा पापसे मनुष्यके दुःखरूपी फल भोगनेके लिये उपर्युक्त तथा अन्यान्य विविधप्रकारके कुष्ठ उत्पन्न होतेहैं ॥ ६ ॥

कपालं काकणं श्वित्रं मण्डलं किटिभालसम् ॥
दद्रु चर्मदलं पामा पुण्डरीकं शतव्रणम् ॥ ७ ॥

अर्थ—१ कपाल, २ काकण, ३ श्वित्र, ४ मंडल, ५ किटिभ, ६ अलस, ७ दद्रु, ८ चर्मदल, ९ पामा, १० पुंडरीक, ११ शतव्रण ॥ ७ ॥

विस्फोटोदुम्बरं सिध्मा चर्मकुष्ठं विपादिका ॥
ऋष्यजिह्वो विचर्चिश्च कुष्ठान्यष्टादशांगिनाम् ॥८॥

अर्थ—१२ विस्फोट, १३ उदुंबर १४ सिध्म, १५ चर्मकुष्ठ १६ विपादिका, १७ ऋष्यजिह्व और १८ विचर्चिका ॥ ८ ॥

कुष्ठरोगकी चिकित्सा.

कुष्ठाल्पे प्रस्रुतं कुर्याच्छृंगादस्रं जलौकया ॥
वमनं च बलं ज्ञात्वा विधेयं सुविरेचनम् ॥ ९ ॥
नृपाढ्यबालवृद्धानां भीरूणामपि योषिताम् ॥
सुखाय स्यादुपायोयं रक्ताकृष्टिर्जलौकया ॥१०॥

अर्थ—कुष्ठके उत्पन्न होतेही शिंगीयोंके द्वारा या जोंकके द्वारा रुधिर निकलवावे और रोगीका बलाबल विचारकर उसको वमन तथा विरेचन देवे राजा श्रीमान्, बालक, वृद्ध, भयभीत और स्त्री इन मनुष्योंके जोंकसे रुधिर निकलवाना अत्यन्त उत्तम और सुखकारक है ॥ ९ ॥ १० ॥

पथ्याकरंजबीजानां निशासैंधवकल्कितैः ॥
विडंगसहितैः पिष्टैर्लेपो मूत्रेण कुष्ठहृत् ॥ ११ ॥

अर्थ-हरड, करंजके बीज, हल्दी, सेंधा नमक, और वायविडंग इन सबको एकत्र करके गायके मूत्रमें पीसकर लेप करनेसे कुष्ठरोग नष्ट होताहै ॥ ११ ॥

कुष्ठसैन्धवसिद्धार्थकृमिघ्नैर्गुडकैः समैः ॥
दद्रुमण्डलकुष्ठघ्नं लेपनं कांजिकान्वितम् ॥ १२ ॥

अर्थ-कूठ, सेंधानमक, सरसो, वायविडंग और गुंडकतृण सबको समान भाग लेकर चूर्ण करके कांजीमें पीसकर लेप करनेसे दाद और मंडल नामक कुष्ठ दूर होताहै ॥ १२ ॥

स्नुह्यश्वमारार्कत्वग्भिर्लवणोशीरवह्निभिः ॥
समूत्रं तैलमभ्यंगात्पक्वं कुष्ठविनाशनम् ॥ १३ ॥

अर्थ-थूहर और कनेर इन औषधियोंकी छालमें सेंधा नमक तथा चीता मिलाकर कल्क बनावे और इस कल्कके द्वारा तेलको गायके मूत्रमें डालकर पकावे इस तेलको मर्दन करनेसे कुष्ठरोग दूर होताहै ॥ १३ ॥

विडंगानि सिता तैलं पथ्या योगजपिप्पली ॥
प्रलिह्य सर्वकुष्ठानि जयन्त्यतिगुरूण्यपि ॥ १४ ॥

अर्थ-वायविडंग, मिश्री, तेल, हरड, लोहचूर्ण और गजपीपल इन सबकी चटनी बनाकर चाटनेसे बहुत दिनोंका कुष्ठरोग दूर होताहै ॥ १४ ॥

विडंगत्रिफलाकृष्णाचूर्णं लीढं समांशकम् ॥
हन्ति कुष्ठं कृमीन्मेहान्नाडीपीडाभगन्दरान् ॥१५॥

अर्थ-वायविडंग, त्रिफला और पीपल इनको समान भाग लेकर चूर्ण बनाकर सेवन करनेसे कुष्ठ, कृमि, प्रमेह, नाडीव्रण और भगन्दर नष्ट होताहै ॥१५॥

कुष्ठरोगीके लिये पथ्य.

शालिकोद्रवगोधूमयवमुद्गादयो हिताः ॥
पुराणः कुष्ठिनामुक्ताः शाकजांगलवर्जिताः ॥१६॥

अर्थ-शालिधान, कोदो, गेंहू, जौ और मूंग इत्यादि पुराना अन्न कुष्ठ

रोगीके लिये हितकारक है सब प्रकारके शाक और जंगली पशुओंका मांस अहितकारक है इस कारण कुष्ठरोगीको योग्य है कि इनका त्याग करे ॥१६॥

वातादिदोषजनित कुष्ठके लक्षण.

सकण्डूवेदनं श्यामं कुष्ठं स्याद्वातदोषतः ॥
सदाघं लोहितं कुष्ठं पित्तदोषसमुद्भवम् ॥ १७ ॥

अर्थ—वायुके कोपसे जो कुष्ठ उत्पन्न होय उसमें खुजली, वेदना और कालापन होताहै पित्तके कोपसे जो कुष्ठ उत्पन्न होताहै वह लाल तथा दाहयुक्त होताहै ॥ १७ ॥

गौरं सुशीतलं स्निग्धं नीलं वा श्लेष्मसंभवम् ॥
त्रिदोषजं त्रिभिर्दोषैरसाध्यं तत्प्रकीर्तितम् ॥ १८ ॥

अर्थ—कफसे उत्पन्न हुआ कुष्ठ सफेद, ठण्डा, चिकना और नीले रंगका होताहै और तीनों दोषोंके कोपसे उत्पन्न हुए कुष्ठमें तीनों दोषोंके लक्षण मिलते-हैं और वह असाध्य होताहै ॥ १८ ॥

कुष्ठरोगहर चिंतामणि प्रयोग.

शिवापथ्यावृषानिंबवल्कलव्याधिघातकाः ॥
पटोलापाटलाराजीशाल्मलीचित्रकामृताः ॥१९॥

अर्थ—आमला, हरड अडूसा, नीमकी छाल, अमलतास, पटोल पात,पाढल, बावची, सेमलकी छाल, चीता, गिलोय ॥ १९ ॥

तुंबुरुः कटुकी दंती करंजोथ विभीतकः ॥
भार्ङ्गी वरुण इत्येषां क्वाथः पेयस्त्रिसप्तकम् ॥२०॥

अर्थ—तुम्बुरु, कुटकी, दन्तीकी जड, करंज, बहेडा, भारंगी और वरनाकी छाल इन सब औषधियोंका क्वाथ इकीस दिन तक पीवे ॥ २० ॥

प्रथमं प्रथमे यामे घर्मः सेव्योऽथ भोजनम् ॥
शालितक्रेण कर्त्तव्यं नाह्नि निद्रा विधीयते ॥२१॥

अर्थ–और प्रतिदिन प्रातःकाल पसीना निकलवावे पश्चात् मट्ठे और भात-का भोजन करे और दिनमें सोवे नही ॥ २१ ॥

एवं कृते विनश्यन्ति सर्वकुष्ठानि देहिनः ॥
चिंतामणिरिति ख्यातो योगोयं तत्त्ववेदिभिः॥२२॥

अर्थ–इस प्रकार करनेसे सब प्रकारके कुष्ठरोग नष्ट होतेहैं वैद्यक शास्त्रके जाननेवाले पुरुषोंने यह चिन्तामणि योग कहा है ॥ २२ ॥

कुष्ठरोगकी सामान्य चिकित्सा.

बाकुची त्रिफला वह्निभल्लातं च शतावरी ॥
सिंदुवारोश्वगंधा च निम्बः पंचांगसंभवः ॥ २३ ॥
मासैकं भक्षितं हंति चूर्णमेषां समांशकम् ॥
सर्वकुष्ठानि वाताश्च रोगिणो नात्र संशयः ॥ २४ ॥

अर्थ–बावची, त्रिफला, चीता, भिलावा शतावर निर्गुण्डी असगन्धकी जड और नीमके पांचोअंग (जड पत्ते फूल फल छाल) इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण बनाकर एक महीने पर्य्यन्त सेवन करनेसे सब प्रकारके कुष्ठ और वातविकार नष्ट होतेहैं ॥ २३ ॥ २४ ॥

मुस्ताग्नित्रिकटूशीरं विडंगं त्रिफला तथा ॥
त्रिसप्तमशितं चूर्णं मध्वाज्याभ्यां च कुष्ठजित्॥२५॥

अर्थ–नागरमोथा, चीता, सोंठ, मिरच, पीपल, खस, वायविडंग और त्रिफला इन सब औषधियोंका चूर्ण बनाकर सहत और घृतके साथ इक्कीस दिन तक सेवन करनेसे कुष्ठरोग दूर होताहै ॥ २५ ॥

विडंगं त्रिफला कृष्णा भल्लातं शङ्खपुष्पिका ॥
ब्राह्मी च बाकुची मंकुः चूर्णमेषां समांशकम्॥२६॥
मध्वाज्यभक्षितं हंति सर्वकुष्ठानि देहिनः ॥
आयुर्वृद्धिं बलं पूजां विदधाति न संशयः ॥ २७ ॥

अर्थ—वायविडंग, त्रिफला, पीपल, भिलावाँ, शंखाहूली, ब्रह्मी, बावची और मंकु इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण बनाकर सहत तथा घीके साथ सेवन करनेसे अनेक प्रकारके कुष्ठरोग दूर होतेहैं तथा यह औषध आयुको बढानेवाला, शरीरमें बलको उत्पन्न करनेवाला और अत्यन्त सुन्दरता लानेवाला है ॥ २६ ॥ २७ ॥

चक्रमर्दस्य पत्राणि लांगली चन्द्रराजिकाः॥अर्का-श्वमारमूलानि शिरीषस्तुलसी जटा ॥२८॥ मूला-पानसयोर्बीजं मूलमंकोलसंभवम् ॥ मंकुस्तीक्ष्णः समं चूर्णं तक्रपीतं प्रलेपतः ॥ २९ ॥ कांजिकेन द्रुतं हन्ति कुष्ठं दद्रुं च सिध्मकम् ॥ कुष्ठहृच्चैंगुदी-चूर्णं तैलगोमूत्रसंयुतम् ॥ ३० ॥

अर्थ—चकवडके पत्ते, कलिहारीकी जड, बावची, आककी जड, कनेरकी जड, सिरस, तुलसीकी जड ॥ २८ ॥ मूलीके बीज, ढाकके बीज, अकोलकी जड और मिरचिया इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण बनाकर मट्ठेके साथ पीनेसे तथा कांजीमें मिलाकर लेप करनेसे दद्रु तथा सिध्मनामक कोढ शीघ्र ही नष्ट होजाते हैं । हिंगोटके चूर्णको तेल और मूत्रमें मिलाकर लेप करनेसे कुष्ठरोग दूर होताहै ॥ २९ ॥ ३० ॥

चक्रमर्दो निशायुग्मं विडंगं दंति सैंधवम् ॥ त्रिवृता बालकं निम्बः पंचांगो बृहती शिफा ॥ ३१ ॥ त्रिफला कंगुणीमूलं करंजकुटजाविति ॥ सर्वकुष्ठहरं चूर्णं लेपादेषां गवांभसा ॥ ३२ ॥

अर्थ—चकवडके पत्ते, हल्दी, दारुहल्दी, वायविडंग, दन्तीकी जड, सेंध नमक, निसोत, सुगन्धवाला, नीमका पञ्चांग, जड, छाल, पत्ते, फल, फूल, कटेरीकी जड ॥ ३१ ॥ हरड, बहेडा, आमला, मालकांगनीकी जड, करंज और

इन्द्रजौ इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण बनाकर गायके मूत्रमें मिलाकर लेप करनेसे अनेक प्रकारके कुष्ठरोग नष्ट होजातेहैं ॥ ३२ ॥

राजीवनालबीजानि विडंगं दंतिसैन्धवम् ॥ शिरीषो बाकुची वह्निस्तुलसी च निशाद्वयम् ॥ ३३ ॥ गृहधूमो वृषामूलं त्रिफलाश्वारिमूलिका ॥ सर्वकुष्ठहरं लेपाच्चूर्णं पिष्टं तुषांभसा ॥ ३४ ॥

अर्थ–कमलकी नाल, कमलगट्टे, दन्तीकी जड, सेंधानमक, सिरसकी छाल, बावची, चीता, तुलसी, हल्दी, दारुहल्दी ॥ ३३ ॥ घरका धुआँ, अडूसेकी छाल, त्रिफला और कनेरकी जड इन सबका चूर्ण बनाकर कांजीमें पीसकर लेप करनेसे अनेक प्रकारके कुष्ठरोग दूर होते हैं ॥ ३४ ॥

गुञ्जामूलं निशा मंकुर्बाकुची चक्रमर्दकः ॥ कुटजोश्वारि एतेषां समांशं सूक्ष्मचूर्णकम् ॥३५॥ सप्ताहं तु स्थितं तच्च गोमूत्रे तस्य लेपतः ॥ सिध्मानि सर्वकुष्ठानि तिलकानि च यांति वै ॥ ३६ ॥

अर्थ–चौटलीकी जड, हल्दी, मंकु,बावची, चकवड, इन्द्रजौ, और करंजकी जड इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर बारीक चूर्ण करके सात दिन गायके मूत्रमें खरल करके लेप करनेसे सर्व प्रकारके कुष्ठ, सिध्म और तिलकालक ये सब रोग दूर होते है ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

यवक्षारः शिला शंखस्तालकासीसगन्धकम् ॥ सिंदूरं चूर्णमेतेषां समांशं तैलसंयुतम् ॥ ३७ ॥ तापितं सूर्य्यरोचिर्भिर्लेपादस्य विनश्यति ॥ कण्डू विचर्चिका कुष्ठं शिरःकुष्ठं च दारुणम् ॥ ३८ ॥

अर्थ–जवाखार मैनशिल, शंख, हरताल, हीराकसीस, गन्धक और सिंदूर

इन सब औषधियोंको समान भाग लेकर बारीक चूर्ण करके तेल मिलाकर पश्चात् धूपमें गरम करके लेप करनेसे खस, विचर्चिका, कोढ और शिरका दारुण कोढ शीघ्र ही नष्ट होता है ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

तालकं लांगली मंकुः क्षीरं स्नुह्यर्कसंभवम् ॥ कुष्ठं हयारिमूलं च चूर्णमेषां समांशकम् ॥ ३९ ॥ पक्वं गोमूत्रतैलाभ्यामभ्यंगादस्य नश्यति ॥ कण्डू विचर्चिका कुष्ठं शिरःकुष्ठं च दारुणम् ॥ ४० ॥

अर्थ–हरताल, कलिहारी, मंकू, थूहरका दूध आकका दूध, कूठ और करंजकी जड इन सब औषधोंको समान भाग लेकर चूर्ण बनाकर तेल तथा गायके मूत्रमें पकावे, जब जल जलकर तेल ही शेष रहजाय तब छानकर शरीरमें मलनेसे, कंडू, खस, विचर्चिका, कोढ और माथेका दारुण कुष्ठ भी दूर होजाता है ॥ ३९ ॥ ४० ॥

त्रिकटुः सैन्धवं दूर्वा तालं गोमूत्रसंयुतम् ॥
कुष्ठं विचर्चिकां कंडूं दद्रुं हन्ति प्रलेपतः ॥ ४१ ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, सेंधानमक, दूब और हरताल इन सबको गायके मूत्रमें मिलाकर लेप करनेसे कुष्ठ, विचर्चिका, खस और दद्रू दूर होजाते हैं ॥ ४१ ॥

चक्रमर्द विडंगं च द्वयं गोमूत्रसंयुतम् ॥
पिष्टं प्रलेपतो हन्ति कुष्ठं स्वल्पदिनोद्भवम् ॥ ४२ ॥

अर्थ–चकवडके बीज तथा वायविडंग इन दोनोंको गायके मूत्रमें पीसकर लेप करनेसे कुष्ठरोग नष्ट होता है ॥ ४२ ॥

लांगलीनिंबपत्राणि विडंगं व्याधिघातकः ॥
दन्त्यग्निः कांजिकापिष्टं चूर्णकं श्वेतकुष्ठहृत ॥४३॥

अर्थ–कलिहारी, नीमके पत्ते, वायविडंग अमलतास, दन्तीकी जड और चीता इन सबको कांजीमें पीसकर लेप करनेसे सफेद कुष्टरोग दूर होताहैं ॥ ४३॥

श्वेताद्रिकर्णिकामूलं पिष्टं पर्युषितांभसा ॥
प्रलेपान्नाशयत्येव श्वेतकुष्टं चिरोद्भवम् ॥ ४४ ॥

अर्थ–सफेद अपराजिताकी जडको बासी जलमें पीसकर लेप करनेसे बहुत पुराना कुष्टरोग दूर होता है ॥ ४४ ॥

गुंजावह्निर्वचाकुष्टं निंबपर्णं सकांजिकम् ॥
संपिष्टं चूर्णमेतेषां प्रलेपाच्छ्वेतकुष्टहृत् ॥ ४५ ॥

अर्थ–चौंटली, चीता, वच, अमलतास और नीमके पत्ते इन सबका चूर्ण करके कांजीमें पीसकर लेप करनेसे सफेद कुष्ठ नष्ट होता है ॥ ४५ ॥

चारुबीजान्ययश्चूर्णं त्रिफला च कटुत्रयम् ॥
तवराजोऽशितः सर्पिर्मधुना श्वेतकुष्टहृत् ॥ ४६ ॥

अर्थ–कमलगट्टे, लोहचूर्ण, हरड, बहेडा आमला, सोंठ, मिरच, पीपल और मिश्री इन सबका चूर्ण करके सहत तथा घीके साथ सेवन करनेसे सफेद कुष्टरोग नष्ट होताहै ॥ ४६ ॥

पंचांगीकरवीरस्य सिद्धं तैलं च कुष्ठहृत् ॥
शीर्यंति हस्तपादाश्च कृमिदोषेण कुष्ठिनः ॥ ४७ ॥

अर्थ–कनेरकी जड छाल, पत्ते, फूल और फल लेकर कल्क बनावे और इसके द्वारा तेलको सिद्ध करके मर्दन करनेसे कुष्टरोग नष्ट होता है कुष्टरोगमें कीडोंके पडजानेसे हाथ पैर भी गलजाते है ॥ ४७ ॥

राजकोशातकीबीजं तिक्तनिंबं महौषधम् ॥
एभिस्तैलेन पक्केनाभ्यंजयेत्कुष्ठरोगिणः ॥ ४८ ॥

अर्थ–बडी तोरई, नीम और सोंठ इनके कल्कके द्वारा तेलको पकावे इस तेलका मर्दन करनेसे कुष्टरोग नष्ट होता है ॥ ४८ ॥

पामाकी चिकित्सा.

माहिषं नवनीतं च सिन्दूरं मरिचान्वितम् ॥
पामां हन्ति प्रलेपेन पापं वीरो यथा स्मृतः॥४९॥

अर्थ-जिसप्रकार महावीर स्वामीके स्मरण करनेसे पापका नाश होताहै उसीप्रकार भैंसका मक्खन सिन्दूर और मिरचका लेप करनेसे पामा कुष्ठ नष्ट होता है ॥ ४९ ॥

शिलातालककुष्ठानि निशालांगलिकोद्भवम् ॥
चूर्णं गोमूत्रसंपिष्टं पामां हन्ति प्रलेपतः ॥ ५० ॥

अर्थ-मैनशिल, हरताल, कूठ, हल्दी और कलिहारीकी जड इन औषधियोंका चूर्ण गायके मूत्रमें पीसकर लेप करनेसे पामा कुष्ठ दूर होताहै ॥ ५० ॥

जयिनी मधुनिर्यासं हरीतकी मरिचगंधसिंदूरम् ॥
वचया सह दधिसारं निहंति खर्जूं च पामां च॥५१

अर्थ-जयन्ती, महुएका रस, हरड, मिरच, गन्धक, सिन्दूर और वचका चूर्ण दहीकी मलाईमें मिलाकर लेप करनेसे खर्जू और पामा दूर होताहैं ॥ ५१ ॥

कनकभुजगवल्लीमालतीपत्रदूर्वारसगदकुनटीभिर्मर्दितस्तैलयुक्तः॥ अपहरति रसेन्द्रः कुष्ठकंडूविचर्चि स्फुटितचरणरंध्रं श्यामलत्वं त्वचायाः ॥ ५२ ॥

अर्थ-धतूरेके पत्ते, नागरपान, मालतीके पत्ते, दूब, पारा, कूठ और मैनशिल इन सबको तेलमें एकत्र घिसकर लेप करनेसे, कोढ, कंडू, विचर्चिका और त्वचाका कालापन पांवोंका फटना और छेदोंका होजाना यह सब दूर होजातेहैं ॥ ५२ ॥

सिध्मकुष्ठकी चिकित्सा.

करंजककलीबीजे विडंगं हैमजस्तथा ॥
शिरीषं कांजिकापिष्टं चूर्णं लेपन सिध्महत् ॥५३॥

अर्थ–करंजके बीज, बहेडा, वायविडंग, हिमज और सिरसके बीज इन सबका चूर्ण बनाकर कांजीमें पीसकर लेप करनेसे सिध्म कुष्ठ दूर होताहै ॥ ९३ ॥

कुष्ठपत्रककासीसशिलामिरचचूर्णकम् ॥
शिरीषतैलमिश्रं वा ताम्रपात्रे घृतं त्र्यहम् ॥ ९४ ॥

अर्थ–कूठ, तेजपात, हीराकसीस, मैनशिल और मिरच इन सबका चूर्ण करके सिरसके तेलमें मिलाकर तीन दिन तांबेके पात्रमें घिसे पश्चात् लेप करनेसे सिध्मकुष्ठ दूर होताहै ॥ ९४ ॥

लेपनं सिध्मत्हच्चैतत्किं वा शीतेन वारिणा ॥
सगन्धकयवक्षारचूर्णं पिष्टं निहन्ति तत् ॥ ९५ ॥

अर्थ–अथवा शीतलजलके साथ गन्धक और जवाखारका चूर्ण पीसकर लेप करनेसे सिध्मकुष्ठ दूर होताहै ॥ ९५ ॥

रंभाक्षारं निशाचूर्णं द्वयमेतत्प्रलेपतः ॥
सर्वांगसंभवं सिध्म नाशयत्यतिवेगतः ॥ ९६ ॥

अर्थ–केलेका खार और हल्दीका चूर्ण इन दोनोंको मिलाकर लेप करनेसे सब शरीरमें उत्पन्न हुआ सिध्मकुष्ठ बहुत शीघ्र नष्ट होजाताहै ॥ ९६ ॥

अथ वातरोगाधिकारः

चूर्णीकरोति यः क्रुद्धो ब्रह्माण्डमतिमारुतः ॥
प्राण्यंगं भंजनाश्चित्रमौषधैः स निवार्यते ॥ ९७ ॥

अर्थ–जो प्रचंड वायु कुपित होकर ब्रह्माण्ड और सम्पूर्ण अंगोका चूर्णित करता है वह औषधिके द्वारा निवारण कीजातीहै यह आश्चर्यहै ॥ ९७ ॥

एकोपि स क्रियाभेदाद्दशधा भिद्यते तनौ ॥
प्राणोऽपानः समानश्चोदानव्यानौ धनंजयः ॥ ९८ ॥
कृकरो देवदत्तश्च नागः कूर्मो दशानिलाः ॥
निःश्वासोच्छ्वासकासैश्च प्राणो देहं समाश्रितः ॥ ९९ ॥

अर्थ—यह वायु एक होनेपर भी क्रियाओंके भेदसे शरीरमें दश प्रकारसे स्थित है जैसे प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान, धनंजय, कृकर, देवदत्त नाग और कूर्म ये दश वायु जानना शरीरके आश्रित प्राणवायु, निश्वास, उच्छ्वास और खांसीको उत्पन्न करता है ॥ ९८ ॥ ९९ ॥

मलमूत्राद्यधो यस्मादपानयति देहिनः ॥
अपानस्तेन कथितः कारणेन समीरणः ॥ ६० ॥

अर्थ—अपानवायु मनुष्यके शरीरके मलमूत्रादिको नीचेके मार्गसे बाहर निकालताहै इस कारण उसको अपान कहते है ॥ ६० ॥

रसरक्तादि गात्रेषु समुन्नयति देहिनाम् ॥
स समानः स्मृतो वायुरूर्ध्वमार्गप्रवर्तकः ॥ ६१ ॥

अर्थ—जो मनुष्यके शरीरमें रसरक्तादि धातुओंको उपर चढाता है उसको समान वायु कहते हैं ॥ ६१ ॥

वदनं नयनं गात्रं यः स्पंदयति देहिनाम् ॥
स उदानः स्मृतो वायुरूर्ध्वमार्गे प्रवर्तते ॥ ६२ ॥

अर्थ—जो वायु मनुष्यके मुखको, नेत्रको और शरीरको फडकातीहै उसको उदानवायु कहतेहैं यह वायु ऊपरके मार्गमें प्रवृत्ति करनेवाला है ॥ ६२ ॥

विकृतं विदधात्यंगं विद्वेषं विषयेषु च ॥
व्याधिप्रकोपनश्चायं वार्धिको व्यानमारुतः ॥ ६३ ॥

अर्थ—जो वायु अंगको विरूप करता है, विषयोंके ऊपर द्वेष और रोगोंको बढाताहै वह वृद्धावस्थामें प्रबल होनेवाला व्यानवायु जानना ॥ ६३ ॥

प्राणो हृदि गुदेऽपानः समानो नाभिमंडले ॥
उदानः कंठदेशस्थो व्यानः सकलसंधिषु ॥ ६४ ॥

अर्थ—प्राणवायु हृदयमें रहता है, अपान वायु गुदामें रहताहै, समान वायु

नाभिमंडलमें, उदानवायु कंठमें और व्यानवायु शरीरकी सम्पूर्ण सन्धियों रहता है॥ ६४॥

घोषे धनंजयो ज्ञेयः क्रंदने कृकरस्तथा ॥ जृंभायां देवदत्तश्च उद्गारे नागनामकः ॥ उन्मीले तु भवेत्कूर्मो दशैवं मारुताः स्थिताः ॥ ६५ ॥

अर्थ—यह प्राणी धनंजयवायुके द्वारा बोलता है कृकरवायुके द्वारा रोता है. देवदत्तके द्वारा जंभाई लेता है, नागवायुके द्वारा डकार और कूर्मवायुके द्वारा आंख खोलता है॥ ६९ ॥

दश नाडियोंके नाम.

इडाथ पिंगलाख्या वा सुषुम्णा हस्तिजिह्विका ॥ अलंमुखा यशा मूषा कंधारी शिखिनी कुहूः॥६६॥ देहमध्यगता एता मुख्याः स्युर्दश नामतः ॥ सर्वे-ऽपि मारुता आशु संचरंति क्रियावशात् ॥ ६७ ॥

अर्थ—इडा, पिंगला, सुषुम्णा, हस्तिजिह्विका, अलंमुखा, यशा, मूषा, कंधारी, शिखिनी और कुहू नामक शरीरमें स्थित दश नाडियें मुख्य हैं पूर्वोक्त सब प्रकारके वायु अपनी २ क्रियाके अनुसार नाडियोंमें विचरण करते हैं॥ ६६ ॥ ६७ ॥

तद्रोगशमनं वच्मि संक्षेपाद्धेतुपूर्वकम् ॥ ६८ ॥

अर्थ—अब वायुरोगके प्रथम संक्षिप्तकारण कहकर तत्पश्चात् उस चिकित्सा कहते हैं॥ ६८॥

वायुके लक्षण.

आलस्यं भ्रममोहकंपजडताः सर्वांगसन्धिव्यथा रोमांचो वदनं विवर्णमरसं शोषस्तथा तालुनः ॥ शैथिल्यं वपुषो त्वधः परुषता मंदाग्निरुष्णव्यथा

ऽनिद्रा स्वल्पमलो जडा च रसना वातप्रकोपेंऽ-गिनाम् ॥ ६९ ॥

अर्थ–आलस्य, भ्रम, मोह, कंप, जडता और शरीरकी सब सन्धियोंमें पीडा होतीहै, रोमांच होआवे, मुखका वर्ण बदलजाय तथा नीरसता, तालुशोष, शिथिलता, शरीरकी त्वचा काली पडजाय, जठराग्नि मंद होजाय, गरमीकी पीडा होय, निद्रा नहीं आवे, मल कम उतरे और जिह्वा जकड जाय. ये वायुप्रकोपके लक्षण जानने ॥ ६९ ॥

वातरोगकी चिकित्सा.

विश्वैरंडशिफा दारु गुडूची सिंहराघ्रिका ॥
एतत्क्वाथोऽस्थिसंधिस्थं हन्ति वातं निषेवितः ॥७०॥

अर्थ–सोंठ, अण्डकी जड, देवदारु, गिलोय, लाल सैजिना और कटेरीकी जड इन औषधियोंका क्वाथ बनाकर सेवन करनेसे अस्थि और सन्धिगत वायु नष्ट होताहै ॥ ७० ॥

रास्नैरंडशिफा दारु वचा शुंठी दुरालभा ॥
अभयातिविषा मुस्ता शतमूली वृषाऽमृता ॥७१॥
अमीषां क्वाथपानेन कासः श्लेष्मा च सन्धिगः ॥
मज्जास्थिस्नायुसर्वांगवायुर्नश्यति निश्चितम् ॥७२॥

अर्थ–रास्ना, अण्डकी जड, देवदारु, वच, सोंठ, धमासा, हरड, अतीस, नागरमोथा, शतावर, अडूसा और गिलोय इन औषधियोंका क्वाथ बनाकर पीनेसे खांसी, कफ, सन्धि, मज्जा, अस्थि, स्नायु और समस्त शरीरगत वायुकी पीडा नष्ट होतीहै ॥ ७१ ॥ ७२ ॥

रास्ना शतावरी दारु कंकोली लांगली कणा ॥
रक्तचन्दनमंजिष्ठा वृद्धिसैन्धवपद्मकम् ॥ ७३ ॥

अश्वगंधामृता पाठा मुस्तैला हस्तिपिप्पली ॥
शतपुष्पाजमोदा च शुंठी कुष्ठं समांशतः ॥७४॥
सघृतं चूर्णमेतेषां भक्षितं तप्तवारिणा ॥ त्वग-
स्थिस्नायुसंधिस्थं मारुतं हन्ति वेगतः ॥७५॥

अर्थ–रास्ना, शतावर, देवदारु, काकोली कलिहारी, पीपल, लालचन्दन, मंजीठ वृद्धि, सेंधा नमक, पद्माख,असगन्ध, गिलोय, पाढ,नागरमोथा, इलायची, गजपीपल, सोया, अजमोद, सोंठ और कूठ इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण करके घीमें मिलाकर जलके साथ सेवन करनेसे त्वचा, हड्डी, स्नायु और सन्धि-योंमें रहनेवाला वायु बहुत शीघ्र नष्ट होजाताहै ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥

अजमोदाभ्रकं रास्ना गुडूची विश्वभेषजम् ॥
शतपुष्पाश्वगंधा च शतमूली समांशतः ॥७६॥
सुश्लक्ष्णचूर्णमेतेषां भक्षितं सर्पिषा सह ॥
हृत्पृष्ठकटिकोष्ठस्थं मारुतं हन्ति वेगतः ॥७७॥

अर्थ–अजमोद, अभ्रकभस्म, रास्ना, गिलोय, सोंठ, सौंफ, असगन्ध और शतावर इन सबको समान भाग लेकर बारीक चूर्ण करके घृत मिलाकर सेवन करनेसे हृदय, पीठ, कमर और कोठेमें रहनेवाला वायु बहुत शीघ्र नष्ट होजाताहै ॥ ७६ ॥ ७७ ॥

विश्वैरंडशिफा शुंठी दारु कुष्ठं च सैंधवम् ॥
रास्नामृतोद्भवं चूर्णं गुग्गुलुर्द्विगुणोत्तरः॥ ७८ ॥
एकैका गुटिका तस्य प्रत्यहं भक्षिता सती ॥
पथ्याशिनोऽतिवेगेन हन्ति विभ्रममारुतम्॥७९॥

अर्थ–सोंठ, अण्डकी जड, सोंठ, देवदारु, कूठ, सेंधा नमक, रास्ना और गिलोय इन सबका चूर्ण एक भाग और गूगल दो भाग लेवे इन सबको एकत्र

पीसकर गोली बनाकर प्रतिदिन एक गोली सेवन करनेसे सब अंगमें कुपित हुआ वायु शीघ्र नष्ट होजाताहै ॥ ७८ ॥ ७९ ॥

शिग्रुच्छल्ली कणा रास्नाशुंठीगोक्षुरसैंधवम् ॥
वह्निरेरंडमूलं च चूर्णमेषां समांशतः ॥ ८० ॥
गुटिका प्रत्यहं तासामेकैकाशनतो ध्रुवम् ॥
सर्वांगकुपितं वायुं शमयत्यतिवेगतः ॥ ८१ ॥

अर्थ–सहिंजिनेकी छाल, पीपल, रास्ना, सोंठ, गोखरु, सेंधानमक, चीता अण्डकी जड इन सबको समाग भाग लेकर चूर्ण करके गोली बनावे । इन गोलियोंको प्रतिदिन सेवन करनेसे सर्वांगमें कुपित हुआ वायु तत्काल नष्ट होजाताहैं ॥ ८० ॥ ८१ ॥

कणामूलं कणा दारु विडंगं वह्निसैंधवम् ॥
शतपुष्पाजमोदा च मरिचं समचूर्णकम् ॥८२॥
गुडान्वितस्य तस्याथ गुटिका एकविंशतिः ॥
भक्षितास्ताख्रिसप्ताहं मारुतं घ्नन्ति सर्वतः ॥८३॥

अर्थ–पीपलामूल, पीपल, देवदारु, वायविडंग, चीता, सेंधानमक, सोया अजमोद और मिरच इन सबको समान भाग लेकर बारीक चूर्ण करके उसमें दुगुणा गुड मिलाकर गोली बनावे, इन गोलियोंको इक्कीस दिन तक सेवन करनेसे सब प्रकारकी वायुजनित पीडा नष्ट होतींहै ॥ ८२ ॥ ८३ ॥

कटुकींद्रयवा पाठा पावकोऽतिविषा निशा ॥
एतेषां चूर्णमुष्णांभःपीतं हन्त्यनलान्बहून् ॥८४॥

अर्थ–कुटकी, इन्द्रजौ, पाठ, चीता, अतीस और हल्दी इन औषधियोंका चूर्ण करके गरम जलके साथ सेवन करनेसे सब प्रकारके वातरोग नष्ट होतेहैं ॥ ८४ ॥

यवानीचूर्णसंमिश्रं शृंगवेररसस्तनौ ॥

मर्दनान्नस्यतो हन्ति कुपितं मारुतं ध्रुवम् ॥८५॥

अर्थ–अजवायनका चूर्ण और अदरखका रस दोनोंको एकत्र करके शरीरमें मर्दन करनेसे तथा सुंघानेसे कुपित हुआ वायु निश्चय शांत होताहै॥८५॥

शुंठीमरिचदारूणां चूर्णं क्काथस्य पानतः ॥
सर्वे वाता विनश्यंति देहोपद्रवकारिणः ॥ ८६ ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच और देवदारु इनका चूर्ण अथवा क्काथ बनाकर सेवन करनेसे शरीरमें उपद्रव करनेवाली और सब प्रकारका वायु नष्ट होताहै ॥ ८६ ॥

शुंठी कणा कणामूलं विडंगं दारुसैंधवम् ॥
रास्ना वृद्धिर्यवानी च मरिच्यान्यभयासमम्॥८७॥
द्विगुणो गुग्गुल्लुश्चूर्णमाज्यं भुक्तं निहन्ति च॥
वातं विसूचिकां गुल्मं शूलं कंपं तथोध्वसीम्॥८८॥

अर्थ–सोंठ, पीपल, पीपलामूल, वायविडंग, देवदारु, सेंधानमक, रास्ना, वृद्धि, अजवायन, मिरच और हरड इन सबको समान भाग लेकर सबसे दुगुना गूगल मिलाकर घीके साथ सेवन करनेसे वायु, विसूचिका, गुल्म, शूल, कंप और उध्वसीनामक वायु दूर होताहै ॥ ८७ ॥ ८८ ॥

दारु कुष्ठं तथा रास्ना विश्वाग्निर्बृहती पुरः ॥
भागोत्तरमिदं सर्वं रंभानिर्यासपाचितम् ॥८९॥
स क्काथो दुग्धतैलाभ्यां पक्कोस्याभ्यंगतो ध्रुवम् ॥
सर्वे वाता विनश्यन्ति प्रत्यंगेऽभ्यंगकारिणः॥९०॥

अर्थ–देवदारु, कूठ, रास्ना, सोंठ, चीता, कटेरी और गूगल इन सबको क्रमसे एकएक भाग बढाकर लेवे पश्चात् केलेके रसमें पकाकर क्काथको छान लेवे फिर इस काथको दूध तथा तेलमें मिलाकर पकाके पश्चात् इसका लेप करे तो सब प्रकारके वातरोग दूर होतेहैं ॥ ८९ ॥ ९० ॥

बह्वंघ्रिकामूलरसोथ तैलं दुग्धं पलं प्रस्थयुगं क्रमेण ॥ सश्वेतपुष्पा नवदेवदारु शैलेयमांसीमिलितं समांशः ॥ ९१ ॥ तैलावशेषं कथितं समस्तं नारायणं तैलमिदं वदंति ॥ नानानिलैः पीडितमानुषाणामभ्यंगयोगाद्भुतमेतदेव ॥ ९२ ॥

अर्थ—शतावरकी जडका रस ४ तोले, तेल ६४ तोले, और दूध ६४ तोले लेवे, सफेद निर्गुण्डी, नई देवदारु, शिलाजीत, भूरिछरीला और जटामांसी इन सबको चार चार तोले लेकर कल्क बनाकर उपर्युक्त औषधियोंमें डालकर पकावे जब पकते २ केवल तेल ही शेष रहजाय तब उतारकर छानलेवे इसको नारायणतेल कहतेहैं। जो मनुष्य अनेक प्रकारके वायुरोगोंसे ग्रसित हैं उनके इस तेलका मर्दन करनेसे बहुत शीघ्र वातरोग नष्ट होतेहैं ॥ ९१ ॥ ९२ ॥

वरुणैरंडवातारिमुण्डीशिग्रुशतावरि ॥ कांडवल्ली बृहत्यौ द्वे नागकर्णशिफादयः ॥ ९३ ॥ एतत्तैलप्रलेपेन मज्जास्थिस्नायुसंधिगः ॥ सर्वांगकुपितो वायुर्विनश्यत्यतिवेगतः ॥ ९४ ॥

अर्थ—वरना, अण्ड, सफेद निर्गुण्डी, सहिंजना, शतावर, कांडबेल, कटेरी, सफेद कटेरी और सफेद अण्डकी जड इन औषधियोंको तेलमें पकाकर लेप करनेसे, मज्जा, अस्थि, स्नायु और सन्धियोंमें रहनेवाला तथा आधे अंगमें कुपित हुआ वायु तत्काल नष्ट होजाताहै ॥ ९३ ॥ ९४ ॥

वृद्धवातारितैल.

दुग्धं प्रस्थद्वयं तैलप्रस्थमेवं तथा रसः ॥ शतावर्या वचा कुष्ठं चन्दनं देवदारु च ॥ ९५ ॥ कंकोला विदुला रास्ना मंजिष्ठैला रुदंतिका ॥ शैलेयमश्व-

गन्धा च मांसी चिक्किणिकाखिलम् ॥ ९६ ॥
अर्द्धार्द्धं पलभागं स्यात्पक्वं मृद्वग्निना शनैः ॥
एकांगशुष्कमज्जास्थिभग्नसाध्यं नृणां तथा ॥९७॥
कुब्जवामनपंगूनां पानादभ्यंगतस्तथा ॥ वातान्नानाविधान्हन्ति तैलमेतन्न संशयः ॥ ९८ ॥

इति श्रीश्रीकण्ठसूरिविरचिते हितोपदेशे
नवमः समुद्देशः ॥ ९ ॥

अर्थ—दूध १२८ तोले, तेल ६४ तोले, शतावरका रस ६४ तोले, वच कूठ, चन्दन, देवदारु कंकोल, सातला, रास्ना, मंजीठ, इलायची रुदन्ती, भूरिछरीला, असगन्ध, वालछड और सुपारी ये सब दो दो तोले लेवे पश्चात् सबका कल्क बनाकर तेलमें डालकर मंदमंद अग्निसे तेलको पकावे। इस तैलका मर्दन करनेसे तथा पीनेसे एकांग शोष, मज्जागत और अस्थिगत वायु, हड्डीका टूटना, कुबडापन, बहरापन और पंगुता तथा अन्यान्य अनेक प्रकारके वायुरोग नाश होतेहैं ॥ ९५–९८ ॥

इति श्रीपरमजैनाचार्य्यश्रीकण्ठसूरिविरचिते हितोपदेशे वैद्यकसारसंग्रहे भिषग्वरहरिशंकरात्मजशंकरलालकृतभाषाटीकायां कुष्ठपामासिध्मवातरोगनिदानचिकित्सावर्णनं नाम नवमः समुद्देशः ॥ ९ ॥

अथ बालरोगाद्यधिकारः।

बालरोगचिकित्सा।

लाजा यष्टिस्तथा मांसी नवराजो रसांजनम् ॥
चूर्णमेषां ज्वरं हन्ति शिशूनां मधुनाशितम् ॥ १ ॥

अर्थ-खीलें, मुलैठी, जटामांसी, तवाखीर और रसौंत इन औषधियोंके चूर्णको सहतमें मिलाकर चटानेसे बालकोंका ज्वर नष्ट होताहै ॥ १ ॥

लाजाजतुशिलामांसीमधुकैश्चूर्णितैः समैः ॥
मधुयुक्तैः शिशोर्लेहः सर्वज्वरनिवारणम् ॥ २ ॥

अर्थ-खीलें, शिलाजीत, जटामांसी और मुलैठी इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण करके सहतमें मिलाकर सेवन करानेसे बालकोंके सब प्रकारके ज्वर नष्ट होतेहैं ॥ २ ॥

पिप्पल्यतिविषाशृंगीचूर्णलेहो मधूक्षितः ॥
क्षौद्रेणातिविषा चैका ज्वरकासवमीहरा ॥ ३ ॥

अर्थ-पीपल, अतीस और काकडाशिंगी इन औषधियोंको चूर्ण करके सहतमें मिलाकर सेवन करानेसे बालकोंका ज्वर नष्ट होताहै अतीसको पीसकर सहतमें मिलाकर चटानेसे बालकोंका ज्वर वमन तथा खांसी नष्ट होतीहै ॥ ३ ॥

मांसी रसांजनं लाजा कणा कर्कटशृंगिका ॥ चूर्ण-
मेषां समांशं च मधुना सह भक्षितम् ॥ ४ ॥
शिशूनांनाशयत्येव श्वासं छर्दिस्तथा ज्वरम् ॥ मधु-
पीतं नवक्षीरं शिशोः कासविनाशनम् ॥ ५ ॥

अर्थ-जटामांसी, रसोत, खील, पीपल और काकडाशिंगी इन औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण करके सहत मिलाकर सेवन करानेसे बालकोंका श्वास, वमन और ज्वर नष्ट होताहै, तवाखीरका चूर्ण करके सहतमें मिलाकर सेवन करानेसे बालकोंकी खांसी नष्ट होतीहै ॥ ४ ॥ ५ ॥

सर्पनिर्मोकनिर्माल्यकेशाश्च श्वेतसर्षपाः ॥
मंत्रैस्तु धूपितो धूपः शिशूनां ग्रहदोषहृत ॥ ६ ॥

अर्थ–सांपकी कैंचली, शिवकी निर्माल्य, शिरके बाल और सफेद सरसों इनको ॐ नमो भगवते श्रीपार्श्वनाथाय श्रीवीराय नमः ॐ सत्यं सत्यवते स्वाहा इस मंत्रसे अभिमंत्रित करके देनेसे बालकोंके ग्रह दोष नष्ट होतेहैं ॥ ६ ॥

मन्त्र.

ॐनमो भगवते श्रीपार्श्वनाथाय श्रीवीराय नमः ॥
ॐसत्यं सत्यवते स्वाहा ॥ इतिमन्त्रः ॥
पुराहिकृतिनिर्गुंडी वचा कुष्ठं समांशकम् ॥
कनकाज्यमयं धूपो बालकग्रहनाशनः ॥ ७ ॥

अर्थ–गूगल. सांपकी कैंचली, निर्गुण्डी, वच, अमलतास, धतूरेके बीज और घी इन सबको समान भाग लेकर धूप देनेसे बालकोंके समस्त ग्रहदोष दूर होते हैं ॥ ७ ॥

भार्ङ्गी च बालकं दारु चूर्णमेषां समांशतः ॥
शिशूनां वारिणा पिष्टं पीतं सर्वज्वरापहम् ॥ ८ ॥

अर्थ–भारंगी सुगन्धवाला और देवदारु इन तीनोंको समान भाग लेकर चूर्ण करके जलमें पीसकर सेवन करानेसे बालकोंके सब प्रकारके ज्वर नष्ट होते हैं ॥ ८ ॥

गोजिह्वा धातकीलोध्रौ विडं दैत्या समाक्षिकः ॥
लेहः क्वाथोऽथवा हंति बालातीसारमुल्बणम् ॥ ९ ॥

अर्थ–गोजिया, धायके फूल. लोध विडलवण और जटामांसी इन सब औषधियोंका क्वाथ अथवा अवलेह सहतमें मिलाकर सेवन करानेसे बालकोंका अतीसार नष्ट होताहै ॥ ९ ॥

शंखयष्ट्यंजनैश्चूर्णं शिशूनां गुदपाकनुत् ॥ श्यामा
रसांजनं मुस्ता चूर्णमेषां समांशतः ॥ १० ॥ बाला-
तिसारहृद्भुक्तं सद्यः शर्करया सह ॥ काकोली

गजकृष्णा च लोध्रमेषां समांशतः ॥ ११ ॥ क्काथो मध्वन्वितः पीतो बालातीसारहन्मतः ॥ १२ ॥

अर्थ-शंख, मुलैठी और रसौत इन औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण करके बालकोंकी गुदामें लेप करनेसे गुदापाक दूर होता है पीपल रसौत और नागरमोथा इन औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण करके मिश्री मिलाकर सेवन करानेसे बालकोंका अतीसार शीघ्र नष्ट होजाताहै काकोली गजपीपल और लोध इन सबको समान भाग लेकर क्काथ बनाकर सहत मिलाकर पिलानेसे बालकोका अतीसार नष्ट होताहै ॥ १०-१२ ॥

श्यामा रसांजनं चूतफलास्थि समचूर्णकम् ॥
हंति छर्दिमतीसारं मधुना सह भक्षितम् ॥ १३ ॥

अर्थ-पीपल रसौत और आमकी गुठली इन औषधियोंका चूर्ण करके सहतमें मिलाकर सेवन करानेसे वमन और अतीसार नष्ट होताहै ॥ १३ ॥

लाजासैंधवयोश्चूर्णं बीजपूररसान्वितम् ॥
भक्षितं नाशयत्येव शिशूनां छर्दिमुल्बणम् ॥ १४ ॥

अर्थ-खीलें और सेंधानमकको पीसकर बिजोरे नीबूके रसमें खरल करके सेवन करानेसे बालकोंकी अतीव उल्बण वमन दूर होता है ॥ १४ ॥

लाजाः सैंधवमाम्रास्थिचूर्णमेषां समांशतः ॥
हंति छर्दिमतीसारं मधुना सह भक्षितम् ॥ १५ ॥

अर्थ-खीलें सेंधा नमक और आमकी गुठली इनका चूर्ण बनाकर सहतमें मिलाकर सेवन करनेसे वमन और अतीसार दूर होताहै ॥ १५ ॥

तवराजः कणाचूर्णं सैंधवैला कटुत्रयम् ॥
निरोधं हंति बालानां मधुना सह भक्षितम् ॥ १६ ॥

अर्थ-तवाखीर, पीपल, सेंधानमक इलायची और त्रिकटु इन औषधियोंका चूर्ण बनाकर सहतमें मिलाकर चटानेसे बालकोंका मलरोध दूर होताहै ॥ १६ ॥

पिप्पल्यतिविषा मांसी तथा कर्कटशृंगिका ॥
तच्चूर्णं मधुना भुक्तं छर्दिकासविनाशकृत् ॥ १७ ॥

अर्थ—पीपल, अतीस, जटामांसी और कांकडाशिंगी इन औषधियोंका चूर्ण करके सहतमें मिलाकर चटानेसे वमन और खांसी नष्ट होती है ॥ १७ ॥

विश्वैला सैंधवं हिंगु भारंगीचूर्णकं मधु ॥
पिष्टमाज्यान्वितं भुक्तं शिशूनां वातशूलहृत् ॥१८॥

अर्थ—सोंठ, इलायची सेंधा नमक हींग और भारंगी इन औषधियोंका चूर्ण सहत तथा घीमें मिलाकर चटानेसे बालकोंका वातशूल नष्ट होताहै ॥ १८ ॥

गोक्षुरः सैंधवं शुण्ठी दारु मुस्ता वचाश्मभित् ॥
विडंगं चूर्णकं भुक्तं सर्पिषा वातशूलहृत् ॥ १९ ॥

अर्थ—गोखरू, सेंधानमक, सोंठ, देवदारु, नागरमोथा, वच, पाषाणभेद और वायविडंग इन ओषधियोंका चूर्ण घीमें मिलाकर सेवन करानेसे बालकोंका वातशूल नष्ट होताहै ॥ १९ ॥

राजिकागृहधूमेन्द्रयवास्तक्रेण चूर्णिताः ॥
पामां विचर्चिकां सिध्मं बालानां घ्नन्ति लेपतः॥२०॥

अर्थ—राई, घरका धुआँ और इन्द्रजौ इन औषधियोंको मठेमें पीसकर लेप करनेसे बालकोंके पामा विचर्चिका और सिध्मनामक कुष्ठ नष्ट होता है ॥२०॥

हरीतकीवचाकुष्ठचूर्णकं समभागतः ॥
मधुना भक्षितं हंति बालानां तालुकंटकम् ॥ २१ ॥

अर्थ—हरड, वच, और कूठ इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण करके सहत मिलाकर चटानेसे बालकोंका तालुकंटक रोग नष्ट होताहै ॥ २१ ॥

रसांजनं शिला शंखनाभिपिप्पलिचूर्णकम् ॥
बालनेत्ररुजं हंति मधुना लोचनांजनात् ॥ २२ ॥

अर्थ—रसौंत, मैनशिल, शंखकी नाभि और पीपलका चूर्ण इन औषधियोंको बारीक घोटकर सहत मिलाकर नेत्रोंमें आंजनेसे नेत्ररोग दूर होताहै ॥ २२ ॥

दाडिमी गैरिकं चूर्णं मुस्ता लोध्रं समांशतः ॥
अजाक्षीरेण लेपोक्षिपुटयोरक्षिरोगहृत् ॥ २३ ॥

अर्थ—अनार, गेरू, नागरमोथा और लोध इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण करके बकरीके दूधमें मिलाकर नेत्रोंके ऊपर लेप करनेसे नेत्ररोग दूर होताहै ॥ २३ ॥

अजाक्षीरेण संपिष्टा दार्वीमुस्तकगैरिकाः ॥
बहिरालेपनं कार्यमक्षिरोगविनाशनम् ॥ २४ ॥

अर्थ—दारुहल्दी, नागरमोथा और गेरू इन सब ओषधियोंको बकरीके दूधमें पीसकर नेत्रोंके ऊपर लेप करनेसे बालकोंका नेत्ररोग दूर होताहै ॥ २४ ॥

ब्राह्मी दुरालभा कुष्ठं शिरीषः सैंधवं कणा ॥ काकोलीचूर्णकैः पक्कं नवनीतेन गोः समम् ॥ २५ ॥ घृतं तु पानतः कुर्यादायुर्मेधां तथा स्मृतिम् ॥ रक्षोभूतमयं हंति बालानां सर्वरोगहृत् ॥ २६ ॥

अर्थ—ब्राह्मी, धमासा, कूठ, सिरसकी छाल, सेंधा नमक, पीपल और काकोली इन सब औषधियोंका चूर्ण करके गायके मक्खनमें पकाकर पान करानेसे बालकोंकी आयु और स्मरण शक्तिकी वृद्धि होतीहै, राक्षस तथा भूतबाधाका भय नष्ट होताहै एवं सब प्रकारके रोग नष्टहोते हैं ॥ २५ ॥ २६ ॥

पाठा यवाः सैंधवशिग्रुपथ्याः कटुत्रयं गोनवनी-
तपक्वम् ॥ एतद्घृतं पानत एव कुर्यान्मतिं स्मृतिं
गात्रबलं शिशूनाम् ॥ २७ ॥

अर्थ-पाठकी जड, इन्द्रजौ, सैंधानमक, सहिंजना, हरड, सोंठ, मिरच और पीपल इन सब औषधियोंका चूर्ण मक्खनमें पकाकर सेवन करानेसे बालकों-की बुद्धि स्मरणशक्ति और शरीरका बल बढताहै ॥ २७ ॥

अथ स्त्रीरोगकी चिकित्सा।

बालकं तवराजश्च चन्दनं तन्दुलांभसा ॥
पीतं हंति त्रयं रक्तप्रदरं दुर्धरं स्त्रियः ॥ २८ ॥

अर्थ-सुगन्धवाला, तवासीर और चन्दन इन तीनोंका चूर्ण करके चावलोंके जलके साथ सेवन करनेसे स्त्रियोंका कष्टसाध्य प्रदर भी नष्ट होजाताहै ॥ २८ ॥

तन्दुलीयकमूलानि तवराजो रसांजनम् ॥
तंदुलांभोयुतं हन्ति अत्युग्रं प्रदरं स्त्रियः ॥ २९ ॥

अर्थ-चौलाईकी जड,तवासीर और रसौंत इन औषधियोंको चावलोंके जलके साथ सेवन करनेसे स्त्रियोंका अत्यन्त उग्र प्रदर रोग नष्ट होताहै ॥ २९ ॥

चन्दनं दुग्धसर्पिर्भ्यां सुपक्कं शीतलं कृतम् ॥
तवराजमधूपेतं पीतं स्त्रीप्रदरापहम् ॥ ३० ॥

अर्थ-चन्दनको घी और दूधमें पकाकर शीतल करलेवे पश्चात् उसमें सहत तथा तवासीर मिलाकर पीनेसे स्त्रियोंका रक्तप्रदर नष्ट होताहै ॥ ३० ॥

स्वर्णगैरिकजम्ब्वाम्रचूर्णं कादंबमुत्पलम् ॥
पीतं तन्दुलतोयेन समधु प्रदरापहम् ॥ ३१ ॥

अर्थ—पीला गेरू, जामुन, आम, तथा कदंबकी छालका चूर्ण और कमल इन सबको चावलोंके जलके साथ सहत मिलाकर पीनेसे प्रदररोग नष्ट होताहै ॥ ३१ ॥

अनंतायाः फलिन्या वा चन्दनं नागकेशरम् ॥
असृग्दरनिरोधाय पिबेत्कल्कं प्रसन्नया ॥ ३२ ॥

अर्थ—अनन्तमूल और फूलप्रियंगु अथवा चन्दन और नागकेशर इनका कल्क बनाकर प्रसन्नानामक मदिराके साथ पीनेसे स्त्रियोंका रक्तप्रदर नष्ट होताहै ॥ ३२ ॥

तंडुलाम्भस्सु पिष्टानि शिवाबीजानि पानतः ॥
शोणितप्रदरं घ्नन्ति दुर्धरं योषितः क्रमात् ॥३३॥

अर्थ—आमलोंके बीजोंको पीसकर चावलोंके जलके साथ पीनेसे रक्तप्रदर बहुत शीघ्र नष्ट होजाताहै ॥ ३३ ॥

गर्भकी चिकित्सा.

भूमिकूष्माण्डकं यष्टिः शतमूली समं त्रयम् ॥
क्वाथो मधुयुतः पीतो हन्ति गर्भव्यथां स्त्रियः॥३४॥

अर्थ—विदारीकंद, मुलैठी और शतावर इन सबको समान भाग लेकर क्वाथ बनाकर सहत डालकर पीनेसे स्त्रियोंकी गर्भसम्बन्धी पीडा नष्ट होतीहै ॥ ३४ ॥

कुम्भकारकराकृष्टमृत्तिका पूगमात्रतः ॥
अजाक्षीरेण सा पीता हन्ति गर्भव्यथां स्त्रियः॥३५॥

अर्थ—कुह्मारके हाथकी लगीहुई मट्टी एक सुपारीभर लेकर बकरीके दूधके साथ सेवन करनेसे स्त्रियोंकी गर्भसम्बन्धी पीडा नष्ट होती हैं ॥ ३५ ॥

क्वाथेनौदककंदानां शालिपिष्टं सशर्करम् ॥
पिबेद्गर्भपरिस्रावे तवक्षीरं प्रसाधितम् ॥ ३६ ॥

अर्थ– सिंघाडोंके क्वाथमें शालिचावलोंको पीसकर मिश्री और तवासीर मिलाकर पकावे इसको सेवन करनेसे गिरताहुआ गर्भ स्थित होजाताहै ॥३६॥

मरिचं पिप्पली शुंठी यवक्षारोथ पंगुली ॥
कूष्मांडी वल्लिजःक्षारो भारंगी शतपुष्पिका॥३७॥
अष्टावशेषितः क्वाथ एतच्चूर्णसमन्वितः ॥
प्रसूतिसमये जातं रोगं हन्ति निषेवितः ॥ ३८ ॥

अर्थ–सोंठ, मिरच, पीपल, जवाखार, पंगुली, पेठा, मिरच, खार, भारंगी और सोया इन औषधियोंको समान भाग लेकर सोलहगुणे जलमें पकावे जब जल जलकर आठवां भाग रहजाय तब उतार लेवे फिर इसमें इनही औषधियोंका चूर्ण डालकर सेवन करनेसे प्रसूतके समयकी पीडा नष्ट होतीहै ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

आर्तवरोध और रक्तगुल्मकी चिकित्सा.

सिताह्वा चिरबिल्वोथ दारु भार्ङ्गी कणोद्भवः ॥
कल्कः पीतो हरेद्गुल्मं तिलक्षारेण रक्तजम् ॥ ३९ ॥

अर्थ–सफेद तुलसी, करंज, देवदारु भारंगी और पीपल इन औषधियोंका कल्क बनाकर तिलके क्षारके साथ सेवन करनेसे रक्तगुल्म दूर होताहै ॥ ३९ ॥

तिलक्षारगुडव्योषघृतं भार्ङ्गीयुतं पिबेत् ॥
पानं रक्तभवे गुल्मे नष्टपुष्पे तु योषिताम् ॥ ४० ॥

अर्थ–तिलका क्षार, गुड, सोंठ, मिरच, पीपल और भारंगी इन सबका चूर्ण करके घीमें मिलाकर सेवन करनेसे रक्तगुल्म दूर होताहै तथा रुकाहुआ आर्त्तव फिर होने लगताहै ॥ ४० ॥

त्रिकटुब्रह्मदण्डीनां तिलक्काथेन चूर्णकम् ॥
रक्तगुल्मं हरेत्पीतं पुष्परोधं च योषिताम् ॥ ४१ ॥

अर्थ-सोंठ, मिरच, पीपल और ब्रह्मदण्डी इन औषधियोंका चूर्ण तिलके काथके साथ पीनेसे रक्तगुल्म नष्ट होताहै तथा रुकाहुआ आर्त्तव खुलकर फिर होने लगता है ॥ ४१ ॥

तुंबीबीजं यवक्षारो दंती किण्वं कणा गुडः ॥
कायस्य च फलं वर्तिर्वज्रीक्षीरेण निर्मिता ॥
योनिमध्ये स्थिता पुष्पं जनयत्येव योषिताम् ॥४२॥

अर्थ-तोम्बीके बीज, जवाखार, दन्तीकी जड, सुराबीज, पीपल, गुड और मैनफल इन औषधियोंको पीसकर थूहरका दूध मिलाकर बत्ती बनाकर योनिमें रखनेसे रुकाहुआ आर्त्तवर खुलकर होताहै ॥ ४२ ॥

अथ गर्भधारणाविधिः ।

गर्भश्च जायते सर्पिर्मुसलीपानमात्रतः ॥ ४३ ॥

अर्थ-मुसलीका चूर्ण और घीको पीनेसे स्त्रियोंके गर्भ रहजाताहै ॥ ४३ ॥

ऋतौ कसेरुकं शुंठी सर्पिर्दिनचतुष्टयम् ॥
क्षीरपिष्टं स्त्रियो गर्भं ग्राहयेन्नरसंगमे ॥ ४४ ॥

अर्थ-ऋतुकालमें कसेरू और सोंठको दूधमें पीसकर घृत मिलाकर चार दिनतक सेवन करे और पुरुषका संसर्ग करे तो गर्भ रहजाताहै ॥ ४४ ॥

पद्मोत्पलशिफाक्षीरं शैलुकं सैंधवं मधु ॥
गर्भपुष्टिकरं भुक्तं किंवा कोरंटमूलिका ॥ ४५ ॥
निशाशर्करया पद्मकंदेन मधुनान्विता ॥
भक्षिता वारयत्येव पततं गर्भमंजसा ॥ ४६ ॥

अर्थ-कमल और सफेद कमलकंद, दूध, वेल, सेंधानमक और सहत इन

सबको एकत्र करके सेवन करनेसे गर्भ पुष्ट होताहै अथवा कटसैरयाकी जड, हल्दी, मिश्री और कमलकंद इन सबको सहतके साथ सेवन करनेसे पतित होता हुआ गर्भ बहुत शीघ्र स्थिर होताहै ॥ ४९ ॥ ४६ ॥

लज्जालुधातकीपुष्पमुत्पलं मधुलोध्रकम् ॥
जातिस्थया स्त्रिया पीतं गर्भपातं निवारयेत् ॥४७॥

अर्थ–लजावन्ती, धायके फूल, कमल, सहत और लोध इन सबको एकत्र पीसकर सेवन करनेसे गिरता हुआ गर्भ स्थिर होताहै ॥ ४७ ॥

समभागसितायुक्तं शालितंडुलचूर्णकम् ॥
उदुम्बरीशिफाक्काथः पीतो गर्भं च रक्षति ॥ ४८ ॥

अर्थ–मिश्री और चावलोंके चूर्णको समान भाग लेकर कठूमरके क्काथमें मिलाकर पीनेसे गिरताहुआ गर्भ रुक जाताहै ॥ ४८ ॥

गर्भिणीगर्भतो रक्तं स्तभयेन्निपतन्द्रुतम् ॥
पारावतमलः पीतरूयाहं तंडुलवारिणा ॥ ४९ ॥

अर्थ–कबूतरकी विष्टाको चावलोंके जलके साथ तीन दिनतक पीनेसे गिरताहुआ रुधिर बंद होजाताहै ॥ ४९ ॥

पाठापामार्गमूलाभ्यां योनिमध्यविलेपनात् ॥
प्रसूतिर्जायते शीघ्रं दुःखं दुष्प्रसवे स्त्रियः ॥५०॥

अर्थ–पाढकी जड और चिरचिटेकी जडको पीसकर योनिके भीतर लेप करनेसे अत्यन्तकष्टसे होनेवाला प्रसव शीघ्र सुखपूर्वक होताहै ॥ ५० ॥

वीरा लांगलिका दन्ती वृषा पाषाणभेदकः ॥
मूढगर्भास्तु दातव्यो लेपः सुखप्रसूतये ॥ ५१ ॥

अर्थ–शतावर, कलिहारीकी जड, दन्तीकी जड, अडूसेकी जड और पाषा-

णभेद इन औषधियोंका योनिमें लेप करनेसे मूढगर्भा स्त्री भी सुखपूर्वक सन्तानको उत्पन्न करतीहैं ॥ ९१ ॥

जरायुतं मृतं गर्भं न पतंतीं जरामपि ॥
योषितां पातयत्येव पादस्थोत्तरणीशिफा ॥९२॥

अर्थ—उत्तरणीकी जडको पावँमें बांधनेसे जरायुके साथ भराहुआ गर्भ अथवा गर्भके प्रसव होनेके पश्चात् रुकीहुई जरायु ये दोनों शीघ्र ही पतित होजातेहैं ॥ ९२ ॥

विशालाज्यपयोयुक्ता लेपतो योनिशूलहृत् ॥
हृच्छूले बीजपूरस्य रसः सैंधवसंयुतः ॥ ९३ ॥

अर्थ—दूध तथा घीके साथ इन्द्रायणकी जडको पीसकर लेप करनेसे योनिशूल दूर होताहै । हृदयशूलमें बिजौरे नीबूके रसमें सेंधा नमक डालकर पीवे ॥ ९३ ॥

एरंडतैलसंयुक्तमुंडीमूलस्य लेपतः ॥
नवप्रसूतनारीणां योनिशूलं प्रशाम्यति ॥ ९४ ॥

अर्थ—गोरखमुण्डीकी जडको अण्डीके तेलमें पीसकर लेप करनेसे नवीन प्रसूता स्त्रियोंका योनिशूल नष्ट होताहै ॥ ९४ ॥

योनिशूलहरं पीतं सर्पिः कर्पासबीजयुक् ॥
मरुमांसेन पक्वं वा तैलं योनिप्रलेपनात् ॥ ९५ ॥

अर्थ—कपासके बीजोंके साथ घीको पीनेसे योनिशूल दूर होताहै अथवा मरुदेशके उत्पन्न जीवोंको मांसको तेलमें पकाकर लेप करनेसे योनिशूल दूर होताहै ॥ ९५ ॥

एक एव यवक्षारो योनिशूलं निवर्त्तयेत् ॥
सर्पिषा चोष्णतोयेन पीतः शीतं यथानलः ॥९६॥

अर्थ—जवाखारको घीमें मिलाकर गरमजलके साथ सेवन करनेसे जिस प्रकार अग्निको जल नष्ट करदेताहै उसी प्रकार योनिशूल दूर होताहै ॥ ९६ ॥

शालितन्दुलपिष्टेन दुग्धपीतेन योषिताम् ॥
भूरि दुग्धं भवेत्सप्तदिनं क्षीरान्नभोजने ॥ ९७ ॥

अर्थ—शालिचावलोंको दूधमें पीसकर सात दिनतक पीनेसे और दूध भात भोजन करनेसे स्त्रियोंके स्तनोंमें दूध उत्पन्न होताहै ॥ ९७ ॥

स्तनपीडा शमं याति विशालामूललेपतः ॥
कुमारीकन्दलेपो वा सहरिद्रोऽतिवेगतः ॥ ९८ ॥

अर्थ—इन्द्रायणकी जडको पीसकर स्तनोंके ऊपर लेप करनेसे अथवा घी-कुआंर और हल्दी इनका लेप करनेसे स्तनोंकी बहुत शीघ्र पीडा नष्ट होतीहै ९८

प्रविशेन्निर्गता योनिः कदलीकन्दलेपतः ॥
शिथिलापि भवेद्गाढा शक्रगोपाज्यलेपनात् ॥९९॥

अर्थ—केलेकी जडका लेप करनेसे बाहर निकलीहुई योनि भीतरको प्रविष्ट होजातीहै और बीरबहूटि दियोंको घीमें पीसकर लेप करनेसे योनि शिथिल होगई होय तो दृढ होजातीहै ॥ ९९ ॥

व्रण तथा शस्त्राघात आदिकी चिकित्सा ।

व्रणसंरोहणो लेपः घृतक्षीरद्रुमांकुरैः ॥
त्रिफला वटशुङ्गाश्च त्रायन्ती लोध्रजो यथा ॥६०॥

अर्थ—घी, दूध और क्षीरवृक्षके अंकुर इनको एकत्र पीसकर लेप करनेसे व्रण भरजाताहै । अथवा त्रिफला, वडके अंकुर, त्रायमान और लोध इनका लेप करनेसे भी उपर्युक्त गुण होताहै ॥ ६० ॥

अर्जुनोदुंबराश्वत्थलोध्रजम्बूत्वचः समाः ॥
यष्टी च कट्फलं लाक्षाचूर्णकं व्रणरोहणम् ॥६१॥

अर्थ–अर्जुन, गूलर, पीपल, लोध, जामुन इन वृक्षोंकी छालोंको समान भाग लेकर उसमें मुलैठी, कायफल और लाखका चूर्ण डाले इस चूर्णको सेवन करनेसे व्रण भरजाताहै ॥ ६१ ॥

बाणपुंखाशिफा दन्तचर्विता तद्रसोथवा ॥
महिष्याः पुत्रजन्मोत्थवर्च्चोलेपो विनाशकृत्॥६२॥

अर्थ–सरफोंकेकी जडको दांतोंसे चांवकर उस रसको व्रणके ऊपर लगानेसे अथवा भैंसके प्रसवके समयका गोवर लाकर लेप करनेसे व्रण भर-जाताहै ॥ ६२ ॥

चर्वितो दंतिचूर्णेन सहदेवीरसोथवा ॥
श्वेतवस्त्रेण संबद्धो नवोद्घातविरोहकृत् ॥ ६३ ॥

अर्थ–दन्तीको दांतोंसे चवाकर सहदेईके रसमें मिलाकर सफेद वस्त्रपर लगाकर व्रणके ऊपर बांधनेसे तत्कालका उत्पन्न हुआ व्रण वहुत शीघ्र भर-जाताहै ॥ ६३ ॥

लज्जापाठेषु पुंखाणामेकैकं जलमर्दितम् ॥
मूलमालेपमात्रेण शस्त्रघातप्ररोहकृत् ॥ ६४ ॥

अर्थ–लज्जावन्ती, पाढकी जड और सरफोंका इन तीनोंको जलमें पीसकर लप करनेसे शस्त्रका घाव भरजाताहै ॥ ६४ ॥

काकजंघाप्रलेपो वा शस्त्रघाते दिनत्रयात् ॥
पाकं पूयं विना रोहं नयत्येव न संक्षयः ॥६५॥

अर्थ–काकजंघाको पीसकर लेप करनेसे तीन दिनमें विना पके और विना राधके शस्त्रका घाव भरजाताहै ॥ ६५ ॥

त्रिवृन्मधुकणादन्तीनिंबपत्रैः ससैंधवैः ॥
दुष्टव्रणविनाशाय लेपोऽत्यन्तविशोधनः ॥६६॥

अर्थ–निसोत, सहत, पीपल, दन्तीकी जड, नीमके पत्ते और सैंधा नमक इन औषधियोंका लेप करनेसे बहुत शीघ्र दुष्टव्रण भरजाताहै ॥ ६६ ॥

नाडीव्रणकी चिकित्सा,

आवल्लीमूलिकाखण्डैर्निशाखण्डैः समन्वितः ॥
पक्वं तैलं प्रलेपेन शमं नाडीव्रणं नयेत् ॥ ६७ ॥

अर्थ–आमलीकी जड और हल्दीको तेलमें पकाकर लेप करनेसे नाडीव्रण शान्त होताहै ॥ ६७ ॥

सर्जिका सैंधवं दन्ती नीलीमूलं फलानि च ॥
मन्त्रे चतुर्गुणे सिद्धं तैलं नाडीव्रणापहम् ॥६८॥

अर्थ–सज्जी, सेंधानमक, दन्तीकी जड, निलकी जड, हरड, बहेड़ा और आमला इन सबका कल्क करके उसको तेलमें डालकर चौगुने गायके मूत्रमें सिद्ध करे इसका लेप करनेसे नाडीव्रण नष्ट होताहै ॥ ६८ ॥

त्रपुसीपत्रधत्तूरकर्णमोटाकुबेरकाः ॥
सकृत्प्रलेपमात्रेण सुतीव्रव्रणरोहणः ॥ ६९ ॥

अर्थ–खीरेके पत्ते, धतूरेके पत्ते, कनफोडाकी बेल और तुलसी इन सबको पीसकर एकवार लेप करनेसे तीव्र वेदनायुक्त व्रण भी भरजाताहै ॥ ६९ ॥

प्रियंगुगुलिकाचूर्णं भक्षितं माहिषं दधि ॥
कोद्रवान्नं च संयुक्तं नाडीव्रणविनाशकृत् ॥ ७० ॥

अर्थ–फूलप्रियंगुको भैंसके दहीमें मिलाकर सेवन करनेसे और कोदोंका भोजन करनेसे नाडीव्रण नष्ट होताहै ॥ ७० ॥

त्रिफलायाः कषायेण भृंगराजरसेन वा ॥
व्रणप्रक्षालनं कुर्यादुपदंशप्रशांतये ॥ ७१ ॥

अर्थ—उपदंशके व्रणोंको त्रिफलेके क्वाथसे या भांगरेके रससे धोना चाहिये ॥ ७१ ॥

मेघनादशिला ताला समांशा पुटपाचिता ॥
तन्मध्यापूरिता नाडी शमं याति चिरोद्भवा ॥७२॥

अर्थ—चौलाईकी जड और ताडकी जड इन दोनोंको समान भाग लेकर पुटपाक करके नाडीव्रणके भीतर रखनेसे बहुत दिनोंका व्रण भी भरजाताहै ॥ ७२ ॥

घृतसिद्धार्थतैलाभ्यां युता देवीप्रलेपतः ॥
भूजयन्तीशिफा वातनाडीव्रणविनाशिनी ॥ ७३ ॥

अर्थ—घी तथा सरसोंके तेलमें वांझकटेरी तथा भूजयन्तीकी जडको पीसकर लेप करनेसे वायुजनित नाडी व्रण नष्ट होताहै ॥ ७३ ॥

गुग्गुलुस्त्रिफलाव्योषैः समांशैर्घृतयोगतः ॥
नाडीदुष्टव्रणः शूलभगन्दरविनाशकृत् ॥ ७४ ॥

अर्थ—गूगल, त्रिफला, सोंठ, मिरच और पीपल इन सबको समान भाग लेकर घीमें पकाकर लेप करनेसे नाडीव्रण, दुष्टव्रण, तथा व्रणकी पीडा और भगंदररोग नष्ट होताहै ॥ ७४ ॥

बहुकांजिकपिष्टा सा शाखोटकतरुत्वचः ॥
प्रपलेनात्तु नाडीनां व्रणशोफविनाशकृत् ॥ ७५ ॥

अर्थ—सिंहोडेकी छालको कांजीमें पीसकर लेप करनेसे नाडीव्रणकी सूजन नष्ट होतीहै ॥ ७५ ॥

पक्त्वासिक्थनिशायष्टिकरंजफलपल्लवैः ॥
पटोलमालतीनिंबपत्रैर्व्रण्यं घृतं स्मृतम् ॥ ७६ ॥

अर्थ—मोम, हल्दी, मुलैठी, करंजके फल तथा पत्ते, पटोलपात, मालती, नीमके पत्ते और घी इन सबको मिलाकर पकावे। यह घृत व्रणको बहुत शीघ्र भरदेताहै ॥ ७६ ॥

शालिमुद्गयवानद्याज्जांगलं च सदा व्रणी ॥
दक्षक्षीरान्नगुर्वन्नं मैथुनं परिवर्जयेत् ॥ ७७ ॥

अर्थ—व्रणरोगमें शालिचावल, मूंग, जौ और जांगल प्रदेशके जीवोंका मांस यह सब हितकारी हैं तथा मुर्गेका मांस, दूध, भारी अन्न और मैथुन यह सब त्यागने योग्य हैं ॥ ७७ ॥

विसर्परक्तमण्डलकण्डूदद्रुरोगादिकी चिकित्सा.

चक्रमर्दशिफा दूर्वा सैंधवं च हरीतकी ॥
एषां समांशकं चूर्णं तक्रकांजिकमर्दितम् ॥ ७८ ॥
विसर्पं हन्ति लेपेन रक्तमण्डलकं तथा ॥
कण्डूदद्रूंश्च वेगेन खसरं चादिदारुणम् ॥ ७९ ॥

अर्थ—चकवडकी जड, दूब, सेंधा नमक और हरड इन औषधियोंको समान भाग लेकर चूर्ण करके मठे अथवा कांजीमें पीसकर लेप करनेसे विसर्परोग, लाल चकत्ते, पामा, दाद और दारुण घाव यह सब बहुत शीघ्र नष्ट होजातेहैं ॥ ७८ ॥ ७९ ॥

मुस्तारिष्टपटोलायाः क्वाथः सर्वविसर्पजित् ॥
धात्रीपटोलनिम्बानां समधुर्घृतसंयुतः ॥ ८० ॥

अर्थ—नागरमोथा, नीम और पटोलपत्रका क्वाथ पीनेसे सब प्रकारका विसर्परोग दूर होताहै। आमला, पटोलपत्र और नीम इनके क्वाथमें घृत तथा सहत मिलाकर पीनेसे विसर्परोग दूर होताहै ॥ ८० ॥

सिन्दूरपिप्पलीचूर्णयुतं तैलं सुपाचितम् ॥

विसर्पं हन्ति लेपेन रक्तवातसमुद्भवम् ॥ ८१ ॥

अर्थ–सिन्दूर और पीपलका चूर्ण तेलमें डालकर पकावे, इस तेलका लेप करनेसे वातरक्तसे उत्पन्न हुआ विसर्परोग नष्ट होता है ॥ ८१ ॥

मुस्तारिष्टपटोलाद्याः शूलं रक्तं च धीमडम् ॥
शिरीषोशीरनागाह्वहिंगूनां वा विलेपनम् ॥ ८२ ॥

अर्थ–नागरमोथा, नीम और पटोलपत्र इनका लेप करनेसे अथवा सिरस-वृक्षकी छाल, खस, नागरमोथा और हींग इनका लेप करनेसे शूल तथा लाल चकत्ते नष्ट होतेहैं ॥ ८२ ॥

कुष्ठवह्निनिशानालं लांगली च मनःशिला ॥
गोमूत्रपिष्टमालेपात्कण्डूं हन्ति च दद्रुकम् ॥८३॥

अर्थ–कूठ, चीता, हल्दी, हरताल, कलिहारी और मैनशिल इन सबको गायके मूत्रमें पीसकर लेप करनेसे खुजली और दाद दूर होता है ॥ ८३ ॥

ललनं वटसंमिश्रं जटापुष्टं कणान्वितम् ॥
सितानिंबुरसैर्मर्द्यं सकृद्दद्रुविनाशकृत् ॥ ८४ ॥

अर्थ–राल, गन्धक, गूगल सुहागा और मिश्री इन सबको मिलाकर नीबूके रसमें मर्दन करके एकवार लेप करनेसे दाद दूर होताहै ॥ ८४ ॥

अर्बुदकी चिकित्सा.

सविडंगो यवक्षारः शुण्ठीगन्धकसंयुतः ॥
सरटासृग्युतो लेपो द्रावयत्यर्बुदं क्षणात् ॥ ८५ ॥

अर्थ–वायविडंग जवाखार, सोंठ, और गन्धक इन सबका एकत्र चूर्ण करके सरेंटेके रुधिरमें मिलाकर लेप करनेसे एक क्षणमात्रमें हि अर्बुदरोग नष्ट होता है ॥ ८५ ॥

शिग्रुमूलकबीजानि ससिद्धार्थातसी मसी ॥
यवाम्लतक्रपिष्टानि घ्नन्ति लेपेन चार्बुदम् ॥८६॥

अर्थ-सहिञ्जनेके बीज, मूलीके वीज, सरसों, अलसी और कलौंजी इन सबको कांजीमें तथा मट्टेमें पीसकर लेप करनेसे अर्बुदरोग नष्ट होताहै ॥ ८६ ॥

उत्तुंडं कितवं मूलमुत्तरं विधिनोद्धृतम् ॥
अर्बुदं गण्डमालां च सुदृढां हन्ति लेपतः ॥८७॥

अर्थ-अपने घरसे उत्तर दिशाकी ओर उत्पन्न हुए धतूरेकी जडको विधिपूर्वक लाकर लेप करनेसे अत्यन्त भयंकर गंडमाला तथा अर्बुदरोग दूर होताहै ॥ ८७ ॥

रक्तपित्तादि चिकित्सा कथनप्रतिज्ञा.

रक्तपित्तमपस्मारः पांडुरोगोग्निदीपनम् ॥ वह्नि-
दग्धप्रतीकारवातपित्तामामारुतः ॥ ८८ ॥
सूचिता इह शब्देनामुत्र सूत्रे समासतः ॥ तेषां-
प्रतिक्रियां वच्मि शास्त्रदृष्ट्या यथाक्रमम् ॥ ८९ ॥

अर्थ--रक्तपित्त, अपस्मार पांडुरोग, जठराग्नि, अग्निसे जलेहुएका उपाय वात, पित्त और आमवायु इन सबरोगोंको इस ग्रन्थमें पीछे संक्षेपसे सूचित कियाहै अब इन रोगोंकी चिकित्सा शास्त्रोंके अनुसार कहताहूं ॥ ८८ ॥ ८९॥

रक्तपित्त चिकित्सा.

वातकस्वरसश्चैव शर्करामधुमिश्रितः ॥
कामलं रक्तपित्तं च पीतो हन्ति दिनत्रयम् ॥ ९०॥

अर्थ-कोयका स्वरस, मिश्री तथा सहत मिलाकर तीन दिन तक पीनेसे कामला और रक्तपित्त दूर होताहै ॥ ९० ॥

विषपत्राणि निष्पिष्य रसः समधुशर्करः ॥
पीतोऽनेन शमं याति रक्तपित्तं सुदारुणम् ॥ ९१ ॥

अर्थ-इन्द्रायनके पत्तोंको पीसकर उसका रस निकालकर सहत तथा मिश्री मिलाकर पीनेसे महादारुण रक्तपित्त नष्ट होता है ॥ ९१ ॥

पक्वोदुंबरकाश्मर्यपथ्याखर्जूरगोस्तनी ॥ मधुना घ्नन्ति संलीढा रक्तपित्तं पृथक्पृथक् ॥ वासको मधुना मिश्रो भक्षितो रक्तपित्तहृत् ॥ ९२ ॥

अर्थ–पकाहुआ गुलर कुम्भेर, हरड, खजूर और दाख इन सबका कल्क बनाकर सहत मिलाकर चाटनेसे रक्तपित्तरोग दूर होताहै ॥ ९२ ॥

पाण्डुरोगकी चिकित्सा.

मधुयष्टिसितायुक्ता पांडुरोगविनाशिनी ॥ ९३ ॥

अर्थ–अडूसेका रस सहत मिलाकर पीनेसे रक्तपित्तरोग नष्ट होताहै. मिश्रीके साथ मुलैठीको सेवन करनेसे पांडुरोग नष्ट होताहै ॥ ९३ ॥

फलत्रिकामृतावासातिक्ताभूनिंबनिंबजः ॥
क्वाथो मधुयुतो हन्ति पांडुरोगं सकामलम् ॥९४॥

अर्थ–हरड बहेडा, आमला, गिलोय, अडूसा, कुटकी, चिरायता और नीम इन औषधियोंका काथ सहत मिलाकर पीनेसे कामला युक्त पांडुरोग नष्ट होता है ॥ ९४ ॥

पाण्डुरोगके लक्षण.

कृष्णाभो वातपाण्डुः स्यात्तद्रुपद्रवसंगतः ॥
पित्तपांडुश्च तद्रोगी पीतमूत्राक्षिविट्छविः ॥ ९५ ॥
श्वेताभं कफपांडुत्वं तद्विकारानुबंधि च ॥
विज्ञेयः सर्वरूपश्च पांडुरोगस्त्रिदोषजः ॥ ९६ ॥

अर्थ–वातज पांडुरोगमें शरीरका वर्ण काला और वायुके उपद्रवोंसे युक्त होता हैं, पित्तजपांडूरोगीके मूत्र, नेत्र, विष्ठा और वर्ण पीले रंगके होते हे, कफजपांडुरोगीका रंग सफेद और कफयुक्त होताहै, त्रिदोषजपांडुरोगमें तीनों दोषोंके लक्षण होतें हैं ॥ ९५ ॥ ९६ ॥

असाध्यपाण्डुरोगके लक्षण.

रक्तक्षयान्वितः क्षीणश्छर्दिशोफाद्युपद्रुतः ॥
पीतभावसमालोकी पांडुरोगी त्यजन्यसून् ॥ ९७ ॥

अर्थ—जिस पांडुरोगीके शरीरमें रुधिर क्षय होगया होय, शरीर क्षीण होजाय, वमन, सूजन इत्यादि उपद्रव हों, और समस्त पदार्थ पीले ही रंगके दीखें वह पांडुरोगी असाध्य जानना ॥ ९७ ॥

अपस्मारकी चिकित्सा.

केशरीमूलसंघृष्टसौवीरीमूलयनस्यतः ॥
अपस्मारः शमं याति यथा दुष्टो निपीडितः ॥९८॥

अर्थ—जिसप्रकार दण्डदेनेसे दुष्ट मनुष्य शान्त होताहै उसीप्रकार बेरीकी जड और बिजौरे नीबूकी जडको पीसकर नस्य देनेसे अपस्मार रोग नष्ट होताहै ॥ ९८ ॥

यष्टिहिंगुवचाचक्राशिरीषलशुनामयैः ॥
आजमूत्रेरपस्मारे सोन्मादे नावनांजने ॥ ९९ ॥

अर्थ—मुलैठी, हींग, वच, काकडा शिंगी, सिरस, लशुन और कूठ इन सब औषधियोंको बकरीके मूत्रमें पीसकर इसकी बूंद नाकमें डालनेसे तथा नेत्रोंमें आंजनेसे अपस्मार तथा उन्मादरोग दूर होताहै ॥ ९९ ॥

शंखपुष्पीवचाकुष्ठैः सिद्धं ब्राह्मीरसे घृतम् ॥
पुराणं हन्त्यपस्मारं सोन्मादं मेध्यमुत्तमम् ॥१००॥

अर्थ—शंखपुष्पी, वच और कूठ इन औषधोंके कल्क और ब्राह्मीके रसमें पुराना घी डालकर घृतको पकावे यह घृत—बहुत पुरानेअपस्मार तथा उन्मादरोग को दूर करके बुद्धि को बढाताहै ॥ १०० ॥

कूष्माण्डकरसे सिद्धं षोडशांशं सयष्टिकम् ॥
घृतं जयत्यपस्मारं सिद्धाख्यं नाम नामतः ॥१०१॥

अर्थ-पेठेके रसमें मुलैठीका कल्क सोलह भाग डालकर घृत बनावे इस सिद्धकिये घृतका सेवन करनेसे अपस्मार रोग दूर होताहै ॥ १०१ ॥

सुमना तार्क्ष्यजं विश्वा शकृत्पारावतस्य च ॥
अंजनं हन्त्यपस्मारं सोन्मादं च विशेषतः ॥१०२॥

अर्थ-चमेली, वडीकरंज, रसौत, सोंठ, और कबूतरकी विष्टा इन औषधों का अंजन बनाकर नेत्रोंमें आंजनेसे अपस्मार तथा उन्मादरोग दूर होताहै ॥ १०२ ॥

शिग्रुकुष्ठशिलाजीरलशुनव्योषहिंगुभिः ॥
बस्तमूत्रेण शृतं तैलं नावनं स्यादपस्मृतौ ॥१०३॥

अर्थ-सैंजीना, कूठ, मैनशिल, जीरा, लेशुन, सोंठ, मिरच, पीपल और हींग इन सब औषधियेंाका कल्क बनाकर बकरेका मूत्र मिलाकर तेलमें डालकर पकावे इस तैलका नस्य देनेसे अपस्मार रोग नष्ट होताहै ॥ १०३ ॥

हरिद्राहिंगुनिर्गुण्डीमूलस्य रसनावनात् ॥
उन्मादादप्यपस्मारान्मानवो मुच्यते ध्रुवम् ॥१०४॥

अर्थ-हल्दी, हींग और निर्गुण्डीकी जडका रस इन सबको एकत्रकरके नस्य देनेसे अपस्मार तथा उन्मादरोग दूर होताहै ॥ १०४ ॥

क्षुधावर्द्धकचूर्ण.

यवक्षारान्विता शुंठी चूर्णं लीढं घृतान्वितम् ॥
उष्णेन वारिणा पीतमेतच्चूर्णं क्षुधाकरम् ॥ १०५ ॥

अर्थ-जवाखारके साथ सोंठका चूर्ण घीमें मिलाकर गरमजलके साथ पीनेसे भूख लगने लगतीहै ॥ १०५ ॥

यवानीव्योषसिंधूत्थजीरकद्वयहिंगुभिः ॥
हिंग्वष्टकमिदं साज्यं भुक्तं वातजिदग्निकृत् ॥ १०६ ॥

अर्थ—अजवायन, सोंठ, मिरच, पीपल, सेंधानमक, जीरा, काला जीरा और हींग इन सबके चूर्णको हिंग्वष्टक कहते हैं इस चूर्णको घीमें मिलाकर सेवन करनेसे वायु दूर होता है तथा अग्नि दीपन होता है ॥ १०६ ॥

कणासिन्धुशिवावह्निचूर्णमुष्णेन वारिणा ॥
पीतं प्रातः क्षुधं कुर्यात्पावकस्यातिदीपनम् ॥ १०७ ॥

अर्थ—पीपल, सेंधानमक, हरड और चीता इन चारों औषधियोंका चूर्ण गरमजलके साथ प्रातःकाल सेवन करनेसे भूंख उत्पन्न होतीं है ॥ १०७ ॥

विडंगवह्निभल्लातगुडूचीगुडनागरैः ॥
समांशैःससितैर्लेहो जठरानलदीपनः ॥ १०८ ॥

अर्थ—वायविडंग, चीता, भिलावा, गिलोय, गुड, सोंठ इन सबका चूर्ण बनाकर मिश्री मिलाकर सेवन करनेसे अग्नि दीपन होताहै ॥ १०८ ॥

कपित्थचुक्रचांगेरीमारिचाजाजिचित्रकैः ॥
कफवातहरो ग्राही बल्यो दीपनपाचनः ॥ १०९ ॥

अर्थ—कैथ, चूका, नोनिया, मिरच, जीरा चीता इन सबको एकत्र मिलाकर सेवन करनेसे वायु और कफ नष्ट होताहै, मलका अवरोध होताहै तथा पाचन और अग्नि दीपन होताहै ॥ १०९ ॥

धान्यजीरकसंसिद्धं घृतमग्निविवर्द्धनम् ॥
रोचनं दोषशमनं वातपित्तविनाशनम् ॥ ११० ॥

अर्थ—धनियां और जीरेके कल्कमें घीको पकाकर सेवन करनेसे रुचि उत्पन्न होती है तथा वातादिदोष शांत होते हैं ॥ ११० ॥

अग्निसे जलेहुयेकी चिकित्सा.

सिक्थं सर्जरसो जीरं घृतपक्वं त्रयं हरेत् ॥
लेपतो वह्निदग्धस्य वेदनामतिवेगतः ॥ १११ ॥

अर्थ-मोम, राल, और जीरा इन तीनोंको घीमें पकाकर लेप करनेसे अग्निसे जलेहुएकी पीडा नष्ट होतीहै ॥ १११ ॥

तिलतैलं यवा दग्धा एतल्लेपेन निश्चितम् ॥
वह्निदग्धो व्रणो रोहं याति दुःखं प्रशाम्यति ॥११२॥

अर्थ-जलेहुए जौकी राखको तिलके तेलमें मिलाकर लेप करनेसे अग्निसे जलेहुएका व्रण भरताहै और पीडा शांत होतीहै ॥ ११२ ॥

स्थावरजङ्गमविष-चिकित्सा.

वन्ध्याकर्कोटिकामूलं छागमूत्रेण भावितम् ॥
नस्यं कांजिकसंपिष्टं विषोपहतचेतसाम् ॥ ११३ ॥

अर्थ-बांझ ककोडेकी जडको लाकर बकरीके मूत्रमें भावना देवे पश्चात् कांजीमें पीसकर विषसे मूर्छितहुए मनुष्यको नास देनेसे विष उतर जाताहै॥ ११३॥

मूलत्वक्पत्रपुष्पाणि बीजं चेति शिरीषजम् ॥
गोमूत्रचूर्णितं ह्येतद्भेषजं विषनाशनम् ॥ ११४ ॥

अर्थ-सिरसकी जड, छाल, पत्ते फूल और बीज लेकर सबको गायके मूत्रमें पीसकर नास देनेसे सब प्रकारके विष उतर जातेहैं ॥ ११४ ॥

मरिचं निम्बपत्राणि सैन्धवं मधुसर्पिषा ॥
घ्नंति सर्वाणि वेगेन विषं स्थावरजङ्गमम् ॥ ११५॥

अर्थ-मिरच, नीमके पत्ते और सेंधा नमक इन सबको सहत तथा घीके साथ सेवन करनेसे स्थावर तथा जंगम विष नष्ट होताहै ॥ ११५ ॥

सर्पविषचिकित्सा.

रजनीसैंधवक्षौद्रसंयुतं घृतमुत्तमम् ॥
पानं शूलविषार्त्तस्य सर्पदष्टस्य चेष्यते ॥ ११६ ॥

अर्थ–हल्दी और सेंधा नमक सहत और घी इनको एकत्र मिलाकर सेवन करनेसे सांपके डसेहुए मनुष्यका विष और शूलसहित विषकी वेदना दूर होती है ॥ ११६ ॥

वृश्चिकविष–चिकित्सा.

स्वेदं वेपथुरोमांचौ शरीरे वृश्चिकोद्भवम् ॥
सद्यः सैंधवपानं च घृतयुक्तं विनाशयेत् ॥११७॥

अर्थ–बीछूके काटेहुए जिस मनुष्यके शरीरमें पसीना आता होय, कंप होय और रोमांच होआवें उस मनुष्यको घीमें मिलाकर तत्काल सेंधानमक पिलावे तो बीछूकी वेदना शांत होती है ॥ ११७ ॥

श्वविषचिकित्सा.

तिलतैलं गुडं चार्कक्षीरेण सह लोडयेत् ॥
योज्यं सद्यः श्वदंशे तु सर्वोत्थविषनाशनम् ॥११८॥

तिलका तेल, गुड और आकका दूध इन सबको एकत्र करके कुत्ते अथवा सांपके काटेहुए स्थानपर लगानेसे विष नष्ट होताहै ॥ ११८ ॥

तालनिम्बदलं केशाश्चूर्णं तैलं तथा घृतम् ॥
धूपो वृश्चिकविद्धस्य शिखिपत्रघृतेन वा ॥ ११९ ॥

ताडके पत्ते, नीमके पत्ते और बाल इन सबका चूर्ण करके तेल तथा घीमें मिलाकर बिच्छूके काटे हुए स्थानपर धूप देवे अथवा मोरके पंखकी धूप देवे तो बिच्छूका विष दूर होताहै ॥ ११९ ॥

ग्रंथिविदारकलेप.

कपोतपक्षिविड्युक्तक्षारो ग्रंथिविदारणः ॥
दन्तीचित्रकमूलार्कत्वक्स्नुहीपयसा गुडः ॥१२०॥

अर्थ–कबूतरकी विष्ठा और जवाखार इनको पीसकर लेप करनेसे ग्रन्थि फूटजातीहै अथवा दन्तीकी जड, चीता, आककी छाल, थूहरका दूध और गुड इनका लेप करनेसे ग्रन्थि फटजातीहै ॥ १२० ॥

व्रणशोधकलेप.

तैलं सैन्धवयष्ट्याह्वनिम्बपत्रनिशायुतैः ॥
त्रिवृद्धनयुतैः पिष्टैः प्रलेपाद्व्रणशोधनः ॥ १२१ ॥

अर्थ–सैंधा नमक, मुलैठी, नीमके पत्ते, हल्दी निसोत और नागरमोथा इन सबको तेलमें पीसकर पकेहुए व्रणमें लेप करनेसे व्रण शुद्ध होजाताहै ॥ १२१ ॥

ग्रन्थसमाप्ति.

मुक्ताफलैरिव घनैः शुचिभिः सुवृत्तैरापूरिता विमलकाव्यगुणैस्तु युक्ता ॥ श्रीकण्ठपण्डितकृतिर्बुधकन्धरासु मुक्तावलीव लुठतां रुचिरा चिराय॥१२२॥

अर्थ–मनोहर, स्वच्छ और गोलाकार मोतियोंसे गुम्फित मोतियोंकी मालाके समान निर्मल काव्यके गुणोंसे युक्त यह श्रीकण्ठ पण्डितकी ग्रन्थरूपकृति पंडितोंके कंठमें सुंदर मोतियोंकी मालाके समान चिरकाल तक लोटतीरहे ॥१२२॥

इति श्रीपरमजैनाचार्यश्रीण्कठसूरिविरचिते हितोपदेशे वैद्यकसारसंग्रहे दशमः समुद्देशः ॥ १० ॥

इति श्रीपरमजैनाचार्यश्रीकण्ठसूरिविरचिते वैद्यकसारसंग्रहे हितोपदेशे भिषग्वरहरिशङ्करात्मजशङ्करलालकृतभाषाटीकायां बालस्त्रीरोगव्रणशस्त्राघातनाडीवर्णविसर्पकण्डूरक्तमण्डलकाचार्बुदरक्तपित्तपाण्डुरोगापस्मारवह्निदीपनवह्निदग्धस्थावरजङ्गमादिविषचिकित्सावर्णनं नाम

दशमः समुद्देशः ॥ १० ॥

॥ समाप्तोऽयं ग्रन्थः ॥

मुद्रक एवं प्रकाशकः

खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,

खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, मुंबई - ४०० ००४.

KHEMRAJ SHRIKRISHNADASS

